बी० ए० (प्रतिष्ठा) द्वितीय खण्ड

हिन्दी–50 अंक

विषय सूची

क्रम सं०	इकाई	पृष्ठ
गद्य भाग		
1. एक टोकड़ी भर मिट्टी	1	2-5
2. दुलाईवाली	2	6-9
3. खून का रिश्ता	3	10-14
4. बयान	4	15-19
5. इमाम साहब	5	20-24
6. तिरिछ	6	25-33
पद्य भाग		
7. दोनों ओर प्रेम पलता है	7	34-37
8. ले चल मुझे भुलावा देकर	8	38-41
9. बेटी की विदा	9	42-46
10. समर शेष है	10	47-52
11. इस पार उस पार	11	53-58
12. कमल के फूल	12	59-62
प्रयोजनमूलक हिंदी		
13. भाषा संप्रेषण	13	63-65
14. उच्चरित और लिखित भाषा में अंतर	14	66-68
15. लेखन कौशल	15	69-72
16. संचार के विविध रूप	16	73-76
व्यावहारिक हिंदी		
17. संक्षेपण	17	77-80
18. प्रारूपण	18	81-82
19. पल्लवन	19	83-85
20. मुहावरे	20	86-89
21. लोकोक्तियाँ	21	90-92
22. पारिभाषिक शब्दावली	22	93-102

'छत्तीसगढ़ मित्र' का प्रकाशन बंद होने के बाद आप नागपुर चले आए और यहाँ 'देश सेवक' प्रेस की नौकरी की। यहीं से 1909 में आपने 'हिंदी ग्रंथमाला' का प्रकाशन किया। सप्रेजी इस समय लोकमान्य तिलक के संपर्क में आए। लोकमान्य तिलक के चर्चित पत्र 'केसरी' का उन्होंने नागपुर से हिंदी संस्करण 'हिंदी केसरी' नाम से निकाला। लोकमान्य की इतिहास प्रसिद्ध रचना 'गीता रहस्य' का हिंदी अनुवाद भी आपने किया। 'हिंदी केसरी' स्वदेश प्रेम और राष्ट्रीय जागरण का एक प्रमुख मंच बना। स्वभावतः अंग्रेजों की भृकुटि उसपर तन गई। उसके संपादकीय और तिलक की रचनाओं के अनुवाद के कारण उन्हें गिरफ्तार किया गया। रचनाओं के प्रकाशन के कारण हुई यह गिरफ्तारी किसी हिंदी संपादक की पहली गिरफ्तारी थी। बाद में पारिवारिक दबाव के कारण उन्हें अंग्रेजों से क्षमा माँगनी पड़ी और इस कारण उनकी प्रतिष्ठा को गहरा आघात पहुँचा। उन्हें अनेक तरह की लांछनाओं को सहना पड़ा। सप्रेजी इससे बहुत दुखी हुए। उन्होंने सार्वजनिक जीवन से अपने को दूर कर लिया और एकांतवास ले लिया।

इस स्थिति से उबरकर सप्रेजी सार्वजनिक जीवन में पुनः आए और रचनात्मक कार्यों के लिए सक्रिय हुए। उनकी प्रेरणा से माखनलाल चतुर्वेदी ने 'कर्मवीर' पत्र का प्रकाशन आरंभ किया। देशप्रेम और हिंदी की चिंता सदैव उनके भीतर बनी रही। उनका यह भाव बहुत गहरा था। अपनी मृत्यु के पूर्व उन्होंने कहा था, " मुझे मोक्ष प्यारा नहीं, मैं फिर से जन्म लूँगा। देश का तो मोक्ष अभी हुआ नहीं।"

पत्रकारिता के अतिरिक्त सप्रेजी ने 'स्वदेशी आंदोलन और बायकॉट', 'जीवन संग्राम में विजय प्राप्ति के कुछ उपाय', 'हिंदी दासबोध' और 'भारतीय युद्ध' जैसी पुस्तकों की रचना की।

सप्रेजी का निधन 23 अप्रैल 1926 को रायपुर में हुआ।

1.2 कहानी का सारांश

'एक टोकरी भर मिट्टी' आकार की दृष्टि से बहुत छोटी कहानी है। कहानी एक अनाथ विधवा की है। उसकी झोंपड़ी एक जमींदार के महल के पास थी। जमींदार की इच्छा हुई कि महल का हाता झोंपड़ी तक बढ़ाया जाए। उसने विधवा से कई बार कहा पर वह इसके लिए तैयार न हुई। वह जमाने से वहाँ बसी थी। झोंपड़ी में वह अपनी पाँच वर्ष की पोती के साथ रहती थी। जमींदार के अनेक प्रयासों के बाद भी जब वह नहीं निकली तो उसने वकीलों की सहायता से झोंपड़ी का कब्जा अपने नाम ले लिया। बिचारी अनाथ विधवा पास में कहीं जाकर रहने लगी।

एक दिन जमींदार उस झोंपड़ी के पास टहल रहा थे और लोगों को काम बतला रहा था कि विधवा हाथ में एक टोकड़ी लि पहुँची। जमींदार ने अपने आदमियों से उसे हटा देने के लिए कहा तब वह विधवा गिड़गिड़ाकर बोली कि महाराज यह झोंपड़ी तो अब आपकी है। मेरी बस एक विनती है। जब से यह झोंपड़ी छूटी है मेरी पोती ने खाना पीना छोड़ दिया है। वह मेरा कहा नहीं मानती है। बस अपने घर की जिद किए रहती है। आप मुझे टोकरी भर मिट्टी ले जाने दीजिए जिससे चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी तो भरोसा है कि वह रोटी खाने लगेगी। जमींदार ने इसकी आज्ञा दे दी।

विधवा झोंपड़ी के भीतर गई। उसने टोकरी मिट्टी से भर ली और हाथ से उठाकर बाहर ले आई। बाहर आकर उसने जमींदार से कहा कि महाराज कृपा करके इस टोकरी को जरा हाथ लगा दीजिए जिससे कि मैं इसे अपने सिर पर धर लूँ। जमींदार पहले नाराज हुआ पर बार-बार की प्रार्थना के बाद वह तैयार हो गया। किसी नौकर से न कहकर वह स्वयं आगे बढ़ा। ज्योंही उसने टोकरी को हाथ लगाकर ऊपर उठाना चाहा, उसे लग गया कि यह काम उसकी शक्ति के बाहर है। उसने अपनी पूरी शक्ति लगा दी पर टोकरी एक हाथ भी ऊँची न हुई। उसने लज्जित होकर स्वीकार लिया कि टोकरी उससे न उठेगी।

यह सुनकर विधवा ने कहा, महाराज जब आपसे एक टोकरी भर मिट्टी न उठ पा रही है तो इस झोंपड़ी में हजारों टोकरियाँ मिट्टी हैं। उसका भार आप जन्म भर क्योंकर उठा सकेंगे। आप ही इस बात पर विचार कीजिए।

विधवा के इस वचन को सुनकर जमींदार की आँखें खुल गई। अपने किए का पश्चाताप कर उसने विधवा से क्षमा माँगी ओर उसकी झोंपड़ी वापस दे दी।

1.3 कहानी की विशेषताएँ

'एक टोकरी भर मिट्टी' लंबाई की दृष्टि से बेहद छोटी कहानी है । मात्र छह सौ शब्दों की । यह हिंदी की आरंभिक मौलिक कहानियों में से एक है । कहानी का कथानक अत्यंत संक्षिप्त है, घटनाएँ न के बराबर हैं । पात्र भी गिनती के ही हैं । यह कहानी अपने अभिधात्मक स्वरूप में नहीं बल्कि संकेतात्मक रूप में उल्लेखनीय है । लेखक ने जमींदार के पश्चाताप और हृदय परिवर्तन के माध्यम से कहानी को अंत तक पहुँचाया है ।

सीधे-सीधे अर्थ लें तो जमींदार से एक टोकरी मिट्टी के न उठने की बात आसानी से स्वीकारने लायक नहीं है जबकि वह विधवा उसे उठाकर बाहर लायी थी । कहानी इस बिंदु पर किस्सागोई की महान भारतीय परंपरा से जुड़ी हुई दिखाई पड़ती है । हम जानते हैं कि भारतीय कथा-परंपरा में तोता-मैना की कहानियों से लेकर पंचतंत्र की कहानियों में ऐसे तत्त्व बिखड़े पड़े हैं । एक भारतीय पाठक बहुत सहजता से ऐसे अविश्वनीय और जादुई तत्त्वों को स्वीकारता है । वह अपने विवेक का इस्तेमाल इन पर प्रश्न खड़े करने के लिए नहीं बल्कि इनसे मिलने वाली सीख को अपनाने में करता है । यही कारण है कि भारतीय जीवन-परिवेश में कहानियों को कभी भी केवल मनोरंजन का विषय नहीं माना गया ।

इस कहानी का संदेश क्या है, यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है । जमींदार के हृदय परिवर्तन और और विधवा के तीखे प्रश्न और साहस में से किसे कहानी की मुख्य संवेदना माना जाए । कहानी में जमींदार के हृदय परिवर्तन की चर्चा है पर लेखक ने प्राथमिक महत्त्व विधवा के साहस और तीखे प्रश्न को दिया है । जमींदार का हृदय परिवर्तन न होता तब भी उसके प्रश्न की तल्खी कहानी में गूँजती रहती । और, सच कहें तो यदि लेखक ने हृदय परिवर्तन न दिखाया होता, तब कहीं अधिक गूँजती ।

यह प्रश्न हमारे जेहन में कौंधता है कि 'टोकरी भर मिट्टी' आखिरकार है क्या ? क्या किसी विशेष मिट्टी से बने चूल्हे से किसी की भूख का कोई संबंध हो सकता है ? लेखक ने इसके माध्यम से क्या कहना चाहा है ?

यहाँ जिस भूख का परिचय दे रहे हैं, वह पेट की भूख से अधिक अपने स्थान, परिवेश और खुशियों से जुड़ने की भूख है । विधवा की झोंपड़ी उसके लिए रहने की जगह भर नहीं है बल्कि उसकी खुशियों और आजादी का प्रतीक है । इस कहानी की विधवा में हम परतंत्र भारत की असंख्य गरीब जनता की दुखी, निराश और भूखी तस्वीर पहचान सकते हैं । अंग्रेजों की अबाध लिप्सा के समानांतर भूख और अभावों के बीच तड़पती भारतीय जनता के विरोध का उग्र स्वरूप हालाँकि यहाँ नहीं दिखाई पड़ता है, पर उसका सीमित विरोध भी पर्याप्त व्यंजक है ।

माधवराव सप्रे इस कहानी के जरिए अपने सामयिक यथार्थ का परिचय देते हैं । वे व्यंग्य भी करते हैं, एक उदाहरण द्रष्टव्य है: "श्रीमान् के सब प्रयत्न निष्फल हुए । तब वे जमींदारी चाल चलने लगे । बाल की खाल निकालने वाले वकीलों की थैली गरम कर उन्होंने अदालत से झोंपड़ी पर अपना कब्जा कर लिया और विधवा को वहाँ से निकाल दिया । बिचारी अनाथ तो थी ही । पास-पड़ोस में कहीं जाकर रहने लगी ।" कहना न होगा, अमीरी और गरीबी का यह द्वंद्व स्वतंत्र भारत में भी बदस्तूर जारी है । इतना ही नहीं, न्याय और सत्य का पलड़ा आज भी साधन संपन्न तबके की ओर झुका हुआ प्रतीत होता है ।

बीसवीं शताब्दी के एकदम आरंभ की यह रचना हिंदी में एक विधा के रूप में 'कहानी' की पहचान से परिचित होने के लिए उल्लेखनीय है । इसके साथ-साथ हिंदी गद्य की स्पष्टता, व्यंजकता और संप्रेषणीयता को परखने की दृष्टि से भी यह एक अच्छा उदाहरण है । कलात्मक रूप से यह यथेष्ट सुगठित है । विस्तार की अपेक्षा इसमें संक्षिप्तता पर अधिक ध्यान दिया गया है । कहानी की प्रभावोत्पादकता इससे बढ़ गई है । लेखक ने अपनी टिप्पणियों से कहानी को आगे बढ़ाया है इसके साथ ही आवश्यकतानुसार पात्रों से संवाद भी कहलवाए हैं ।

यह कहानी ऊपर से नितांत कलाहीन दिखाई पड़ सकती है । पर, यदि हम सावधानी से कहानी का पाठ करें तो इस छोटी-सी कहानी में ऐसे कई स्थान उपलब्ध हैं जहाँ लेखक की कला-चेतना के सुंदर चिह्न दिखाई पड़ते हैं । पूरी कहानी में जमींदार का संवाद मात्र एक स्थान पर है । शेष स्थानों पर उसके शारीरिक हाव-भाव का परिचय देकर लेखक ने उसकी भूमिका और इच्छाओं का संकेत कर दिया है ।.

1.4 महत्त्वपूर्ण अंशों के अर्थ

(अ) श्रीमान् के सब प्रयत्न निष्फल हुए । तब वे जमींदारी चाल चलने लगे । बाल की खाल निकालने वाले वकीलों की थैली गरम कर उन्होंने अदालत से झोंपड़ी पर अपना कब्जा कर लिया और विधवा को वहाँ से निकाल दिया । बिचारी अनाथ तो थी ही । पास-पड़ोस में कहीं जाकर रहने लगी ।

अर्थ : 'एक टोकरी भर मिट्टी' हिंदी की आरंभिक कहानियों में गिनी जाती है । इस कहानी में एक ओर विधवा है तो दूसरी ओर जमींदार । अमीरी और गरीबी का चिरंतन द्वंद्व इस कहानी में भी है । जमींदार के अहाते के बढ़ने में विधवा की झोंपड़ी एक रुकावट बनती है । जमींदार के लाख प्रयत्नों के बाद भी जब वह अपनी झोंपड़ी छोड़ने के लिए तैयार नहीं होती है तब वह अपने धन-बल से उसकी झोंपड़ी पर कब्जा कर लेता है ।

उद्धृत पंक्तियों में लेखक ने पराधीन भारत की सामाजिक और कानूनी व्यवस्था पर व्यंग्य किया है । जमींदारों की अनीति तो लंबे समय से प्रसिद्ध है । वकीलों का परिचय लेखक ने जिस तरह से दिया है वह ध्यान देने योग्य है । एक ओर वे जहाँ 'बाल की खाल' निकालते हैं यानी व्यर्थ की बहस करते हैं, बेमतलब उलझाते हैं; वहीं दूसरी ओर वे 'थैली' से प्रेरित-प्रभावित होते हैं । वे अपने लाभ की दिशा में न्याय का मुँह मोड़ देते हैं । उनके इस कार्य से कौन प्रभावित हो रहा है, किसकी जिंदगी बर्बाद हो रही है; इससे उन्हें फर्क नहीं पड़ता है ।

इस तरह इन पंक्तियों में लेखक एक तरफ जमींदारों की अनीति और देश की न्याय-व्यवस्था पर व्यंग्य करने में तो दूसरी ओर विधवा की असहायता और पीड़ा को उकेरने में सफल हैं ।

1.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) 'एक टोकरी भर मिट्टी' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए ।

(ख) माधवराव सप्रे के साहित्यिक अवदान का परिचय दीजिए ।

(ग) अर्थ लिखें –

जब से यह झोंपड़ी छूटी है तब से मेरी पोती ने खाना-पीना छोड़ दिया है । मैंने बहुत-कुछ समझाया, पर वह एक नहीं मानती । यही कहा करती है कि अपने घर चल । टोकरी भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी । इससे भरोसा है कि वह खाने लगेगी ।

दुलाईवाली

पाठ संरचना

2.0 उद्देश्य
2.1 परिचय
2.2 कहानी का सारांश
2.3 कहानी की विशेषताएँ
2.4 अभ्यास के प्रश्न

2.0 उद्देश्य

'दुलाईवाली' बंगमहिला की कहानी है । यह इकाई इसी कहानी पर केंद्रित है । इस इकाई का उद्देश्य बंगमहिला के व्यक्तित्व एवं रचनात्मक अवदान से परिचय प्राप्त करने के साथ-साथ कहानी की कथावस्तु और विशेषताओं से अवगत होना है ।

2.1 परिचय

बंगमहिला का मूल नाम राजेंद्रबाला घोष था । उनका जन्म कलकत्ता के पास चंद्रनगर के किसी गाँव में हुआ था । उनका परिवार उत्तरप्रदेश के मिरजापुर में रहता था । रामप्रसन्न घोष उनके पिता थे । मिर्जापुर में आचार्य रामचंद्र शुक्ल के संपर्क में आने के बाद बंगमहिला के हिंदी लेखन में गति आई । उन्होंने बंगला की कई कहानियों का हिंदी में अनुवाद किया । बाद में कुछ मौलिक कहानियाँ भी लिखीं । चंद्रदेव से बातें (1904), कुंभ में छोटी बहु (1906) और दुलाईवाली (1907) उनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । 'चंद्रदेव से बातें' में देश के यथार्थ का परिचय दिया गया था तो 'कुंभ में छोटी बहू' में सामाजिक रूढ़ियों और सवर्ण मानसिकता पर व्यंग्य करते हुए स्त्री जीवन के तीखे अनुभवों से परिचित कराने का प्रयास किया गया था । इन कहानियों को हिंदी की आरंभिक मौलिक कहानियों में गिना जाता है । 'दुलाईवाली' द्विवेदीयुग की प्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' (भाग-8, संख्या-5, पृ० 178) में प्रकाशित हुई थी । बंगमहिला की कहानियों का एक संकलन 'कुसुम संग्रह' के नाम से प्रकाशित हुआ था ।

हिंदी में कहानी लेखन की परंपरा 1900 के पूर्व नहीं मिलती है । बंगला और अंग्रेजी के प्रभाव से हिंदी में कहानी लेखन की शुरुआत हुई । इन भाषाओं की कहानियों के हिंदी अनुवाद ने हिंदी में कहानी लेखन के लिए आधार बनाया । हिंदी में उस दौर में कई ऐसी कहानियाँ भी आईं जो मौलिक कही गईं, पर वे दूसरी भाषाओं की कहानियों से अनूदित होती थीं या प्रभावित । इस स्थिति का परिचय देते हुए भवदेव पांडेय ने लिखा है, "कुछ संपादक तो ऐसे भी थे जो दूसरी भाषाओं में लिखी कहानियों को बड़ी साफगोई के साथ उड़ाकर अपनी ही पत्रिका में अपने नाम से प्रकाशित करते-कराते थे, परंतु मूल लेखक का नाम पाठकों के पास फटकने तक नहीं देते थे । बीसवीं सदी के प्रथम दशक में केवल बंग महिला ऐसी कहानी लेखिका थीं, जिन्होंने दूसरों की रचनाओं की चोरी नहीं की – न संपूर्ण की ही न आंशिक की । यहाँ तक कि उन्होंने जिन रचनाओं का छायानुवाद किया, वहाँ भी उन्होंने मूल रचनाकारों के नामों का उल्लेख किया । मूल लेखकों द्वारा दिए गए शीर्षकों में जरा भी परिवर्तन नहीं किया । इसलिए बंगमहिला ने लिखा – 'ग्रंथ लेखक की आज्ञा न लेकर अनुवाद करना तो आधुनिक हिंदी लेखकों को एक ऐसा रोग हो गया है कि जिसकी कोई दवा नहीं मिलती । बंग भाषा के भंडार से चोरी करके ही उन लोगों को ग्रंथकार कहलाने की विकट लालसा पूर्ण हो रही है ।....मैं नव्य लेखकों से सविनय

निवेदन करती हूँ कि वे अपने मस्तिष्क और कल्पना की सहायता से निज भाषा की उन्नति की चेष्टा करें, न कि दूसरे के धन से करने को अपना गौरव समझें ।"

बंगमहिला अपने रचनात्मक तेवर और हिंदी सेवा के लिए हिंदी पाठकों में हमेशा स्मरणीय रहेंगी ।

2.2 कहानी का सारांश

दशाश्वमेध से स्नानकर वंशीधर अपने ससुराल पहुंचे । वे बहुत व्यग्र थे । आकर अपनी पत्नी जानकी से कहा, हम लोगों को आज ही जाना होगा । पत्नी के आश्चर्य और झुंझलाहट प्रकट करने पर उन्होंने कहा कि आज ही उनका मित्र नवलकिशोर भी कलकत्ते से आ रहा है । वह अपनी नई बहु को भी साथ ला रहा है । हम सब मुगलसराय से साथ ही चलेंगे । वंशीधर और नवलकिशोर इलाहाबाद के थे ।

जैसे-तैसे रो-धोकर जानकी चलने को तैयार हुई । रास्ते में वंशीधर को ख्याल आया कि उसने विलायती धोती पहन रखी है जबकि नवलकिशोर को विलायती चीजों से चिढ़ है ।

ड्योढ़े दरजे का टिकट लेकर वे रेल से मुगलसराय पहुँचे । उन्हें नवल से मिलने की खुशी थी । गाड़ी आई पर नवल का कहीं पता न था । वंशीधर को लगा कि नवलकिशोर ने खुद चिट्ठी लिखकर बुलाया और अब उल्लू बनाया । जानकी को उसने जनानी गाड़ी में बिठाया और खुद तीसरे दर्जे में बैठ गए । ड्योढ़े दरजे में भीड़ थी ।

गाड़ी जब मिर्जापुर पहुँची तो उसने अपनी भूख मिटायी । जानकी ने खाने से इंकार कर दिया । ड्योढ़े दर्जे में अब भीड़ कम थी पर वे तीसरे दर्जे में ही चढ़े । वहाँ वे ही सबसे सभ्य जान पड़ते थे । उनके कमरे के पासवाले कमरे में एक भले घर की स्त्री बैठी थी । सिर से पैर तक ओढ़े, सिर झुकाए, एक हाथ लंबा घूँघट काढ़े, कपड़े की गठरी सी बनी बैठी थी । घंटी बजने पर वह अचकचाकर जंगले के बाहर देखने लगी । गाड़ी जब खुल गई तो आस-पास बैठी प्रौढ़ा ग्रामीण स्त्रियों ने कहा, इनका मनई (पति) तो बैठा ही नहीं । फिर, स्त्रियाँ तरह-तरह की बातें करने लगीं और उस स्त्री के प्रति अपनी चिंता प्रकट करने लगीं । वंशीधर ने इस चर्चा से ऊबकर कहा तुमलोग नाहक इन्हें परेशान कर रही हो । इनके पति ने इलाहाबाद जरूर तार भेजा होगा और वे दूसरी गाड़ी से आ रहे होंगे । मेरे साथ भी स्त्री है । उनके आने तक मैं स्टेशन पर ही टिका रहूँगा । तुमलोगों में से एक रुक जाना । इस विषय पर सब कोई कुछ न कुछ कह रहे थे । सिवाए एक स्त्री के जो पिछले कमरे में फरासीसी छींट की दुलाई ओढ़े बैठी थी । वह कभी-कभी घूँघट के भीतर से एक आँख निकालकर वंशीधर की ओर ताक देती थी और सामना होने पर मुँह फेर लेती थी । वंशीधर को लगा कि इस स्त्री का आचरण ठीक नहीं है । वंशीधर इलाहाबाद में उतरे तो एक बुढ़िया से कहकर उस स्त्री को उतरवा लिया । और जानकी को उतारने चले गए । जानकी और उस स्त्री को उस बुढ़िया के पास बिठाकर वे स्टेशनमास्टर की ओर गए । वंशीधर के जाते ही बुढ़िया किसी बहाने से भाग गई । स्टेशनमास्टर ने किसी तार के आने से इंकार किया । असमंजस में घिरे वंशीधर लौटे तो किसी को न पाया । इतने में सामने से उस दुलाईवाली को आते देखकर कहा, तू ही उन स्त्रियों को ले गई है । वंशीधर के इतना कहते ही दुलाई से मुँह खोलकर नवलकिशोर खिलखिला उठे । फिर सारी बात बताई कि वह मुगलसराय से ही उसके साथ है । बस तमाशा देखने की इच्छा में यहाँ तक नौबत आ गई । मुझे माफ करो । दोनों मित्र प्रेम से बातें करने लगे ।

उनकी स्त्रियों में भी खूब हँसी हो रही थी । जानकी कह रही थी कि इन लोगों की हँसी ऐसी ही होती है । हँसी में किसी के प्राण भी निकल जाएँ तो इन्हें दया न आए ।

दोनों मित्र अपनी-अपनी घरवाली को लेकर खुशी-खुशी घर पहुँचे ।

2.3 कहानी की विशेषताएँ

हिंदी कहानी के पहले और दूसरे दशक के रचनाकारों में लेखिकाओं का विशेष उल्लेख नहीं मिलता है । इसके पीछे स्त्रियों में शिक्षा की कमी और बाहरी दुनिया से उनका कम संपर्क जैसे कारण थे । इसके अतिरिक्त कुछ दूसरे कारण भी थे । इतिहास लेखकों ने कहानी लेखिकाओं पर ध्यान ही नहीं दिया । जबकि उनकी रचनाएँ लेखकों की तुलना में उन्नीस न थीं । इस दौर की लेखिकाओं

के नाम ऊँगलियों पर गिने जा सकते हैं । उनमें प्रमुख हैं – राजेंद्रबाला घोष, बाबली बहू, सरस्वती देवी, भाग्यवती देवी आदि । बंगमहिला का आचार्य शुक्ल से परिचय न होता तो शायद वे भी इतिहास लेखकों द्वारा विस्मृत कर दी जातीं ।

बंगमहिला की कहानियों में रचनात्मक परिपक्वता साफ दिखाई देती है । कथ्य की स्पष्टता एवं पात्रों और कथ्य के अनुरूप भाषा और शिल्प का चयन उनकी कहानियों में देखा जा सकता है । 'दुलाईवाली' 'चंद्रदेव से बातें' और 'कुंभ में छोटी बहू' की तुलना में सीमित उद्देश्य की कहानी है, पर इसका शिल्प अपने युग की दृष्टि से बहुत नवीन जान पड़ता है । कहानी का विषय अत्यंत संक्षिप्त है । अवधि भी कम ही है । कहानी रेलगाड़ी के कमरे और प्लेटफार्म पर ही घटती है । लेखिका ने अपने विवरण, पात्रों के संवाद और दृश्यों से पूरे वातावरण को जीवंत कर दिया है । उनके वर्णन में कहानी समायी हुई है । जिस तरह वह कहानी के पात्रों की बोली-बानी, पहनावा-ओढ़ावा, खान-पान, रीति-संस्कार और मनोरंजन को कहानी में चित्रित करती हैं, वह हिंदी कहानी के लिए एकदम नयी बात थी । हास्य-बोध कहानी में कई स्थानों पर हैं, सहजता उसकी विशेषता है । एक उदाहरण द्रष्टव्य है : "मि पुर में पेटराम की शिकायत शुरू हुई । उसने सुझाया कि इलाहाबाद पहुँचने में अभी देरी है । चलने के झंझट में अच्छी तरह उसकी पूजा किए बिना ही वंशीधर ने बनारस छोड़ा था । इसलिए आप झट प्लेटफार्म पर उतरे, और पानी के बंबे से हाथ-मुँह धोकर, एक खोमचेवाले से थोड़ी-सी ताजी पूड़ियाँ और मिठाई लेकर, निराले में बैठे आपने उन्हें ठिकाने पहुँचाया ।"

स्वदेशी आंदोलन ने युवा वर्ग में देशी चीजों के प्रति आदर और विदेशी चीजों के बहिष्कार की भावना भरी थी । नवलकिशोर में हमें इससे भेंट होती है ।

पुरुषों ने स्त्रियों को सदैव मनबहलाव, मजाक और हँसी-ठट्ठा की चीज माना है । यह स्थिति दुनिया के हर कोने में है । नवलकिशोर भले ही स्वदेशी का राग अपनाए, पर अपने मनोरंजन का साधन अपनी पत्नी को ही बनाते हैं । 'एक हाथ का लंबा घूँघट काढ़े हुए' उस स्त्री के मनोभावों की कल्पना करें तो यह बात और स्पष्ट हो जाएगी । जानकी के कथन में पुरुष समाज के ऐसे विवेकहीन व्यवहार का परिचय और उससे नाराजगी दोनों ही मौजूद हैं, "अरे तुम जानो क्या । इन लोगों की हँसी भी ऐसी ही होती है । हँसी में किसी के प्राण भी निकल जाएँ तो भी इन्हें दया न आवे ।"

भवदेव पांडेय के अनुसार 'दुलाईवाली की मूल विशेषता थी उसकी खाँटी आँचलिकता ।' भोजपुरी के संवादों ने इस पहचान को और निखार दिया है । कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

(एक स्त्री) कहने लगी– "अरे इनका मनई तो नाहीं आइलेन । हो देखहो रोवल करथईन ।"

दूसरी– "अरे दूसरी गाड़ी में बैठा होइँहें ।"

पहली– "दूर बौरही ! ई जनानी गाड़ी थोड़े है ।"

दूसरी– "तऊ हो भलू तो कहू ।.....कौन गाँव उतरबु बेटा ? मीरजैपूरा चढ़ो हऊ न ।"

'दुलाईवाली' की इस विशेषता का परिचय देते हुए भवदेव पांडेय ने लिखा है, "इस कहानी में भोजपुर समाज अपनी सारी प्रवृत्तियों और संपूर्णता के साथ उभरा है । इलाहाबाद ईषत् इसलिए कि यहाँ से अवधी की सीमा शुरू हो जाती है । अगर गौर किया जाए तो यह नवलकिशोर और उनके मित्र वंशीधर की यात्रा से अधिक महत्त्वपूर्ण भोजपुरी की यात्रा थी । सालेराम, पेटराम, अगड़, बगड़म अवधी में नहीं खप सकते । संबोधन में 'गोइयाँ' और 'टिक्कसिया पल्ले बाप द नाही ?' का प्रश्न भोजपुरी समाज की थाती है ।"

2.4 महत्त्वपूर्ण अंशों के अर्थ

(क) अरे तुम जानो क्या । इन लोगों की हँसी भी ऐसी ही होती है । हँसी में किसी के प्राण भी निकल जाएँ तो भी इन्हें दया न आवे ।

अर्थ : बंगमहिला की कहानी 'दुलाईवाली' से उद्धृत ये पंक्तियाँ भारतीय पारिवारिक-सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों की दोयम स्थिति को रेखांकित करती हैं । स्त्रियों की भावना, उनकी सोच, उनके सुख-दुख और उनकी चिंताएँ पुरुष समाज के लिए महत्त्वहीन हैं । नवलकिशोर दुलाई ओढ़कर रेल के कमरे में समूचा तमाशा देखते रहता है । तमाशे में उसे इतना आनंद आता है कि वह यह सोचना भी भूल जाता है कि उसकी पत्नी पर इस समय क्या बीत रही होगी । वह अकेली स्त्री जो घूँघट भर चेहरा ढके हुई है और उचककर

गाड़ी के बाहर देखती है कि उसका पति चढ़ा या नहीं, पति को गाड़ी में न पाकर वह आनंद की मनोदशा में तो नहीं ही होगी । वह कुछ बोल भी नहीं पाती, बस उसके रोने का पता चलता है । उसकी स्थिति को लेकर तरह-तरह की चर्चा गाड़ी की दूसरी सवारियों में होती है, फिर भी नवलकिशोर अपने आनंद में मगन रहता है ।

समूची स्थिति स्पष्ट होने पर जानकी नवलकिशोर की पत्नी से पुरुषों पर व्यंग्य करते हुए हुए कहती है कि इनकी हँसी ऐसी ही होती है । ये अपनी खुशी में किसी का ख्याल नहीं रखते । किसी की जान भले निकल जाए, इससे इन्हें फर्क नहीं पड़ता । ये अपनी दुनिया में मगन रहते हैं । इस कथन में अपनी सामाजिक स्थिति की घोषणा थी तो पुरुषों के आडंबरपूर्ण और स्वकेंद्रित व्यवहार का पता भी ।

2.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) बंगमहिला का परिचय अपने शब्दों में लिखिए ।

(ख) 'दुलाईवाली' कहानी की कथावस्तु लिखिए ।

(ग) अर्थ लिखें –

अरे तुम जानो क्या । इन लोगों की हँसी भी ऐसी ही होती है । हँसी में किसी के प्राण भी निकल जाएँ तो भी इन्हें दया न आवे ।

■■■

खून का रिश्ता

पाठ संरचना

3.0 उद्देश्य
3.1 परिचय
3.2 कहानी का सारांश
3.3 कहानी की विशेषताएँ
3.4 अभ्यास के प्रश्न

3.0 उद्देश्य

'खून का रिश्ता' भीष्म साहनी की कहानी है । यह इकाई इसी कहानी पर केंद्रित है । इस इकाई में भीष्म साहनी के रचनाकार व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त किया जाएगा । इसके साथ-साथ कहानी की कथावस्तु और विशेषताओं से अवगत हुआ जाएगा ।

3.1 परिचय

भीष्म साहनी का जन्म 8 अगस्त 1915 को रावलपिंडी (अब पाकिस्तान में) के एक आर्यसमाजी परिवार में हुआ था । वे हरबंसलाल साहनी और लक्ष्मी देवी की सातवीं संतान थे । उनकी आरंभिक शिक्षा घर पर हिंदी और संस्कृत माध्यम से हुई । फिर अंग्रेजी और उर्दू की पढ़ाई के लिए वे स्कूल गए । गवर्नमेंट कॉलेज लाहौर से 1935 में उन्हाने एम०ए० की परीक्षा पास की फिर पंजाब विश्वविद्यालय से पीएच०डी० की उपाधि प्राप्त की ।अपने आरंभिक दिनों में भीष्मजी ने पैतृक व्यापार में हाथ बँटाया, अध्यापन किया, पत्रकारिता की और 'इप्टा' से भी जुड़े रहे । इनके बड़े भाई बलराज साहनी बंबई फिल्म उद्योग में जम चुके थे । भीष्मजी ने इस क्षेत्र में स्वयं को आज़माना चाहा पर असफल रहे । वहाँ से पंजाब आकर वे अध्यापन करने लगे । अंबाला और अमृतसर में नौकरी करने के बाद उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय में नौकरी की । इस बीच उन्होंने सात वर्षों तक विदेशी भाषा प्रकाशन गृह (मास्को) में अनुवादक के रूप में काम किया । ढ़ाई वर्षों तक उन्होंने 'नई कहानियाँ' का संपादन भी किया । वे प्रगतिशील लेखक संघ और एफ्रो एशियाई लेखक संघ से भी संबद्ध रहे ।

भीष्म साहनी की पहली रचना 'अबला' (कहानी) इंटर कॉलेज की पत्रिका 'रावी' में प्रकाशित हुई थी । 'नीली आँखें' उनकी दूसरी कहानी थी, यह 'हंस' में प्रकाशित हुई थी । उन्होंने अपने लेखन से कई विधाओं को समृद्ध किया । उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं – झरोखे, कड़ियाँ, तमस, बसंती, मय्यादास की माड़ी, कुंतो, नीलू-नीलीमा-निलोफर (उपन्यास); भाग्यरेखा, पहला पाठ, भटकती राख, पटरियाँ, बाड्चू, शोभायात्रा, निशाचर, पाली, डायन (कहानी संकलन); माधवी, हानूश, कबिरा खड़ा बाजार में, मुआवजे (नाटक); अपनी बात (निबंध) । उन्होंने बाल साहित्य भी रचा । 'गुलेल का खेल' और 'वापसी' बाल साहित्य की रचनाएँ हैं । भीष्मजी ने 'आज के अतीत' शीर्षक से अपनी आत्मकथा लिखी ।

'तमस' के लिए उन्हें 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' मिला था । इस उपन्यास पर बना धारावाहिक अत्यंत लोकप्रिय हुआ । 'तमस' (धारावाहिक) और 'मोहन जोशी हाजिर हो' (फ़िल्म) में भीष्मजी ने अभिनय भी किया ।

भीष्मजी ने जब लिखना शुरू किया वह देश की आजादी, विभाजन और हिंदी में 'नयी कहानी' आंदोलन का काल था । कहानी लेखन में एक ओर प्रेमचंद की परंपरा सामने थी तो दूसरी ओर मनोवैज्ञानिक कहानी की । विभाजन की त्रासदी, सांप्रदायिकता, राजनीति

का अवमूल्यन, भ्रष्टाचार और स्वार्थपरकता, बेरोजगारी, मोहभंग, सामाजिक मूल्यों के समक्ष चुनौती, गरीबी, परिवारों का टूटना, अकेलापन, नए मध्य वर्ग का उदय ऐसे कई संदर्भ उनके समक्ष उपस्थित थे, जो उनकी रचनाओं के विषय भी बने । भीष्म साहनी के लेखन के संबंध में कुमुद शर्मा ने लिखा है, "भीष्म साहनी की कथावस्तु की रेंज अपने समकालीन रचनाकारों में मोहन राकेश, अमरकांत, कमलेश्वर जैसी नहीं, और न ही उनमें राही मासूम रजा और यशपाल की रचनाओं की तरह वैचारिक पैनापन है । लेकिन जीवन के जिस किसी टुकड़े को कथावस्तु में उठाया उसे गहरी संवेदनशीलता की ऊष्मा में लपेटकर सादगी और दायित्व बोध के साथ रूपायित किया । परिवर्तनगामी होने के कारण उनकी कहानियाँ वैचारिक दायरे से नियंत्रित जरूर होती हैं, लेकिन विषयवस्तु पर वैचारिक चेतना आक्रामक तेवर के साथ हावी नहीं होती । वे वर्त्तमान के विरोध में शिकायत के स्तर पर खड़ी हैं बिना किसी आक्रोशात्मक मुद्रा के । गहरे अवसाद और अफसोस से तर उनकी रचनाओं को पढ़ने पर ऐसा लगता है जैसे वे कह रही हों – देखो, क्या जमाना आ गया है ! और लगता है कि छल, छद्म और चतुराई तो दूसरे कर रहे हैं मगर शर्मिंदा रचनाकार हो रहा है ।" यह संवेदना ही उनकी असली पूँजी है ।

भीष्म साहनी का सामाजिक बोध बहुत गहरा और विस्तृत है । अपने समय को देखने की उनकी क्षमता बेहद विश्वसनीय और खुली हुई है । इस बिंदु पर वे नयी कहानी के फैशन से अपनी अलग पहचान कायम करते हैं । उनकी दृष्टि वैज्ञानिक थी । अतः वे ऐसे समाज के निर्माण का सपना सँजोते थे जिसमें विभेद, पाखंड और शोषण न हो तथा मनुष्य की विशिष्टता और सम्मान सदैव सुरक्षित रहे ।

भीष्म साहनी की अभिव्यक्ति सदैव सादी रही । वे जिंदगी के शब्दों से कहानी बुनते हैं और इसमें कोई कारीगरी नहीं दिखाते । उनके पाठकों को यह सदैव महसूस होता है कि वह जिस सादी भाषा के साथ गुजर रहा है वह बहुत बेचैन कर देने वाली है । कहानी के साथ गुजरते हुए उनका पाठक अपने दिल पर हाथ रखकर यह सोचता रह जाता है कि यह तो उसकी भी कहानी है !

भीष्मजी का निधन 11 जुलाई 2003 को दिल्ली में हुआ ।

3.2 कहानी का सारांश

मंगलसेन के भतीजे की सगाई होने वाली है । वह अपने ख्यालों में मगन है कि समधियों के घर बैठा है और उसकी आवभगत हो रही है । घर का नौकर संतू मंगलसेन को बताता है कि सगाई में उसे नहीं ले जाया जाएगा । वीरजी यानी लड़के की जिद है कि सगाई डलवाने सिर्फ बाबूजी जाएँगे और सवा रुपए के अलावे कुछ नहीं लिया जाएगा । मंगलसेन और संतू में इसी बात पर दो-दो रुपए की शर्त लग जाती है । घर में मंगलसेन को यही चर्चा सुनने को मिलती है । माँ बेटे को समझा रही थी कि अकेले तुम्हारे बाबूजी सगाई डलवाने जाएँगे तो समधी भी इसे अपना अपमान समझेंगे । लेकिन बेटे ने अपनी जिद न छोड़ी । बाबूजी सिद्धांत में फिजूलखर्ची के खिलाफ थे, बेटा उन्हें यही याद दिला रहा था ।

मंगलसेन ने सबके सामने अपनी इच्छा प्रकट कर दी कि वह भी सगाई डलवाने जाना चाहता है । इसपर बाबूजी यानी उसके चचेरे भाई ने उसे झिड़क दिया, "तू जा, अपना काम देख, जो जरूरत हुई तो तुम्हें बुला लेंगे ।" बाबूजी का इस तरह झिड़कना घर में किसी को अच्छा न लगा । सगाई में जाने के बाबत बाबूजी ने जब अपने बेटे से पूछा तो बेटे ने कह दिया, अगर आप अकेले नहीं जाना चाहते तो चाचाजी को साथ ले जाइए । मंगलसेन के बारे में सुनकर सबको हैरत हुई । माँ के एतराज पर बेटे ने टका सा जवाब दे दिया, "चाचाजी गरीब हैं इसलिए ।" इस तरह बाबूजी के साथ मंगलसेन का जाना निश्चित हो गया ।

मंगलसेन तक यह खबर पहुँचवा दी गई । उसे जब यह मालूम हुआ कि वह अकेला ही बाबूजी के साथ जाएगा, तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा । उसके बदन में छटाँक भर खून फिर उछलने लगा । जी चाहा कि संतू से शर्त के दो रुपए अभी रखवा ले । आखिर मुझसे बड़ा संबंधी कौन है बाबूजी का जो मुझे न ले जाते । मैं और बाबूजी ही इस घर के कर्त्ता-धर्त्ता हैं, और कौन है ? अपने बड़प्पन पर उसका विश्वास बढ़ गया । आखिर उसने अपने कपड़े बदले । वह जब तैयार होकर आया तो उसे देख सबका कलेजा बैठ गया । उसके कपड़े बदलवाए गए । उसका कायाकल्प किया गया । पूरा घर उसे सँवारने में लग गया । समधियों के घर भी उसकी खूब आवभगत हुई । उसका सपना सच हुआ ।

सगाई में बाबूजी ने सवा रुपए के अतिरिक्त कुछ भी लेने से इंकार कर दिया । आखिर, समधी ने चाँदी की तीन कटोरियाँ और तीन छोटे-छोटे चम्मच सामने लाकर रख दिए । एक कटोरी में केसर, दूसरी में रंगला धागा और तीसरी में चाँदी का रुपया और चमकती चवन्नी थी ।

दोनों भाई घर लौटे । वीरजी अपने कमरे में ख्यालों में मगन थे । सवा रुपए से सगाई डलवाने, एक गरीब आदमी को भेजने से प्रभा निश्चित ही मेरे बारे में अच्छा सोचती होगी । मेरे आदर्श की प्रशंसा करती होगी । वीरजी इसी सोच में डूबे थे ।

मंगलसेन से थाल ली गई । माँजी ने थाल पर से रूमाल हटाया । तीन कटोरियों के साथ दो चम्मच थे । एक चम्मच कम था । बाबूजी से जब तीसरे चम्मच के विषय में पूछा गया तो उन्होंने कहा, चम्मच तीन थे । मंगलसेन ने जब तीसरे चम्मच से अनभिज्ञता जाहिर की तो बाबूजी गरज उठे । मेरे साथ इसलिए गया था कि चम्मच गँवा आओ । कुछ नहीं तो एक चम्मच पाँच रुपए से कम का न होगा । मंगलसेन ने जब समधियों के घर जाकर पूछना चाहा तो उसे रोक दिया गया । बाबूजी गुस्से में थे और माँ विचलित । चम्मच के बारे में जानकर वीरजी को भी गुस्सा आ गया । प्रभा के प्रेम की निशानी उनतक नहीं पहुँच पायी । वीरजी ने आव देखा न ताव, मंगलसेन के पास जाकर उसे दोनों कंधों से पकड़कर झिंझोड़ दिया । बात बढ़ गई थी । अपने व्यवहार पर वीरजी भी झेंप गए । वीरजी की बहन मनोरमा ने मंगलसेन की जेबें तलाश ली । चम्मच न मिला ।

सभी निगाहें मंगलसेन की ओर थीं । मंगलसेन की मुँह से शब्द नहीं निकल रहे थे । बाबूजी ने घुड़का, मैं तेरे से पाँच रुपए चम्मच के ले लूँगा । इसमें कोई लिहाज न करूँगा । मंगलसेन खड़े-खड़े गिर पड़ा । संतू से उसे छज्जे पर भिजवाया गया ।

थोड़ी देर में घर में ढोलक की आवाज गूँजने लगी । लोग बधाई देने आने लगे । ऐन उसी वक्त प्रभा का भाई आया । उसने मनोरमा के हाथ में चम्मच दिया और चला गया । मनोरमा की माँ संबंधियों से घिरी थी । मनोरमा माँ से नजरें मिलाने की कोशिश में हाथ ऊँचाकर चम्मच हिलाने लगी । पर उसकी माँ कुछ समझ ही नहीं रही थी ।

इधर छज्जे पर संतू ने मंगलसेन को खाट पर लिटाया, और मुँह पर पानी का छींटा देते हुए कहा, तुम जीत गए । बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपए नगद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा ।

3.3 कहानी की विशेषताएँ

भीष्म साहनी की कहानियों में घर-परिवार का संदर्भ कई बार मिलता है । वे नए से नए विषय को इस आधार पर बड़ी कुशलता से कह जाते हैं । कहानियों को बुनने में वे किसी तरह की अतिरिक्त कलाकारी या पच्चीकारी नहीं दिखाते । उनकी कहानियों को बस दिल पर हाथ रखकर पढ़ते जाइए, सुख-दुख के दृश्य वहाँ इस सलीके से आते जाएँगे कि आप उनमें उतरते चले जाएँगे । पाठक को हैरत में डाल देने या झटका देने की प्रवृत्ति वहाँ नहीं मिलती है ।

उनकी कहानियों में हमारे समय के तीखे यथार्थ बड़ी सादगी के साथ मिल जाते हैं । उनके व्यंग्य में तिलमिलाने की जगह स्थितियों के प्रति अफसोस का भाव अधिक होता है । इस कहानी का शीर्षक भी इस बात की गवाही देता है । 'खून का रिश्ता'; कहानी उपहासात्मक कम अफसोस और दुख के भाव से अधिक घिरी नजर आती है । मंगलसेन के प्रति पाठकों की दया और चिंता उपजती है पर कहानी के किसी अन्य पात्र के लिए घृणा या क्रोध उपजता हो, ऐसा नहीं है । इस तरह भीष्म साहनी की कहानियाँ प्रेमचंद की उस परिचित शैली पर खड़ी दिखाई पड़ती है जहाँ हम समाज को समझने के लिए किसी कहानी को एक माध्यम की तरह इस्तेमाल कर सकते हैं । वीरजी की प्रगतिशीलता और आधुनिकता एक चम्मच के सामने छोटी हो जाती है । यह साफ दिख जाता है कि उनके विचार चाहे जितने भले हों, उनमें प्रदर्शन अधिक टिकाऊपन कम है ।

बाबूजी पाई-पाई पकड़ने वाले चरित्र हैं तो मंगलसेन अपनी दुनिया में मगन एक निस्पृह जीव नजर आता है । इतना निस्पृह कि चम्मच की खोज में उसकी जेबें भी तलाश ली जाती हैं । भीष्म साहनी ने उसका चित्र इस तरह खींचा है : पचास बरस की उम्र के मंगलसेन के बदन के सभी चूल झीले पड़ गए थे । जब चलता तो उचक-उचककर हिचकोले खाता हुआ और जब सीढ़ियाँ चढ़ता तो पाँव घसीटकर, बार-बार छड़ ठकोरता हुआ । जब भी वह सड़क पर आ रहा होता, मोड़ पर का साइकिल दूकानदार हमेशा मंगलसेन से मजाक करके कहता, "आओ मंगलसेनजी, पेंच कस दें !" और जवाब में मंगलसेन हमेश उसे छड़ी दिखाकर कहता, "अपने से बड़ों के साथ मजाक नहीं किया करते । तू अपनी हैसियत तो देख ।" यह हैसियत मंगलसेन की मरीचिका है । भ्रम है । बाबूजी की पगड़ी पहनकर वह बाबूजी नहीं बन सकता । लेकिन वह अपने भ्रम में जीना ज्यादा पसंद करता है जबकि एक छोटा चम्मच भी उसकी हैसियत से ऊँचा दिखाई पड़ता है । और, तब 'खून का रिश्ता' एक फटे चादर की तरह दिखने लगता है । वह अपनी स्थिति से अनजान होगा, ऐसा नहीं कहा जा सकता है । लेकिन अपने अकेलेपन को काटने और किसी भी तरह अपने लिए सम्मान और महत्त्व जुटा लेने की

इच्छा में वह सपनों की दुनिया में खोया रहता है । सगाई में जाने की उसकी इच्छा अपने महत्त्व को किसी भी तरह प्रमाणित करने के भाव से ही जुड़ी है ।

समूची कहानी में मंगलसेन के भ्रम और उसकी हैसियत को कहानी की भाषा से भी देखा जा सकता है । बाबूजी या वीरजी का उल्लेख कहानी में जहाँ भी है वहाँ कहानी की भाषा वही नहीं है जो मंगलसेन के लिए है ।

भीष्म साहनी के गद्य में कभी भी उबाल या कोरी भावुकता के लक्षण नहीं मिलते हैं । वे बेहद शांत तरीके से दृश्य उभारते जाते हैं और इस प्रक्रिया में कहानी की विडंबना उभरती जाती है । वीरजी के चरित्र को उभारने वाला एक उदाहरण द्रष्टव्य है : "चम्मच खो जाने पर अचानक वीरजी को बेहद गुस्सा आ गया । प्रभा ने चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँचा ही नहीं । प्रभा के प्रेम की पहली निशानी ही खो गई । वीरजी सहसा आवेश में आ गए । वीरजी ने आव देखा न ताव, मंगलसेन के पास जाकर उसे दोनों कंधे से पकड़कर झिंझोड़ दिया ।"

पूर्व में ही कहा गया है कि भीष्म साहनी के लेखन में कलात्मक पच्चीकारी नहीं मिलती है इसके स्थान पर वह कथ्य की स्पष्टता और व्यंजकता पर अधिक ध्यान देते हैं । इस कहानी के प्रसंग में भी यह उल्लेखनीय है । कहानी के अंत में वे मंगलसेन की पूरी हैसियत निचोड़ कर रख देते हैं :

"पर माँजी संबंधियों से घिरी खड़ी थीं । मनोरमा रुक गई और माँ से नजरें मिलाने की कोशिश करते हुए, हाथ ऊँचा करके चम्मच हिलाने लगी । चम्मच को कभी नाक पर रखती, कभी हवा में हिलाती, कभी उँचा फेंककर हाथ में पकड़ती, मगर माँजी कुछ समझ ही नहीं रही थी ।.....

छज्जे पर संतू ने मंगलसेन को खाट पर लिटाया और मुँह पर पानी का छींटा देते हुए बोला, "तुम शर्त जीत गए । बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपये नगद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा ।"

मनोरमा का व्यवहार हँसी की जगह मंगलसेन के प्रति दया उपजाता है । दूसरी ओर संतू के कथन को देखें तो उसमें दुर्भावना नहीं है । उसका कथन बाबूजी के घर में मंगलसेन की औकात को बहुत विडंबनात्मक तरीके से उभारने में सक्षम है ।

3.4 महत्त्वपूर्ण अंशों के अर्थ

(क) चम्मच खो जाने पर अचानक वीरजी को बेहद गुस्सा आ गया । प्रभा ने चम्मच भेजा और वह उन तक पहुँचा ही नहीं । प्रभा के प्रेम की पहली निशानी ही खो गई । वीरजी सहसा आवेश में आ गए । वीरजी ने आव देखा न ताव, मंगलसेन के पास जाकर उसे दोनों कंधे से पकड़कर झिंझोड़ दिया ।

अर्थ : 'खून के रिश्ते' कहानी में भीष्म साहनी ने यह दिखाना चाहा है कि संपन्नता की सीढ़ियों पर आगे बढ़ने के क्रम नाते-रिश्ते बेमानी होते जाते हैं और अंततः इंसानियत भी गुम हो जाती है । मंगलसेन बाबूजी के रिश्ते का भाई है, वह उनके घर में रहता है और उनके काम-धंधे में हाथ बँटाता है । भतीजे की शादी पर वह न जाने कितने मंसूबे पालता है, कि समधियों के घर उसकी आवभगत कितने भव्य तरीके से होगी । आखिरकार, बाबूजी का सबसे बड़ा रिश्तेदार वही ठहरा । संयोग से केवल उसे ही जाने का अवसर मिलता है । इस बात से उसका ख्याली दर्प और भी बढ़ जाता है । मंगलसेन अपनी दुनिया में रमा रहता है; वह कभी भी इस सवाल से नहीं जूझता कि बाबूजी और उनके घरवालों की दृष्टि में उसकी हैसियत क्या है ।

वीरजी की जिद पर बाबूजी उसे सगाई में ले जाने को तैयार हुए थे । और, सगाई से लौटी थाली में एक चम्मच कम होने की खबर सुनकर यही वीरजी सबके सामने उसे झिंझोड़ देते हैं । उन्हें आवेश आ जाता है । प्रभा की निशानी का ख्याल उन्हें विचलित कर देता है । उसके प्रेम की पहली निशानी इस तरह गुम हो जाए, उन्हें बर्दाश्त नहीं होता है । मंगलसेन चाहे जिस ख्याली दुनिया में रहे, परिवारवालों के लिए वह एक सेवक से अधिक महत्त्व नहीं रखता है । हालांकि, वीरजी अपने व्यवहार पर झेंपते हैं पर उनका व्यवहार मंगलसेन की हैसियत उजागर कर जाता है ।

(ख) तुम शर्त जी गए । बस तनख्वाह मिलने पर दो रुपये नगद तुम्हारी हथेली पर रख दूँगा ।

अर्थ : बाबूजी के नौकर संतू ने मंगलसेन से यह शर्त लगाई थी कि यदि मंगलसेन को सगाई में ले जाया गया तो वह उसे दो रुपए देगा । वीरजी की जिद थी कि सगाई में एक ही व्यक्ति जाए । बाबूजी के अतिरिक्त कोई दूसरा न जाए और सवा रुपए से

अधिक न लिया जाए । बाबूजी ने सवा रुपए की बात तो मान ली, पर अकेले जाने की बात वे नहीं स्वीकार रहे थे । खैर, बेटे के ही कहने पर वे मंगलसेन को ले जाने को तैयार हुए । मंगलसेन ने समधियों के यहाँ अपनी आवभगत के जितने ख्याल पाले थे, उनके पूरा होने की घड़ी आ गई थी । समधियों के घर उसकी आवभगत भी होती है । पर, [illegible] हुए कि लड़के के रिश्ते के चाचा हैं, समधी जी ने आसरा दे रखा है । अपनी दुनिया में मगन मंगलसेन इससे अप्रभावित रहता है । मंगलसेन अपने अभावों को बाबूजी की सम्पन्नता की चादर में ढँक लेना चाहता है । पर, यह कहाँ संभव था । तीन कटोरे के साथ दो चम्मचों ने उसे यथार्थ की खुरदुरी जमीन पर ला पटका । बाबूजी ने उससे एक गुम हुए चम्मच के पाँच रुपए वसूल लेने की बात कही, माँजी ने रिश्तों की दुहाई दी, प्रभा के ख्यालों में रमे वीरजी ने उसे कंधे से पकड़कर झिंझोड़ दिया तो मनोरमा ने जेबों की तलाशी ले ली । अब मंगलसेन के लिए क्या बचा था । एक चम्मच ने उसे उसकी हैसियत का पता बता दिया था । उसके चेहरे की समूची खुशी स्याह हो गई थी । अपनी आवभगत के किस्से, जिसमें वह अपने दर्प को सहला रहा था; पूरे घर के इस व्यवहार से फीके पड़ जाते हैं । मंगलसेन जहाँ खड़ा था, वहीं गिर जाता है; संतू उसे छज्जे पर ले जाता है । संतू अब शर्त हार चुका था । मंगलसेन की मनोदशा क्या होगी, इसका उसे भान नहीं है । उसे अपनी हैसियत पता थी; पर यह न पता था कि मंगलसेन ख्यालों की किस दुनिया में मगन रह रहा है । मंगलसेन को पैसे दे देने की बात कहकर वह कोई व्यंग्य नहीं करता है, उसके भीतर किसी तरह की दुर्भावना भी नहीं है; वह तो स्वयं 'तनख्वाह' के आसरे है । वह तो स्वयं कमजोर वर्ग से है पर उसका यह कथन बाबूजी के घर में मंगलसेन की हैसियत को उघाड़ देता है ।

3.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) भीष्म साहनी के लेखकीय वयक्तित्व का परिचय संक्षेप में दें ।

(ख) 'खून का रिश्ता' कहानी का सारांश लिखें ।

(ग) इस कहानी में लेखक ने कौन सा विषय उठाना चाहा है ।

(घ) अर्थ लिखें –

जितना ही अधिक वह इस बात पर सोचता, उतना ही अधिक उसे अपने बड़प्पन पर विश्वास होने लगता आखिर उसने कोने में रखी ट्रंकी को खोला और कपड़े बदलने लगा ।

(ङ) अर्थ लिखें --

छोड़ दो, मनोरमा ! जाने दो, सबका धर्म अपने-अपने साथ है । आपसे चम्मच अच्छा नहीं है, मंगलसेनजी, लेकिन यह सगाई की चीज थी ।

■■■

बयान

पाठ संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 परिचय

4.2 कहानी का सारांश

4.3 कहानी की विशेषताएँ

4.4 अभ्यास के प्रश्न

4.0 उद्देश्य

'बयान' कमलेश्वर की कहानी है । यह इकाई इसी कहानी पर केंद्रित है । इस इकाई में कमलेश्वर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचय प्राप्त करते हुए कहानी की कथावस्तु और विशेषताओं से अवगत हुआ जाएगा ।

4.1 परिचय

कमलेश्वर का जन्म 6 जनवरी 1932 को मैनपुरी (उत्तरप्रदेश) में हुआ था । 1954 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उन्होंने एम०ए० की परीक्षा पास की । कमलेश्वर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे । उनका व्यक्तित्व ऊर्जा से भरा हुआ था । उन्होंने साहित्य और कला के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी सक्रियता दिखाई और हर क्षेत्र में पर्याप्त सफलता प्राप्त की ।

कमलेश्वर का लेखन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात आरंभ हुआ । वे हिंदी के ऐसे लेखक हैं जिन्होंने विभिन्न माध्यमों के जरिए अपनी प्रतिभा का परिचय दिया और अपनी उपलब्धियों के द्वारा एक मानदंड स्थापित किया । उनका जीवन और लेखन एकमेक है । अपने जीवन और लेखन के जरिए उन्होंने एक 'एक्टिविस्ट' की भूमिका निभाई । उनकी प्रमुख कृत्तियाँ हैं – राजा निरबंसिया, माँस का दरिया, बयान, जार्ज पंचम की नाक, मुर्दों की दुनिया, कस्बे का आदमी, आजादी मुबारक, कोहरा (कहानी संकलन); एक सड़क सत्तावन गलियाँ, तीसरा आदमी, डाक बंगला, समुद्र में खोया हुआ आदमी, काली आँधी, एक और चंद्रकांता, आगामी अतीत, कितने पाकिस्तान (उपन्यास); अधूरी आवाज, चारुलता, रेगिस्तान, रेत पर लिखे नाम (नाटक); नई कहानी की भूमिका, नई कहानी के बाद, मेरा पन्ना, दलित साहित्य की भूमिका (आलोचना); जो मैंने जिया, यादों के चिराग, जलती हुई नदी (आत्मकथ्य) । इन रचनाओं के अतिरिक्त कमलेश्वर ने लगभग सौ फिल्मों के लिए पटकथा, संवाद, कहानी आदि लिखा । ऐसी फिल्मों में प्रमुख हैं : सौतन की पटकथा, सौतन, मौसम, राम बलराम, छोटी सी बात आदि । उन्होंने धारावाहिकों की भी पटकथा लिखी । इनमें प्रमुख हैं : चंद्रकांता, दर्पण, एक कहानी ।

कमलेश्वर ने पत्रकारिता (विशेषकर साहित्यिक पत्रकारिता) को नई दिशा दी । उन्होंने विहान, नई कहानियाँ, सारिका, कथा-यात्रा, गंगा जैसी पत्रिकाओं का संपादन किया । 'सारिका' का संपादन करते हुए उन्होंने हिंदी कहानी में समांतर कहानी आंदोलन को जन्म दिया । वे दैनिक जागरण और दैनिक भास्कर से भी जुड़े । कमलेश्वर ने दूरदर्शन के अतिरिक्त महानिदेशक के पद पर भी कार्य किया । 1995 में उन्हें भारत सरकार द्वारा 'पद्म भूषण' पुरस्कार प्रदान किया गया । 2003 में उन्हें 'कितने पाकिस्तान' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला । उन्हें मिले अन्य सम्मानों में प्रमुख हैं : शलाका सम्मान, शिवपूजन सहाय शिखर सम्मान आदि ।

कमलेश्वर नई कहानी आंदोलन की उपज हैं । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पटल पर बड़ी तेजी से बदलाव होते हैं । भारत में एक नया मध्य वर्ग उभरकर सामने आता है । यह नया मध्य वर्ग उस समय मोहभंग, परिवारों के टूटने, निराशा, अजनबीपन जैसी स्थितियों से घिरा हुआ मिलता है । नयी कहानी आंदोलन नें इस नये जीवन यथार्थ को अपना विषय बनाया । नयी कहानी के अधिकांश लेखकों का संबंध शहरी परिवेश से था । उन्होंने अपनी कहानियों में जीवन को पूरेपन में दिखाने की बेचैनी नहीं दिखाई, बल्कि जीवन के उस केंद्रीय बिंदु को उभारने का प्रयास किया जिससे जीवन का वैशिष्ट्य उभर सके । कमलेश्वर, मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, निर्मल वर्मा इस आंदोलन के प्रमुख लेखकों में से हैं ।

कमलेश्वर की कहानियों में प्रायः उपेक्षित यथार्थ को एक नये परिचय के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास होता है । अपनी कहानियों में स्त्री पात्रों को विशेष स्थान देकर वे समाज में उनके संघर्ष का पूरजोर समर्थन करते हैं । उन्होंने स्थानीय और वैश्विक चिंताओं को अपनी रचनाओं में एक समान महत्त्व दिया हैं और एक बेहतर दुनिया का सपना प्रस्तुत किया है । वे अंधविश्वास, अमानवीयता और सांप्रदायिकता जैसी समस्याओं के बरअक्श परंपरा, आधुनिकता और विज्ञान को महत्त्व देते हैं । उनका लेखन व्यापक अर्थों में मानवीय संघर्षो को गति प्रदान करने वाला है ।

कमलेश्वर का निधन 27 जनवरी 2007 को हुआ ।

4.2 कहानी का सारांश

'बयान' अदालत के कठघरे में खड़ी एक स्त्री का बयान है । पति की आत्महत्या के बाद वह स्त्री अदालत में अपनी और अपने परिवार की आपबीती सुनाती है । उसका बयान यह बताता है कि उससे क्या पूछा जा रहा है ।

स्त्री का बयान है– मेरे पति एक फोटोग्राफर थे । पहले वह सरकारी प्रेस इंफोर्मेशन ब्यूरो में थे फिर सरकारी पत्रिका से संबद्ध हो गए थे । उनकी तस्वीरें सरकारी होती थीं । उनमें पंद्रह अगस्त, छब्बीस जनवरी, शानदार दावतें, विदेशी मेहमान, नृत्यों-झाँकियों, नेवी के बैंड, राष्ट्रपति की सवारी, बिजली, लहलहाते खेत, बाँध, बिजलीघर, रेलवे लाइन जैसे चित्र होते थे । वे कहते थे कि यही आजादी का सुख है । पर कई बरसों बाद वे कहने लगे कि ये तस्वीरें सच नहीं हैं । उन्हें खुद भीतर से लगता कि वे झुठे पड़ते जा रहे हैं । उस दिन पहली बार उनकी आँखों से खून उतर आए थे । आप भले उसे आँसू कहें पर वह खून ही था । अब वे वही कर सकते थे जो दूसरे चाहते थे । तस्वीरों पर से उनका विश्वास उठता जा रहा था ।

उन्हीं दिनों थार के रेगिस्तान की उनकी कुछ तस्वीरें गलती से छप गईं जों मंत्री के इस दावे को झूठलाती थीं कि वृक्षारोपण ने रेगिस्तान के बढ़ने को रोक दिया है । लोकसभा में उन तस्वीरों पर खूब बवाल मचा । फिर ऐसी स्थिति हुई कि उन्हें नौकरी से अलग होना पड़ा । नौकरी छुटने के बाद घर की हालत खस्ता हो गई । उन्होंने एक विज्ञापन कंपनी में काम कर लिया । गुहस्थी मुश्किल से चल रही थी । उन्हीं दिनों बेटी का जन्म हुआ । लगा कि हम फिर से ताजे हो गए हैं । विज्ञापन कंपनी में काम करते हुए वे कभी किसी मॉडल को घर नहीं लाए, शराब नहीं पी, कभी अपने भाग्य को नहीं कोसा । दो सौ रुपए की नौकरी में घर का खर्च नहीं निकल पाता था तब मुझे स्कूल की नौकरी करनी पड़ी । मुझे गर्मी की छुट्टियों में काम से हटा दिया जाता था और सेशन शुरू होने समय रख लिया जाता था । यह सही है कि स्कूल का मैनेजर कभी-कभी घर पर आता था या मैं उसके घर जाती थी । पर इसका कोई दूसरा अर्थ निकालकर मुझे जलील न किया जाए । मैं वहाँ वैसे ही जाती थी जैसे अदालत आती हूँ ।

इस तुलना से यदि अदालत नाराज है तो मैं अपनी बात वापस लेती हूँ ।

मेरे पति एक अखबार से जुड़ गए थे । वह बहुत मामूली अखबार था । पर सब उससे घबराते थे । उसमें भंडाफोड़ किस्म की खबरें छपती थीं । अखबार का संपादक घर पर आता था, मेरे पति ही उसे बुलाते थे । संपादक और मैनेजर में मेरी वजह से कोई झगड़ा नहीं हुआ था ।

संपादक की नजरों में मुझे कोई गंदगी नहीं लगती थी । जिसे आप गंदगी कहना चाहते हैं वह सबकी नजरों में होती है ।

छुट्टियाँ खत्म होने के बाद मुझे काम पर रख लिया गया था । वे घर में बच्ची के साथ वक्त गुजारा करते थे । एक इतवार जब बच्ची पड़ोस में खेलने गई थी, उन्होंने मुझसे ब्रेसरी उतारने को कहा था । फिर वाइल की साड़ी पहनने को कहा था । वे कैमरा लिए बैठे थे । उन्होंने तरह-तरह से मेरी तस्वीरें लीं । वे चाहते थे कि कुछ कमाई हो जाए तो एक टेलीलेन्स खरीद लें ताकि बाजार

के लायक कमा सकें । शाम को उन्होंने फिल्म डेवलप की । प्रिंट देखते हुए वे बहुत संजीदा थे । मेरी तस्वीरें लेकर वे शीशे के सामने खड़े थे । तस्वीरें देखते थे और अपना मुंह आईने में देखते जाते थे । उस शाम से उनकी आँखों से जो खून टपकना शुरू हुआ वह तबतक टपकता रहा जब तक वे जीवित रहे ।

संपादक ने मेरी दो तस्वीरें अगले दिन छापी थीं । मेरी अधनंगी तस्वीरें देखकर मैनेजर ने मुझे स्कूल से निकाल दिया । स्कूल से मैं मैनेजर और संपादक के झगड़े की वजह से नहीं निकाली गई थी ।

मेरी बच्ची उनसे बहुत प्यार करती थी । उनकी आँखों से खून की धार बहते देख वह डर गई थी । वह पूछती थी कि माँ पापा की आँखों से खून क्यों गिरता है ? मैंने उसे समझाया था कि बेटे तेरे पापा की तबीयत ठीक नहीं रहती, उन्हें कुछ बीमारी हो गई है ।

यह नौकरी छूटने के दूसरे दिन की बात है । मैं काम खोजने गई थी । तबतक घर पर यह हादसा हो गया था । मैं घर लौटी तो बेटी टाँगों से लिपट गई । वह एकदम चहककर बोली, मम्मी पापा की तबियत ठीक हो गई है । कमरे में उनकी लाश को पलंग पर लिटा दिया गया था । जिस चादर से उन्होंने फाँसी लगायी थी वह अभी भी लटक रही थी । उसके बाद जो कुछ हुआ उसकी तफसील आपके पास है ही । अब आपका फैसला जो कुछ हो वह तो व्यक्ति के खिलाफ ही होगा । व्यक्ति माने अकेला आदमी, जैसे अकेली मैं...या आप या.....आप ।

4.3 कहानी की विशेषताएँ

कमलेश्वर का समूचा साहित्य अन्याय, शोषण, यथास्थितिवाद और भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ में है । वे ऐसे लेखक हैं जिनकी विचारधारा आरंभ से ही स्पष्ट और दुविधा रहित है । उनका लेखन आधुनिक और मानवतावादी है । किसी चीज का विरोध करते हुए उनकी जुबान कभी भी नहीं लड़खड़ाई । उनका लेखन सत्ता प्रतिष्ठानों के लिए सदैव एक चुनौती बना रहा । 'बयान' कहानी में एक स्त्री की आपबीती के माध्यम से वे केवल एक परिवार की दुखद कहानी नहीं कहते हैं बल्कि भारतीय राज-समाज और लोकतंत्र की त्रासद विडंबनाओं को भी उभारते हैं । आजादी के बाद हुई भारत की तथाकथित प्रगति और विकास के मॉडल को वे सवालों के घेरे में लाते हैं । व्यवस्था का भ्रष्ट चरित्र किसी परिवार के चेहरे को किस तरह कुरूप बना सकता है इसे इस कहानी में देखा जा सकता है । वे देश की संसदीय राजनीति को अपने व्यंग्य का निशाना बनाते हैं । वे दिखाते हैं कि इस राजनीति का घिनौनापन किस तरह खून के आँसू बहाने को बाध्य कर देता है ।

आजादी से इस देश की जनता को बहुत उम्मीदें थीं । चीजों के बदलने का वह सपना देखती थी । सपने देखने और सँजोने में देश का युवा सबसे आगे था । चुनाव होते रहे, सरकारें बनती रहीं । कल-कारखाने, पुल, बाँध बनते रहे । इसे ही देश का विकास कहा गया । पर यह विकास वास्तविक विकास नहीं था । देश की आम जनता जिसकी हैसियत बहुत मामूली थी, उसने आजादी का अर्थ नहीं जाना । जिसने सत्ता-व्यवस्था के खिलाफ बोलने की कोशिश की, उसका सच दिखाने की कोशिश की उसका हश्र वही हुआ जैसे 'बयान' के फोटोग्राफर का । जिन्होंने व्यवस्था की चाटुकारिता की, उनके दोनों हाथों में लड्डू रहे । एक परिवार की कहानी के जरिए कमलेश्वर इस सत्य का बड़ा तीखा साक्षात्कार कराते हैं ।

कमलेश्वर की कहानियों में स्त्री पात्रों के प्रति सहानुभूति, उनकी जीवन-स्थितियों का विश्वसनीय अंकन तथा उनके संघर्ष के प्रति सम्मान मिलता है । यह इस कहानी में भी देखा जा सकता है । यह कहानी एक स्त्री का बयान है । बयान की शैली में स्त्री की लाचारगी कहानी में बहुत करुण तरीके से उभर आई है । कहानी में कहीं भी किसी दूसरे व्यक्ति की उपस्थिति नहीं है पर स्त्री का बयान यह स्पष्ट कर देता है कि उससे कैसे-कैसे सवाल पूछे जा रहे हैं और उन सवालों की मंशा क्या है । इस क्रम में यह कहानी हमारी संवेदनशून्य न्याय व्यवस्था, वकीलों की जिरह, अदालत में सबूतों पर टिकी सत्य की दुनिया का कच्चा-चिट्ठा खोलने में सक्षम होती है ।

हमें यह समझना चाहिए कि हमारी न्यायिक प्रक्रिया हमारे समाज का ही हिस्सा है । किसी काम करनेवाली स्त्री के प्रति समाज का क्या नजरिया है, यदि उसके घर में एक-दो मर्द आते हैं तो उसके चरित्र की जिस तरह से कलई खोली जाती है, उसकी जैसी-जैसी

कहानियाँ गढ़ी जाती हैं, यह कहानी उस समूची स्थिति का परिचय देती है । यह लेखक का कौशल है कि वे अपनी ओर से कहानी में कोई टिप्पणी नहीं करते हैं, समूचा सच स्त्री के बयान से उभरता जाता है ।

पूरी कहानी संवाद शैली में है । कमलेश्वर की कहानियों में शिल्प को लेकर सजगता मिलती है पर वे कभी कलावादी नहीं रहे । कहानी के सत्य को उभारने के लिए शिल्प को उन्होंने एक आधार के रूप में स्वीकारा । उन्होंने भाषायी चमत्कार दिखाने का लोभ नहीं किया । उनकी भाषा यथार्थ को किस तरह पकड़ती है और निहत्थे व्यक्ति की लाचारागी को प्रत्यक्ष करती है, इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है : "मुझे देखते ही वह दौड़कर आयी थी और मेरी टाँगों से लिपट गई थी । वह एकम चहककर बोली थी – मम्मी ! पापा की तबीयत अच्छी हो गई । वे आराम से लेटे हैं ।"

4.4 महत्त्वपूर्ण अंशों के अर्थ

(क) आप सोच सकते हैं कि जब आदमी का यकीन अपने काम पर से उठ जाए तो उसकी क्या हालत होती है । वे तस्वीरें जो उन्हें विश्वास देती थीं, एकाएक उनके विश्वास को तोड़ गई थीं । क्योंकि उन्हें सच्चाई से काट दिया गया था । वे वही कह सकते थे, जो दूसरे चाहते थे । इस नतीजे में पहुँचने के बाद उनकी आँखों से खून के कतरे पहली बार गिरे थे ।

अर्थ : 'बयान' कमलेश्वर की चर्चित कहानी है । कमलेश्वर 'नयी कहानी' आंदोलन के प्रमुख स्तंभ हैं । 'नयी कहानी' आंदोलन के लेखकों ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात बदलते हुए यथार्थ को अपनी रचनाओं में जगह दी । देश की राजनीति से मोहभंग उन विषयों में एक प्रमुख विषय था । यह कहानी देश की राज-व्यवस्था के निरंतर भ्रष्ट होते जाने और उस व्यवस्था से असंतुष्ट एक ऐसे व्यक्ति की कहानी है जिसकी असंतुष्टि न केवल उसकी सरकारी नौकरी छिनती है बल्कि अंतत: उसकी जान ले लेती है । आजादी से देश की करोड़ों-करोड़ जनता को अनेक उम्मीदें थीं । लेकिन आजादी के बाद देश के विकास का जो मॉडल बना उसमें देश की गरीब जनता के लिए कोई स्थान न रखा गया । इस मॉडल ने पहले से ही संपन्न तबके को और अधिक संपन्न बनाया । विकास की झूठी तस्वीर दुनिया भर को दिखाई गई । इस तस्वीर में चमकता हुआ भारत था । इसी पृष्ठभूमि में व्यवस्था से मोहभंग की शुरुआत हुई ।

जिस व्यक्ति ने फाँसी लगाई, तस्वीरें उसके लिए केवल रोजगार नहीं थीं । वह उसका पैशन था । अपने काम के प्रति उसका समर्पण बहुत गहरा था । तस्वीरों को वह असल के बराबर मानता था । अपने काम के प्रति यह ईमानदारी ही उसे यह बता रही थी कि वहवह इससे व्यथित था कि वह जिन बाँधों, पुलों, रेलवे लाइनों की वह तस्वीरें लेता है, समारोहों-मेहमानों की तस्वीरें उतारता है; वे सच का परिचय नहीं दे रही हैं । यही से उसके अविश्वास का सिलसिला आरंभ हुआ । वे तस्वीरें उसे झूठी लगने लगीं । वे उसे सचाई के पास नहीं दिखाई पड़ती थीं । उन तस्वीरों में भूख और गरीबी के चिह्न न थे जबकि देश की असल तस्वीर यही थी । वह जो काम कर रहा था उसमें उसकी सहजता नहीं थी, उसका काम मशीनी हो चुका था । अपनी आत्मा और संवेदना को मारकर वह तस्वीरें उतारता था । अपने काम और तस्वीरों पर से उसका विश्वास उठ गया था । सरकार का हिस्सा होकर वह भूख की तस्वीरें नहीं दिखा सकता था, सच नहीं दिखा सकता था । उसका काम गिरवी हो चुका था । इस स्थिति में उसका अपने काम और अपनी तस्वीरों पर से विश्वास उठ गया ।

वैसे व्यक्ति जो अपनी मौलिकता और सोच को मारकर और रीढ़विहीन होकर जी लेते हैं, जो व्यवस्था द्वारा निर्धारित सत्य को ही अपना सत्य मान लेते हैं, उन्हें कभी कोई समस्या नहीं होती है । समस्या उनके लिए खड़ी होती है जो उससे अलग खड़े होने की कोशिश करते हैं । तब पूरा का पूरा तंत्र उसे निगल जाना चाहता है । मौलिकता एवं विरोध की कोई भी संभावना उसे अस्वीकार्य होती है ।

जब दूसरे के हिसाब से अपनी सृजनात्मकता को मोड़ना नियति बन जाए तो वैसी स्थिति में अपने काम के प्रति अविश्वास पैदा होने लगता है जो अंतत: अपने अस्तित्व के प्रति ही संदेहशील बना देता है । आत्मा को मारकर किए जानेवाले काम आँखों में खून के आँसू भर देते हैं ।

4.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) 'बयान' कहानी का सारांश लिखें ।

(ख) अर्थ लिखें –

वे बहुत खुश होते थे । कहते थे – आजादी का यही सुख है । पर कई बरसों बाद उनका यह उत्साह पता नहीं कहाँ खो गया था । उनके दिल में कुछ घुमड़ता रहता था । एक बार बोले थे – इन तस्वीरों से कुछ हासिल नहीं होता । मैं खुद कहीं भीतर से झूठा पड़ता जा रहा हूँ । शायद कुछ दिनों बाद मैं किसी से यह भी नहीं कह पाऊँगा कि तस्वीर सच्ची होती है ।

■■■

इमाम साहब

पाठ संरचना

5.0 उद्देश्य
5.1 परिचय
5.2 कहानी का सारांश
5.3 कहानी की विशेषताएँ
5.4 अभ्यास के प्रश्न

5.0 उद्देश्य

'इमाम साहब' नासिरा शर्मा की कहानी है । यह इकाई इसी कहानी पर केंद्रित है । इस इकाई का उद्देश्य नासिरा शर्मा के लेखकीय कर्म से परिचित होने के साथ-साथ कहानी की कथावस्तु और विशेषताओं से अवगत होना है ।

5.1 परिचय

नासिरा शर्मा समकालीन हिंदी लेखन की एक प्रमुख हस्ताक्षर हैं । इनका जन्म 1948 में इलाहाबाद में हुआ । जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली से इन्होंने फारसी भाषा एवं साहित्य में एम०ए० किया है । हिंदी, अंग्रेजी, पश्तो, उर्दू जैसी भाषाओं पर इनका एक समान अधिकार है । नासिरा शर्मा ईरानी समाज, संस्कृति, राजनीति, साहित्य आदि की गहरी समझ रखती हैं । स्वतंत्रता, समानता, स्त्री अधिकारों, सांप्रदायिकता, अल्पसंख्यक समाज की समस्याओं आदि विषयों पर वे एक ऐक्टिविस्ट की भूमिका निभाती रही हैं । यही कारण है कि उनके लेखन में 'ड्राइंग रूम' अनुभव के स्थान पर जीवन के तल्ख चित्र मिलते हैं । वे अपने लेखन को समाज के सुख-दुख से जोड़ने का प्रयास करती हैं । किसी अतिरिक्त कलात्मकता और शिल्प की चौंधराहट के बजाए वे अभिधात्मक स्वर में समाज के सच को प्रकट करती हैं । पूंजीवादी व्यवस्था, मशीनीकरण और उत्तर आधुनिक समाज में क्षरित होते जा रहे मानवीय मूल्य की पीड़ा उनके लेखन में एक हूक की तरह सुनाई पड़ती है । परंपरा और रिश्तों के प्रति उनकी एक स्वाभाविक प्यास है जो उन्हें गहरे सरोकारों वाला रचनाकार सिद्ध करता है ।

नासिरा शर्मा ने अनेक देशों की यात्राएँ की हैं । ये यात्राएँ उन्होंने मनोरंजन के लिए नहीं की है, बल्कि उस देश को समझने और वहाँ की स्थितियों को जानने के लिए की हैं । उनकी यात्राओं ने उनके अनुभवों का दायरा और अधिक विस्तृत किया है । उन्होंने इराक, अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारत के राजनीतिज्ञों के साक्षात्कार लिए हैं जो काफी चर्चित रहे हैं । कहानी, उपन्यास, रिपोर्ताज, संपादन जैसी कई विधाओं में उनकी प्रतिभा सक्रिय रही है ।

उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं : शाहनामा फिरदौसी, किस्सा जाम का, काली छोटी मछली (कहानी संग्रह); सात नदियाँ एक समंदर, शाल्मली, ठीकरे की मँगनी, जिंदा मुहावरें, शामी कागज, पत्थर गली, संगसरमर, इब्ने मरियम, कुइयाँजान (उपन्यास); सबीना के चालीस चोर (नाटक); जहाँ फव्वारे लहू रोते हैं (रिपोर्ताज); अफगानिस्तान : बुजकशी का मैदान (अफगानिस्तान पर पुस्तक); क्षितिज पार (राजस्थानी लेखकों की कृतियों का संपादन); वर्त्तमान साहित्य (पत्रिका) के महिला लेखन अंक का संपादन; सारिका (पत्रिका) एवं पुनश्च के इरानी कथा विशेषांक का संपादन । उनकी रचनाओं पर टीवी सीरियल और फिल्में बन चुकी हैं ।

नासिरा शर्मा को उनके उपन्यास 'कुइयाँजान' के लिए 'इंदु शर्मा कथा सम्मान' से सम्मानित किया जा चुका है ।

5.2 कहानी का सारांश

किसी मोहल्ले में एक पुरानी मस्जिद थी । कीकर के जंगल से घिरे होने के कारण वह नहीं दिखती थी । जंगल साफ हुए तो मस्जिद निकल आई । कई सालों तक वह यूँ ही पड़ी रही । वहाँ न अजान होता न चिराग जलता । उस मोहल्ले में शंभु फकीर नाम के एक व्यक्ति की मौत हुई । वह रात भर पहरेदारी किया करता था । उसके नमाज-ए-जनाजा में पंद्रह कोस चलना लागों को खल गया । तब इस मस्जिद को दुबारा आबाद करने की योजना बनी । उसकी सफाई पुताई के लिए चंदा हुआ । सफाई-पुताई हुई । वजू के लिए बधने आ गए । कुछ अगरबत्तियाँ और शमा के पैकेट रख दिए गए । सड़क के तार से बिजली का तार खींच कर बिना पैसे बल्ब जलाने की व्यवस्था कर दी गई । और फिर इमाम की खोज शुरू हुई । जब इमाम साहब मिल गए तो उनके रहने-सहने की चिंता सामने आ गई । आखिरकार, वे रहेंगे कहाँ, खाएँगे क्या । हाजीसाहब ने अपने मकान के पिछवाड़े वाला कमरा देने पर सहमति दे दी । इमाम साहब का परिवार छोटा न था । मुहल्लेवाले सबका खर्च उठाने के लिए तैयार न थे । अंततः उनकी एक जान के लिए खाना और पाँच सौ रुपया तनख्वाह पर उन्हें रख लिया गया । उनके खाने का इंतजाम बारी-बारी से सबने बाँध लिया ।

इमाम साहब का नाम शकीलउद्दीन था । वे अपने गाँव फूलपुर से टीन के बक्से के साथ शहर के इस मोहल्ले में आ गए । उनके घरवालों ने पाँच सौ रुपए से बहुत सी उम्मीदें लगा रखी थीं । उनकी पत्नी जुलैखा ने सोचा कि चलो शहर जाकर मियाँ की सेहत सुधर जाएगी और घर का फाका भी दूर होगा । लेकिन, यह ख्याल ख्याल ही रहा । दो महीने बाद शकीलउद्दीन जब घर आए तो जुलैखा उनकी गिरी सेहत को देखकर अचरज में पड़ गई । उसे शक हुआ कि मियाँ ने शहर में कहीं किसी को रख तो नहीं लिया । तीनों वक्त का खाना खाकर भी वह धान-पान ही लग रहे थे ।

शहर में शकीलउद्दीन की हालत ठीक न थी । उनके लिए खाना आता तो कभी दाल में चीटियाँ जीरे की तरह तैरती दिखतीं तो कभी सब्जी में होतीं । रात को बच्चों ने घेरा कि अब्बा वहाँ खाने को तो अच्छी-अच्छी चीजें मिलती होंगी । हम भी चलें । शकीलउद्दीन ने उन्हें झिड़का तो जुलैखा को फिर शक हुआ । उसने कहा तो मैं चलूँ । शकीलउद्दीन ने मन ही मन कहा कि काश ऐसा होता तो चटनी-रोटी तो पेट भर मिलती । पाँच सौ की जगह तीन सौ देने पर पत्नी ने टोका तो उन्होंने बताया, भूख जब बेकाबू हो जाती है तो बाहर खाना पड़ता है । खाना वक्त पर नहीं आता । बाहर रखो तो चूहे-बिल्ली से नहीं बचता और अंदर रखो तो चींटी से । मोहल्लेवालों को अजान से दस मिनट पहले खाना भेजना याद आता है तो कभी वह भी नहीं । अगले दिन दो जगहों से खाना आ जाता है । कहने पर कई तरह की बातें सुनने को मिल जाती हैं । जैसे, बच्चों का घर है, टाइम का पता नहीं चला, हजार काम है । वगैरह-वगैरह...।

जुलैखा की आँखें छलछला गई । उसने खुद को कोसा कि बेमतलब ही पति पर शक किया था । शकीलउद्दीन ने अपनी बात हाजीसाहब को बताई तो उनके पास कुछ बच्चे कुरान पढ़ने आने लगे । इससे समय तो कट जाता था पर आमदनी कोई खास न होती थी । उन्होंने वहीं शहर में मैदानवाली मस्जिद में बच्चों का मकतब देखा था । जहाँ दीनी तालीम के साथ-साथ बच्चों को हफ्ते में दो-तीन बार घरों से खाने के लिए बुलाया जाता था । उन्होंने सोचा कि लड़कों को यदि शहर ले आएँ और वहाँ भेजें । नौकरी न मिली तो उन्हें इसी पेशे में आना है । इसी बहाने कुछ सीख लेंगे ।

उनके दोनों बेटे खुशी-खुशी यहाँ आए । यहाँ खाना देखकर उनका मुँह उतर गया । जैसा उन्होंने सोच रखा था, वैसा कुछ खास न था । मोहल्लेवाले इन्हें अपना काम थमाने लगे । ये लड़के उनके कुबोल भी सुनते जो उन्होंने गाँव में कभी न सुना था । भले वहाँ भूखे रहे पर सब अदब से पेश आते थे । दूसरे ही दिन बच्चे जाने की जिद करने लगे । शकीलउद्दीन समझ न पाए कि इन्हें क्या हो गया है ।

मस्जिद में अब जुमे की नमाज में पहले की तरह भीड़ न रहती थी । कुछ लोग चंदे देने में भी आनाकानी करने लगे । इससे उनकी तनख्वाह पाँच सौ से घटने लगी ।

शकीलउद्दीन जब लड़कों को छोड़ने आए तो बच्चों ने उन्हें वहाँ फिर लौटने से रोकना चाहा । पहले उन्हें मस्जिद का ख्याल आया कि मस्जिद सुनी हो जाएगी । लेकिन यहाँ उनके पिता की आवाज अजान के समय कमजोर मालूम पड़ने लगी थी । उनकी उम्र हो चली थी । उन्होंने निर्णय कर लिया कि न जाएँगे । रात को उनकी नींद खुली तो देखा कि पत्नी और बेटी लिफाफे बना रही हैं

जिसे कल जुलैखा बुरके में छुपकर बनिया को दे आएगी । लिफाफे बनाते वक्त बेटी के हाथ माँ से तेज चल रहे थे । उन्होंने अपना निर्णय बदल लिया । उनके वहाँ रहने से बोझ और बढ़ता ।

इमाम साहब शहर वापस आ गए । यहाँ उनके खाने का हिसाब बदल गया था । उन्हें बासी खाना भी मिलने लगा । फिर औरतों ने यह निश्चय किया कि इमाम साहब यदि हर एक के घर खाना खाने आ जाया करें तो उन्हें गर्म खाना मिल जाएगा और हमें खिदमत का मौका भी । अब यही इमाम साहब की रुटीन हो गई । वे चुपचाप सर झुकाए अल्ला मियाँ की गाय की तरह हर थान पर बँधने के लिए राजी हो गए । जहाँ जाते वहाँ उन्हें कभी बच्चे पकड़ा दिए जाते तो कभी धनिया की गड्डी लाने भेज दिया जाता । उनपर छींटाकशी भी होती । जिल्लत की इस जिंदगी से वे तड़प-तड़प कर रह जाते । उनकी बेटी सुहेला बीमार पड़ी तब भी वे उसे देखने न जा सके, कारण यह कि मोहल्ले में एक बुढ़िया मरणावस्था में थी । उसकी बहू ने उन्हें तब तक जाने से रोक लिया जब तक उसका पति न आ जाए । संयोग ऐसा हुआ कि बुढ़िया बच गई । उसका पति जब लौट कर आया तो पत्नी को शकीलउद्दीन के नाम की माला जपते देखकर उखड़ गया ।

शकीलउद्दीन मोहल्ले में धीरे-धीरे रच-बस गए । हर घर का दुख उनका अपना होता । हर औरत की परेशानी दूर करना उनका फर्ज होता । जब औरतों के मुँह पर उनका नाम चढ़ गया तो वे शकील मामू हो गए । मर्दों के दिल में इससे खटास पैदा हुई । एक बात उछली कि इस इमाम के आने के बाद साल भर में कोई नहीं मरा तो इसकी क्या जरूरत । रही ईद, नमाज की बात तो वह तो कैसेट से भी हो जाएगी ।

शकीलउद्दीन के पिता शरीफउद्दीन अपने बेटे से बहुत उम्मीद लगाए थे कि बेटे की तरक्की से उनकी शोहरत बढ़ेगी । उनकी यह आस धरी रही । बेटे की तरक्की क्या होती शहर की मस्जिद रातभर हुई वर्षा में ढह गई और शकीलउद्दीन को फूलपुर लौट आना पड़ा । वे जब चले तो औरतें घर के दरवाजे और खिड़की की ओट से उन्हें जाता देख आँचल से अपनी आँख पोंछने लगीं । इमाम साहब के अंदर भी रुलाई का सोता फूटा । खुदा हाफिज की आवाज में सारे गिले शिकवे दूर हो गए ।

घर में शकीलउद्दीन कई दिनों तक अपने को अजनबी महसूस करते रहे । शाम को मस्जिद की छत पर खड़े होकर शहर से आनेवाली बस को इस उम्मीद से ताकते कि शायद शहर में कोई जंगल कटा हो, किसी मस्जिद का पता चला हो और उनको बुलाने कोई आया हो । उन्हें यह कहाँ पता था कि वह बीमार बुढ़िया मस्जिद गिरने और उनके वहाँ से जाने का इंतजार कर रही थी, यह सब होते ही वह भी गुजर गई । उसके मरने पर भगदड़ मच गई । पंद्रह कोस पर कब्रिस्तान से बचने के लिए ही शकीलउद्दीन लाए गए थे । पर अब वे वहाँ न थे । जब वह दफनाई जा रही थी उस वक्त वे फूलपुर की मस्जिद में अजान की तैयारी में लगे थे ।

5.3 कहानी की विशेषताएँ

'इमाम साहब' कहानी को अपने आस-पड़ोस, देश-दुनिया में छायी गरीबी, बेरोजगारी और लाचारगी की कहानी के रूप में पढ़ना चाहिए । इसे उन सपनों की कहानी के रूप में पढ़ना चाहिए जो देखे ही इसलिए जाते हैं कि कभी पूरे न हो सकें और यहाँ तक कि उनके पूरे होने की संभावना भी जन्म न ले सके । पर, इस पाठ में एक पक्ष और जुड़ना चाहिए । यह कहानी उस वर्ग की कहानी है जिससे हिंदी का एक बड़ा पाठक वर्ग प्राय: अपरिचित है । हिंदी कहानियों में मुस्लिम पात्रों और उनकी जिंदगी कम ही दिखाई पड़ती है । यहाँ इसके कारणों की विशद पड़ताल नहीं की जाएगी, पर इतना स्पष्ट है कि हमारा समाज ही इसके लिए जवाबदेह है । जिसे हम हिंदी-पट्टी कहते हैं उसकी एक बड़ी आबादी की जिंदगी हिंदी कहानियों में नहीं आती; यह किसी भी साहित्य और कला माध्यम के लिए चिंता की बात होनी चाहिए । हिंदी में दलित, आदिवासी और स्त्री विमर्श की चिंता होती है; इनसे जुड़े विषयों पर बहसे होती हैं पर हिंदी कहानी में मुस्लिम समाज के जीवन को कितनी जगह मिल पा रही है, इस पर सार्थक चर्चा नहीं होती ।

इमाम साहब यानी शकीलउद्दीन के पिता भी फूलपुर की मस्जिद में पेशे इमाम हैं । स्वयं शकील ने भी अपने बच्चों के लिए यह पेशा सोच रखा है कि अगर नौकरी न मिली तो वे यही काम करेंगे । स्पष्ट है कि यह पेशा प्रथम चुनाव नहीं है । इस काम को करते हुए जैसी जिंदगी उसके पिता ने बितायी है और अब वह स्वयं बिता रहा है उसमें ऐसी इच्छा कोई सिरफिरा ही करेगा । नासिरा शर्मा एक-एक डिटेल्स के सहारे इस जिंदगी की तीखी सचाइयों से हमें रू-ब-रू कराती हैं । अभाव क्या होते हैं, और उन अभावों में सपनों की सूरत कैसी होती है; यह जानने के लिए कहानी के एक-एक विवरण को पढ़ने की जरूरत है । एक-एक दृश्य में गृहस्थी के अभाव मुँह बाये खड़े दिख जाते हैं । उनकी यह कला प्रेमचंद की कहानियों की याद दिलाती है जहाँ विवरण भरती के लिए या

अपनी प्रतिभा प्रदर्शन के लिए नहीं होते हैं, बल्कि ये कहानी को समझने और अपनाने के लिए आवश्यक जमीन का काम करते हैं। नासिरा शर्मा की भाषा की व्यंजकता भी ऐसे स्थानों पर द्रष्टव्य है । वह घुमावदार नहीं है बल्कि सीधी है और सीधा असर डालती है । कहानी के कुछ दृश्यों को देखा जा सकता है :

"अब्बा आप भी वापस न जाइए ।" –रात को बिस्तर लगाते हुए बारह साल की बेटी सुहेला बोली ।

"क्यों ?" – शकीलउद्दीन ने ताज्जुब से पूछा ।

"ठीक ही तो कह रही है अप्पी ।" – छोटा तनकर बैठ गया । बड़े का चेहरा धुआँ-धुआँ हो उठा ।

"अब्बा यहीं कुछ करते हैं, आपके जाने से घर सूना-सूना लगता है ।" – सुहेला ने भोलेपन से कहा और सिरहाने स्टूल पर पानी का गिलास कटोरी ढककर नापदान के पास फैले बर्तन धोने बैठ गई ।

.....

"रात को आँख खुली तो देखा सुहेला और जुलैखा चिराग की रोशनी में बैठीं लिफाफे बना रही हैं । सुहेला के नन्हे-नन्हे हाथ माँ से अधिक तेजी से चल रहे थे । कल बुरके में छुपकर जुलैखा बनिया को दे आएगी ।.....(मस्जिद) नहीं गया तो वहाँ कोई और आ जाएगा और सुहेला को ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी ।"

कहानी के इन अंशों से गुजरते हुए लगता है कि प्रेमचंद के हामिद की कहानी अभी खत्म नहीं हुई है । परिवार की अमीरी और संपन्नता यदि बच्चों को विज्ञान, अंतरिक्ष, कम्प्यूटर और ऐसी ही नई-नई चीजों से जोड़ती है तो घर-परिवार की गरीबी बच्चों को जवाबदेही के एहसास और स्वाभिमान से जोड़ देती है । केवल अमीरी और उसकी सुविधाएँ जैसे टेलीविजन, इंटरनेट, मोबाइल आदि बच्चों की समझ नहीं बढ़ाते हैं बल्कि गरीबी भी बच्चों की समझ को तेज गति से बढ़ाती है । यह कितना पीड़क है कि एक बारह साल की बच्ची घर की आमदनी के लिए काम में लगी है और इतना ही नहीं वह यह भी चाहती है कि उसका पिता वहाँ न जाए जहाँ उसे जिल्लत सहनी पड़ती है । यहाँ तक कि उसका छोटा भाई भी इन चीजों को समझता है । गरीबी इन बच्चों को बड़ा कर देती है । पर, उनके सुख को छीनकर । उनकी मासूमियत समय के थपेड़ों में स्थाई उदासी का रूप धारण कर कब ठहर जाती है, पता ही नहीं चलता ।

कहानी में ऐसे कई दृश्य हैं; कहानी के अंत का दृश्य है, फूलपुर लौटकर शकीलउद्दीन अपने पिता की जगह मस्जिद में आजान देने लगते हैं । और "शाम को मस्जिद की छत पर खड़े होकर अक्सर शकीलउद्दीन शहर से आनेवाली बस को इस उम्मीद से ताकते कि शायद शहर में कोई जंगल कटा हो, किसी मस्जिद का पता चला हो और उनको बुलाने कोई आया हो ।" जिंदगी को ठहरा देने वाला यह विवरण भावुकता से भरा हुआ नहीं है बल्कि जिंदगी के बेहद तल्ख अनुभवों से गुँथा हुआ है । जिल्लत और लाचारगी से बड़ी होती है गरीबी । शकीलउद्दीन की यह कहानी इस बिंदु पर आकर केवल एक इमाम की कहानी नहीं रह जाती है बल्कि अपनी जिंदगी और गृहस्थी के लिए दो-चार पैसे जोड़ते हर उस आदमी की कहानी हो जाती है जो किसी भी हालत में, किसी भी तरह का कष्ट उठाकर अपने घर के हिस्से कुछ खुशियाँ ले आना चाहता है । चाहे उसके लिए कुछ भी करना पड़े ।

कहानी कुछ और सवाल हमारे सामने उठाती है मसलन एक मस्जिद के इमाम के यहाँ इतनी संपन्नता कैसे है और दूसरे इमाम के यहाँ इतनी विपन्नता क्यों । खुदा की बनाई हुई इस दुनिया में इतना विभेद क्यों । इस तरह लेखिका समाज के उस हिस्से को पाठकों के सामने लाने में सफल होती हैं जिससे उसका परिचय बहुत गहरा नहीं है ।

पूरी कहानी में नासिरा शर्मा की भाषा बेहद विश्वसनीय है । पात्रों के संवादों का कहानी में उचित उपयोग किया गया है ।

5.4 महत्त्पूर्ण अंशों के अर्थ

(क) शकीलउद्दीन सबसे सलाम-दुआ करते आगे बढ़ रहे थे । औरतें घर के दरवाजे और खिड़की की ओट से उन्हें आता देख आँचल से आँखें पोंछने लगीं । उनके अंदर भी रुलाई का सोता फूटा, मगर जबड़े दबाकर वह पी गए । बस पर छोड़ने आए लड़के के बड़े मामू आदाब, खुदा हाफिज की आवाज ने सारे गिले-शिकवे धो दिए ।

अर्थ : नासिरा शर्मा की कहनी 'इमाम साहब' हमें बहुत मुश्किल सवालों के बीच ला खड़ी करती है । शकीलउद्दीन के रूप में इस कहानी में एक ऐसे गरीब और मजबूर इमाम से भेंट होती है जो तमाम जिल्लत और कठिनाई सहकर भी शहर में इसलिए

टिका रहता है ताकि उसके घर पर बड़ी मुश्किल से आई थोड़ी-सी रौनक गायब न हो जाए। वह इसलिए टिका रहता है कि अगर लौट गया तो उसकी बारह साल की बेटी को लिफाफ बनाते वक्त अपने हाथ और तेजी से चलाने होंगे। उसे और काम करना पड़ेगा। वे फूलपुर से शहर इसीलिए आए थे कि महीने के पाँच सौ रुपए मिल जाएँगे तो घर की हालत कुछ सुधर जाएगी।

शकीलउद्दीन ने बासी रोटियाँ खाई, खुदा मियाँ की गाय बनकर घर-घर जाकर अपनी भूख मिटाई। बच्चों को गोद उठाया, घरों के सामान बाजार से लाए। और, मोहल्ले की औरतों के बीच अजीज हो गए। अब उन्हें बच्चे मामू कहने लगे। वे भी अपना समूचा अपमान भूल गए। किस्तों में मिलने वाले अपमान को सहते रहे, बस इसलिए कि पाँच सौ से लगातार कम होती जा रही आमदनी कहीं पूरी तरह बंद न हो जाए। वे जिस मस्जिद के लिए बुलाए गए थे, वह मस्जिद जब ढह गई तो उनके चलने की बारी आ गई। अब वहाँ कैसे रुकते। सबसे दुआ-सलाम करते हुए आगे बढ़ें, तो उनका जाना औरतों की आँखें भिंगो गया। वे हर घर के मददगार हो गए थे। जाते समय शकीलउद्दीन के भीतर भी रुलाई का सोता फूटा। उनके सादे स्वभाव का इससे पता चलता है। सच कहें तो, यह छल-छद्म और चालाकियों से दूर रहने वाले एक आम इंसान की पहचान है। वह कोई कठजीव और बेशर्म ही होगा जो सामने वाले को रोता देख, संजीदा न हो जाए। इंसानी दिल की कोई एक सूरत नहीं होती है, वह एक छोटी सी बात भी जीवन भर याद रखे रहता है तो बड़ा-से-बड़ा अपमान भी भूल जाता है। शकीलउद्दीन भी 'बड़े मामू आदाब' के साथ सारे गिले-शिकवे भूल जाते हैं।

(ख) शकीलउद्दीन पहली खबर पर अटके रहे कि आखिर वह भी इमाम हैं, उन्हें यह इज्जत अपने न सही, बाहरवाले भी नहीं देते हैं, आखिर क्यों ?

अर्थ : नासिरा शर्मा की कहानी 'इमाम साहब' केवल इस दृष्टि से उल्लेखनीय नहीं है कि इसके जरिए हम अपने समाज के एक महत्त्वपूर्ण हिस्से की जीवन स्थितियों से परिचित हो पाते हैं, बल्कि इसलिए भी, कि यह कहानी बताती है कि मुस्लिम समाज किस तरह एक इमाम और दूसरे इमाम में भेद करता है। आखिर, क्या कारण है कि फूलपुर की बड़ी मस्जिद के इमाम साहब के यहाँ किसी भी चीज की कमी नहीं है। उनके यहाँ ईरान से मेवे के बोरे आते हैं और दूसरी ओर शकीलउद्दीन के घर में भूख की समस्या मौजूद रहती है। उन्हें गरीबों में दान करने के लिए इतनी चीजें आती हैं और यहाँ अपनी जरूरतें पूरी करने लायक चीजें भी नहीं है। शकीलउद्दीन के मन यह टीस बार-बार उभरती है कि भले यहाँ के लोग इज्जत न दें, पर बाहर वाले क्यों विभेद करते हैं। उनकी नजर में बड़ी मस्जिद के लिए इतनी इज्जत है और इस मस्जिद के लिए क्यों नहीं। इस्लाम समानता पर आधारित धर्म है तो यह ग़ैर बराबरी क्यों। वह भी मस्जिद के नाम पर !

इस बिंदु पर यह कहानी किसी भी लाचार और गरीब व्यक्ति की कहानी के रूप में पढ़ी जा सकती है जो समाज में व्याप्त तमाम तरह के विभेदों को भोगने के लिए अभिशप्त होता है।

5.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) 'इमाम साहब' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखें।

(ख) नासिरा शर्मा ने इस कहानी में किस विषय को उठाना चाहा है।

(ग) अर्थ लिखें –

शाम को मस्जिद की छत पर खड़े होकर अक्सर शकीलउद्दीन शहर से आनेवाली बस को इस उम्मीद से ताकते कि शायद शहर में कोई जंगल कटा हो, किसी मस्जिद का पता चला हो और उनको बुलाने कोई आया हो।

■■■

तिरिछ

पाठ संरचना

6.0 उद्देश्य
6.1 परिचय
6.2 कहानी का सारांश
6.3 कहानी की विशेषताएँ
6.4 महत्वपूर्ण अंशों के अर्थ
6.5 अभ्यास के प्रश्न

6.0 उद्देश्य

'तिरिछ' उदय प्रकाश की चर्चित कहानी है । इस इकाई में उदय प्रकाश के लेखकीय व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त करने के साथ-साथ तिरिछ कहानी की अंतर्वस्तु और विशेषताओं से भी परिचित हुआ जाएगा ।

6.1 परिचय

उदय प्रकाश का जन्म 1 जनवरी 1952 को मध्यप्रदेश के अनूपपुर जिले के सीतापुर में हुआ । प्रेमकुमार सिंह उनके पिता थे और गंगा देवी माँ । उदय प्रकाश ने विज्ञान से स्नातक किया और हिंदी से एम० ए० । उनके अध्ययन, प्रतिभा और योग्यता की जड़ें बहुत गहरी हैं । वे दिल्ली के जेएनयू में कुछ समय तक अध्यापक रहे, फिर मध्य प्रदेश के संस्कृति विभाग से भी कुछ दिनों तक जुड़े । अनंतर, वे दिनमान और संडेमेल जैसे पत्रों से भी जुड़े । उदय प्रकाश ने कई वृत्तचित्रों का निर्माण किया है और फिल्मों की पटकथाएँ भी लिखी हैं । लेकिन वे अपने आपको मूलत: एक कवि ही मानते हैं । 'सुनो कारीगर', 'अबूतर-कबूतर', 'रात में हारमोनियम', 'एक भाषा हुआ करती है' उनके कविता संकलन हैं । 'दरियाई घोड़ा', 'तिरिछ', 'और अंत में प्रार्थना', 'पॉल गोमरा का स्कूटर', 'पीली छतरी वाली लड़की', 'दत्तात्रेय के दुख', 'अरेवा-परेवा', 'मेंगोसिल', 'मोहनदास' आदि उनकी कहानियों की पुस्तकें हैं । 'ईश्वर की आँख' उनके निबंधों का संकलन है । उदय प्रकाश ने अनुवाद कार्य भी किया है । उनके द्वारा अनूदित पुस्तकें हैं–'कला-अनुभव', 'इंदिरा गाँधी की आखिरी लड़ाई', 'लाल घास पर नीले घोड़े' और 'रोम्याँ रोलाँ का भारत' ।

उदय प्रकाश को पढ़ने की प्रतीक्षा पाठक बहुत बेसब्री से करते हैं । वे हिंदी के सर्वाधिक पढ़े जानेवाले समकालीन लेखकों में हैं । उनका अनुवाद देशी-विदेशी कई भाषाओं में हो चुका है । भारत में यदि वे हिंदी लेखन की तो भारत के बाहर भारतीय लेखन की स्वीकृत पहचान बन चुके हैं । अंतरराष्ट्रीय कविता समारोह हालैंड में वे भारतीय कवि के रूप में प्रतिनिधित्व कर चुके हैं । उनकी कई रचनाओं का मंचन हो चुका है और 'मोहनदास' कहानी पर फिल्म भी बन चुकी है । उदय प्रकाश को 1980 में 'तिब्बत' कविता के लिए भारतभूषण अग्रवाल सम्मान मिला था । उन्हें श्रीकांत वर्मा पुरस्कार, मुक्तिबोध सम्मान, पहल सम्मान, पुश्किन सम्मान सहित अनेक सम्मान मिल चुके हैं ।

उदय प्रकाश का लेखन 1980 के आसपास शुरू हुआ । तब से आज तक भारतीय समाज अनेक परिवर्तनों का गवाह बन चुका है । ये परिवर्तन बहुत तेजी से हुए हैं । ये परिवर्तन हमारे सामाजिक संस्कारों में हुए, हमारी मान्यताओं में हुए, मानवीय संबंधों और रिश्तों

में हुए । इन परिवर्तनों के साथ-साथ हमारे आदर्श बदले, राजनीति का चरित्र बदला और समाज का भी । बाजार एक प्रमुख कारक के रूप में समाज में प्रत्येक दौर में रहा है पर बाजार का हस्तक्षेप इस दौर में जिस रूप में महसूस किया जाने लगा वैसा पहले कभी न किया गया था । देश, समाज, घर, परिवार या व्यक्ति कोई भी इससे अछूता नहीं रहा । बाजार का मतलब सीधे शब्दों में कहें तो पैसा कमाने की होड़ से है । हर ओर इसकी बेचैनी दिखाई पड़ने लगी । हमारे यथार्थ बदले और यथार्थ को देखने की दृष्टि भी । अब गाँधी के अंतिम आदमी की चिंता को भूलकर शेयर बाजार और मॉलों-मार्टों की चिंता ही केंद्रीय चिंता बन गई । उदय प्रकाश का लेखन इन्हीं परिस्थितियों में आकार ग्रहण करता है । बाजार के कुचक्रों के सामने वह निरीह आदमी की पीड़ा को उभारते हुए एक सार्थक प्रतिपक्ष की भूमिका निभाता है । उनकी रचनाओं में इतिहास, संस्कृति, विचार और परंपराओं के संकट उपस्थित हैं तो इस संकट से जूझती अग्निलीक-सी संघर्ष की अप्रतिहत इच्छा भी उपस्थित है । यह साफ-साफ समझने वाली चीज है कि उदय प्रकाश के प्रसंग में जब भी इतिहास, संस्कृति या परंपरा की चर्चा होती है तो उसका कोई इकहरा रूप नहीं होता है ।

उदय प्रकाश यथार्थ का सरलीकरण नहीं करते हैं । उनकी रचनाएँ बताती हैं कि जिसे हम सार्वजनिक यथार्थ या भारतीय यथार्थ कहते हैं दरअसल उसकी कई छवियाँ हैं । यह सही है कि इनमें अंत:सूत्रता होती है पर अपनी प्रत्येक रचना में उसकी अलग-अलग छवियों को दिखाकर वे उसकी प्रत्येक छवि का यथार्थ प्रत्यक्ष करना चाहते हैं । उपभोक्तावादी संस्कृति ने हमसे बहुत कुछ छीन लिया और इन चीजों का छिनना ऐसे भ्रम के वातावरण में हुआ कि हम उनका शोक भी न मना सकें । बाजार इतना शातिर है कि वह इस शोक को भी उत्सव में परिणत कर सकता है । वह जीवन को तमाशे में परिणत करके मृत्यु को उत्सव का रूप दे देता है । और, यह सब वह बहुत ही 'भोलेपन' के साथ कर सकता है । ऐसे विकट समय में उदय प्रकाश ने अपने लेखन में बहुत निर्भीकता और स्पष्टता के साथ इन तत्त्वों की पहचान कराई । उल्लेखनीय है कि यह सबकुछ उन्होंने गहरी संवेदनशीलता और कहानी के कहानीपन की रक्षा करते हुए किया है । यही कारण है कि वे समकालीन हिंदी कहानी के सबसे लोकप्रिय लेखक हैं । उनके बारे में उचित ही कहा गया है कि "वे कारीगर और कलाकार एक साथ हैं, ऐसा कारीगर और कलाकार, जिसके आगे काम का टोटा नहीं, अंबार है; जिसपर उसे अभी तुरंत भिड़ जाना है । कभी पीछे मुड़कर न देखता हुआ एक अशांत, असंतुष्ट और विक्षुब्ध कलाकार जिसके आगे तथ्य और कथ्य का विपुल विस्तार लिए ठाठें मारता संसार चुनौतियाँ देता अपनी ओर खींच रहा है ।"

उदय प्रकाश के लेखन में हड़बड़ी के चिह्न नहीं मिलते हैं । विषय और शिल्प के प्रति ईमानदारी उनके लेखन में हमेशा से मौजूद रही है । अपने लेखन से उन्होंने समसामयिक रचना परिदृश्य को गहरे रूप से प्रभावित किया है । कहानी कहने की विभिन्न संभावनाओं की ओर उन्होंने हिंदी लेखकों का ध्यान खींचा है । हिंदी कहानी में जादुई यथार्थवाद की चर्चा सही मायने में उनसे ही शुरू होती है । तिरिछ, टेपचू, पॉलगोमरा का स्कूटर, वारेन हेस्टिंग्स का सांड़, पीली छतरी वाली लड़की, मेंगोसिल या मोहनदास जैसी उनकी कहानियों में सदैव एक भिन्न शिल्प के दर्शन होते हैं । पर, एक सामान्य-सी चीज इन कहानियों में हमेशा उपस्थित रहती है और वह है अर्थ की बेचैन कसमसाहट ।

उदय प्रकाश की कहानियों के विषय में असद जैदी ने कहा है, "ये कहानियाँ किस्सागोई की उस मजबूत रबिश पर चलती हैं जहाँ एक कहानी कई कहानियों से मिलकर बनती है और किस्सागो इतिहासकार, कलंदर, दार्शनिक, प्रवचनकार, नासेह, संवाददाता, कवि, गद्यकार, और फकीर सभी के भेष बनाकर आता-जाता रहता है । यह स्वर और अंदाज, जहाँ तक मेरी जानकारी है, समकालीन हिंदी कहानी में किसी और से सध नहीं पाया है । इसमें निहित नाटक को काबू में रख पाना और उसके काव्य को सुरक्षित रखाना उदय के ही बस में है । उदय दरअसल ऐसे एथलीट हैं, जो अपने कथानक की लय और चाल को बनाये रखने के लिए बहुत कुछ कुरबान भी कर देते हैं ।.....उदय गरीब और अक्सर दलित जन को नायक की तरह पेश करने की समस्या से, और मध्यवर्गीय 'संस्कृति' से उसके बुनियादी विरोध को पूरी रचनात्मक ताकत के साथ प्रस्तुत करनेवाले अपनी पीढ़ी के अग्रणी कथाकार हैं ।"

6.2 कहानी का सारांश

तिरिछ कहानी उत्तम पुरुष यानी 'मैं' शैली में लिखी गई है ।

इस घटना का संबंध पिताजी से है । मेरे सपने से है और शहर से है । शहर के प्रति जो जन्मजात भय होता है, उससे भी है । पिताजी तब पचपन साल के थे । दुबला शरीर । सफेद बाल । वे सोचते ज्यादा थे, बोलते बहुत कम । हम जानते थे कि वे संसार की सारी भाषाएँ बोल सकते हैं । दुनिया उनको जानती है और हमारी तरह ही डरकर उनका सम्मान करती है । कभी-कभी वे शाम

को हमें टहलाने के लिए कहीं बाहर ले जाते, छोटी बहन उनसे कुछ पूछना चाहती तो मैं ही उसका फौरन जवाब दे देता, जिससे कि पिताजी को न बोलना पड़े । मेरी और माँ की कोशिश रहती कि पिताजी अपनी दुनिया में रहें । उन्हें वहाँ से जबरन न निकाला जाए । यह दुनिया बहुत रहस्यपूर्ण थी लेकिन हमारे घर की बहुत-सी समस्याओं का समाधान पिताजी वहीं रहते कर दिया करते । हम पिताजी पर गर्व करते थे, प्यार करते थे, उनसे डरते थे और उनके होने का अहसास ऐसा था जैसे हम किसी किले में रह रहे हों । ऐसा किला, जिसके चारों ओर गहरी नहरें खुदी हुई हों, बुर्ज बहुत ऊँची हों, दीवारें सख्त लाल चट्टानों की बनी हुई हों और हर बाहरी हमले के सामने हमारा किला अभेद्य हो ।

लेकिन उस शाम को जब पिताजी बाहर से टहलकर आए तो उनके टखने में पट्टी बँधी थी, उन्हें तिरिछ (विषखापर, एक जहरीला लिजार्ड) ने काट लिया था । हम सब जानते थे कि तिरिछ के काटने पर कोई न बचता था । मेरे मित्र थानू ने बताया था कि तिरिछ में काले नाग से सौ गुना ज्यादा जहर होता है । उसी ने बताया कि साँप तो तब काटता है जब उस पर पैर पड़ जाए या उसे तंग किया जाए पर तिरिछ तो नजर मिलते ही पीछा करता है । उससे बचने के लिए कभी सीधे नहीं भागना चाहिए । टेढ़ा-मेढ़ा, गोल-मोल दौड़ना चाहिए । हमें तिरिछ के बारे में यह भी पता था कि जैसे ही वह आदमी को काटता है, वैसे ही वह वहाँ से भागकर किसी जगह पेशाब करता है और उस पेशाब में लोट जाता है अगर उसने ऐसा कर लिया तो आदमी नहीं बच सकता । उसके ऐसा करने से पहले खुद किसी कुएँ, नदी या तालाब में डुबकी लगा लेनी चाहिए या फिर उसे मार देना चाहिए । तिरिछ काटने के लिए तभी दौड़ता है जब उससे नजर टकरा जाए । अगर तिरिछ को देखो तो उससे कभी आँख मत मिलाओ । आँख मिलते ही वह आदमी की गंध पहचान लेता है और फिर पीछे लग जाता है ।

मैं भी तमाम बच्चों की तरह तिरिछ से बहुत डरता था । में सपने में भी उससे डरता । मैं सपने में कहीं जा रहा होता तो अचानक ही किसी जगह वह मिल जाता, उसकी कोई एक तय जगह नहीं थी । वह मुझे कहीं भी दिख सकता था । मैं सपने में कोशिश करता कि उससे नजर न मिलने पाए, लेकिन वह इतनी परिचित आँखों से मुझे देखता कि मैं अपने आपको रोक नहीं पाता था और बस, आँख मिलते ही उसकी नजर बदल जाती थी – वह दौड़ता था और मैं भागता था । मेरी हजार कोशिशों के बाद भी वह चकमा नहीं खाता था । वह मुझे बहुत घाघ, समझदार, चतुर और खतरनाक लगता । मुझे लगता कि वह मुझे खूब अच्छी तरह से जानता है। मुझे लगता कि वह मेरे दिमाग में आनेवाले हर विचार के बारे में जानता है ।

मेरा सबसे खतरनाक सपना यही होता । सपने में मैं बेदम हो जाता । मृत्यु मेरे करीब आ जाती । पिताजी को, थानू को या माँ को मैं पुकारता और फिर मैं जान जाता कि यह सपना है । लेकिन यह पता चल जाने के बावजूद मैं अच्छी तरह से जानता कि अपनी इस मृत्यु से नहीं बच सकता । माँ बतलाती कि मुझे सपने में बोलने और चीखने की आदत है । अपने सपने में मैं उससे भागने की कोशिश करता । कई बार माँ मुझसे पूछती कि मुझे क्या हो गया था । मैं बस इतना ही कह पाता कि बहुत डरावना सपना था ।

जाने क्यों मुझे लगता कि पिताजी को उसी तिरिछ ने काटा था, जिसे मैं पहचानता था और जो मेरे सपने में आता था ।

लेकिन एक अच्छी बात यह थी कि जैसे ही तिरिछ पिताजी को काट कर भागा, पिताजी ने उसे मार डाला । वह अपनी पेशाब में लोट नहीं पाया था । ऐसा होता तो पिताजी किसी भी हाल में बच न पाते । मेरे लिए यह एक खुशी की बात थी कि मेरा सबसे खतरनाक शत्रु मारा गया था । उस रात देर तक हमारे आँगन में भीड़ रही । पिताजी की झाड़फूँक चलती रही । काटे के जख्म को चीर कर खून निकाला गया और उसमें दवा दी गई ।

अगली सुबह पिताजी को शहर जाना था । उन्हें अदालत में पेश होना था । इससे पहले के दो मौके पर वे नहीं गए थे । वकील की फीस भी नहीं दी गई थी । मामला घर का था, नहीं जाते तो क्या पता जज अपनी सनक में डिक्री का ही आदेश दे देता और उनके खिलाफ गैर जमानती वारंट निकाल देता । पिताजी जैसे ही शहर जाने के लिए सड़क पर पहुँचे उन्हें पास के गाँव का एक ट्रैक्टर मिल गया, उसमें पहचान के लोग बैठे थे । वहाँ तिरिछ की भी बात चली । लोगों ने बताया कि अभी निश्चिंत नहीं होना चाहिए क्योंकि कई बार ऐसा होता है कि उसके काटे का असर ठीक चौबीस घंटे के बाद दिखता है । लोगों ने बताया कि उन्हें तिरिछ को कम से कम जला जरूर देना चाहिए था । उसे ऐसे ही नहीं छोड़ना चाहिए था । उन लोगों का कहना था कि बहुत से जीव जंतु चंद्रमा की रोशनी में दुबारा जी उठते हैं । कहीं अगर ऐसा हुआ तो चौबीस घंटे बीतते उसका असर दिखना शुरू हो जाएगा । अब यह विचित्र स्थिति थी, पिताजी न शहर जाना छोड़ सकते थे और न तिरिछ को जलाने के लिए ट्रैक्टर से उतर सकते थे ।

ट्रैक्टर में ही सवार पंडित रामऔतार, जो एक वैद्य भी थे, ने इसका उपाय बताया । उपाय यह था कि अगर धतूरे का बीज कहीं से मिल जाए तो वे जहर की काट तैयार कर सकते हैं । अगले गाँव में ट्रैक्टर रोक दिया गया और एक खेत से धतूरे के बीजों को खोजकर, पीसकर, उसे ताँबे के सिक्के के साथ उबालकर काढ़ा तैयार किया गया और फिर उसे चाय के साथ पिताजी को पिलाया गया ।

तिरिछ के बारे में मुझे भी एक बात पिताजी के जाने के बाद पता चली । बात यह थी कि साँप की तरह तिरिछ की आँख में भी मारने वाला का चेहरा दर्ज हो जाता है । मुझे शक था कि पिताजी का चेहरा भी तिरिछ की आँखों में दर्ज होगा । कोई दूसरा तिरिछ आकर उस लाश की आँख में झाँकेगा तो पिताजी पहचान लिए जाएँगे । मैं थानू के साथ बोतल में मिट्टी का तेल, दियासलाई और डंडा लेकर जंगल की ओर चल पड़ा । जंगल में उसे खोजना आसान न था । फिर, मुझे अचानक ही लगा कि इस जंगल को मैं अच्छी तरह से जानता हूँ । मेरे सपने में इसी जगह से तिरिछ ने निकलकर कई बार मेरा पीछा किया था । बहुत जल्द तिरिछ की लाश भी मिल गई । सूखे पत्ते, लकड़ियाँ और मिट्टी तेल से उसे जला दिया गया । मेरा मन जोर से चिल्लाने को हुआ लेकिन मैं डरा कि कहीं मैं जाग न जाऊँ और यह सब कुछ सपना न साबित हो जाए ।

पिताजी शहर में मिनर्वा टाकीज के पास उतरे । तब उन्होंने ट्रैक्टर में बैठे लोगों को बताया था कि उनका सिर कुछ-कुछ घूम रहा है और गला सूख रहा है । वे परेशान भी थे क्योंकि अदालत जाने का रास्ता उन्हें मालूम नहीं था । गाँव या जंगल की पगडंडियाँ उन्हें याद रहती थीं पर वे शहर की गलियाँ भूल जाते थे । शहर वे कम जाते थे । जाना ही पड़े तो अंतिम समय तक उसे टालते रहते थे । मिनर्वा टाकिज के पास सुबह दस बज कर सात मिनट पर उतरने के बाद से लेकर शाम छह बजे तक उनके साथ क्या हुआ इसका केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है । किसी की अकस्मात मृत्यु के बाद ऐसी जानकारियाँ मिल ही जाया करती हैं । 17 मई 1972 को सुबह दस-दस से लेकर शाम छह बजे तक उनके साथ जो हुआ उसका विस्तृत ब्यौरा मिलना तो मुश्किल है ।

पिताजी पर काढ़े का असर होना शुरू हो गया था, उन्होंने गला सूखने की शिकायत भी की थी, मेरा अनुमान है कि वे किसी होटल या ढाबे की तरफ गए भी होंगे, लेकिन अपने स्वभाव के कारण एक गिलास पानी माँगने का फैसला न किया होगा । कुछ साल पहले वे गर्मियों में शहर गए थे और एक होटल में पानी माँगा था तब नौकर ने उन्हें गाली दी थी । वे बहुत संवेदनशील थे, इसलिए उन्होंने अपनी प्यास को दबाया होगा और किसी से पानी न माँगा होगा । वे अदालत का रास्ता भी किसी से नहीं पूछ पाए होंगे या किसी ने इस तरह बताया होगा कि वे ठीक से समझ नहीं पाए होंगे और दुखी और परेशान होकर रह गए होंगे । तब तक मई की धूप और प्यास ने काढ़े के असर को काफी गहरा कर दिया होगा ।

वे स्टेट बैंक ऑफ इंडिया की देशबंधु मार्ग पर स्थित इमारत में गए थे । वे वहाँ क्यों गए थे, ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता । उन्हें लगा होगा कि अपने गाँव का रमेश दत्त वहाँ है, उससे पानी माँग लेंगे और अदालत जाने का रास्ता भी पूछ लेंगे । जबकि वह दूसरी बैंक में था, हो सकता है कि उनके दिमाग में केवल बैंक रहा होगा । पिताजी बैंक के कैशियर अग्निहोत्री के पास पहुँच गए थे । वह कैश चेक कर रहा था । पिताजी के चेहरे पर धूल लगी हुई थी और चेहरा भयानक जान पड़ता था । अचानक पिताजी ने जोर से कुछ कहा था, अग्निहोत्री उन्हें देखकर डर गया था और उसने घंटी बजा दी । बैंक के चौकीदार, चपरासी सभी जुट गए । नेपाली चौकीदार थापा उन्हें दबोच चुका था और मारता हुआ कॉमन रूम की तरफ ले जा रहा था । जब साढ़े ग्यारह बजे पिताजी बैंक से बाहर आए तो उनके कपड़े फटे हुए थे और निचला होंठ कट गया था, जहाँ से खून निकल रहा था । आँखों के नीचे सूजन और कत्थई चकत्ते थे ।

तब से लेकर एक बजे तक पिताजी कहाँ-कहाँ गए इसकी जानकारी नहीं मिलती । स्टेट बैंक के बाहर पान की दूकानवाले बुन्नू ने एक बात बताई थी कि बैंक से बाहर निकलने पर शायद पिताजी ने कहा था कि उनके रुपये और कागजात बैंक के चपरासियों ने छीन लिए हैं ।

मेरा अपना अंदाजा है कि तब तक पिताजी पर काढ़े असर बहुत ज्यादा हो चुका था । पंडित रामऔतार के अनुसार धतूरे से कोई पागल नहीं होता, हो सकता है कि तिरिछ का जहर उस समय तक चढ़ कर दिमाग तक पहुँचने लगा हो । यह भी हो सकता है कि चपरासियों की मार से उनके सिर में चोट लगी हो और उनका दिमाग सनक गया हो । मेरा अपना मानना है कि इस समय तक उनको थोड़ा-बहुत होश जरूर रहा होगा और वे शहर से निकल जाना चाहते होंगे । उनके कागजात और रुपये भी छीन लिए गए थे । पर उन्हें इतनी हिम्मत न हुई होगी कि फिर से बैंक जाकर अपने कागजात जाकर ले आएँ । जीवन में पहली बार उन्हें इस तरह से मारा गया था ।

पिताजी लगभग सवा बजे शहर के पुलिस थाना पहुँचे थे। थाना का एस.एच.ओ. राघवेंद्र प्रताप सिंह तब अपनी टिफिन खोलकर लंच की तैयारी में था। खाने में करेले को देखकर उसका मुड उखड़ा हुआ था। तभी पिताजी पहुँचे थे। उनके शरीर पर कमीज नहीं थी, पैंट फटी हुई थी। सिपाही गजाधर प्रसाद शर्मा का कहना था कि उसे लगा कि कोई पागल आ गया है। थानेदार के पूछने पर पिताजी ने जो कहा उसे वह नहीं समझ पाया। वह बाद में पछता रहा था कि अगर उन्हें मालूम होता कि यह आदमी बकेली ग्राम का प्रधान और भूतपूर्व अध्यापक है तो उसे थाने में ही कम से कम दो-चार घंटे बिठा लेते। उसने सिपाही को आवाज दी, सिपाही पिताजी को घसीटता हुआ बाहर ले गया। सिपाही गजाधर शर्मा का कहना था कि उसने पिताजी के सथ कोई मार-पीट नहीं की।

थाने से निकलकर पिताजी लगभग डेढ़ घंटे कहाँ-कहाँ भटकते रहे, यह कोई नहीं जानता। उन्होंने पानी भी पिया था कि नहीं, इसे बताना मुश्किल है। हो सकता है कि तब तक उनका दिमाग इस काबिल न रह गया हो कि वे प्यास को भी याद रख सकें। इसके बावजूद उन्हें यह हल्का-सा ही सही ख्याल जरूर रहा होगा कि अपने घर लौट जाएँ। इस समय पिताजी सिर्फ तिरिछ के जहर और धतूरे से ही नहीं घर को बचाने की चिंता से भी घिरे होंगे।

सवा दो बजे उन्हें शहर के सबसे संपन्न कॉलोनी इतवारी कोलोनी में घिसटते हुए देखा गया था। यह सर्राफा के जौहरियों, ठेकेदारों, रिटायर्ड अफसरों, कुछ समृद्ध पत्रकारों और कवियों की कॉलोनी थी। जिन लोगों ने यहाँ पिताजी को देखा था उन्होंने बताया कि उस वक्त उनके शरीर पर केवल एक पट्टीदार जंघिया बचा हुआ था, जिसका नाड़ा शायद टूट गया था और वे उसे अपने बायें हाथ से बार-बार सँभाल रहे थे। लोगों ने बताया कि वे गालियाँ बक रहे थे। बाद में शहर के सबसे बड़े अखबार के संवाददाता और कवि सत्येंद्र थपलियाल ने बताया कि वे गालियाँ नहीं बक रहे थे, दरअसल कह रहे थे- "मैं रामस्वारथ प्रसाद, एक्स स्कूल हेडमास्टर. ...एंड विलेज हेड आफ ग्राम बकेली !" पत्रकार साहब उस समय अमेरिकी दूतावास में जाने की जल्दी में थे। उन्होंने लड़कों को डाँटा भी था जो उन्हें ढेले मार रहे थे। लड़कों का कहना था कि यह आदमी रामरतन सर्राफ की बीवी और साली पर हमला करनेवाला था। तहसीलदार साहब ने भी कहा कि ऐसा सुनने के बाद उन्हें लगा था कि यह कोई बदमाश हो और नाटक कर रहा हो। थपलियाल साहब रामरतन सर्राफ की बात सही मानते हैं। मेरा अपना मानना है कि पिताजी उनके पास या तो पानी माँगने गए होंगे या बकेली जानेवाली सड़क का रास्ता पूछने। लेकिन इस हुलिये के आदमी को देखकर वे औरतें डर गई होंगी।

पिताजी नेशनल रेस्टोरेंट नाम के एक सस्ते से ढाबे के सामने खाली जगह पर लड़कों के झुंड में घिर गए थे। ढाबे में काम करनेवाले सत्ते ने बताया कि पिताजी ने गुस्से में आकर ढेले मारने शुरू कर दिए थे, उसी में एक ढेला सात-आठ साल के विक्की अग्रवाल को लग गया था, जिसे बाद में कई टाँके लगे थे। इसके बाद ही झुंड खतरनाक हो गया था। चारों तरफ से लोग पिताजी पर पत्थर मार रहे थे। ढाबे के मालिक सतनाम सिंह ने कहा कि उसे क्या पता था कि इतना सीधा-सादा आदमी नसीब के फेर में ऐसा हो गया है। ढाबे के नौकर हरी ने कहा कि पिताजी भीड़ को गालियाँ दे रहे थे। मुझे संदेह है कि पिताजी ऐसी कोई गालियाँ दे रहे होंगे। हमने कभी भी उन्हें गाली देते नहीं सुना था।

मुझे लगता है कि पिताजी पूरी तरह से मान चुके हांगे कि यह जो कुछ हो रहा है सब झूठ और अवास्तविक है और बार-बार सपने से जागने की कोशिश करते होंगे। इसी से वे जोर-जोर से बोल रहे थे, या गालियाँ दे रहे थे, और उस आवाज के सहारे उस दु:स्वप्न से बाहर आने की कोशिश कर रहे थे। उनके शरीर पर कई ईंटें और ढेले आकर लगे थे। ठेकेदार अरोड़ा के बेटे ने उन्हें दो-तीन बार लोहे के रॉड से मारा था। मुझे यह सोचकर एक अजीब सी राहत होती है कि उस समय पिताजी को कोई दर्द महसूस नहीं होता रहा होगा, क्योंकि वे सोचते होंगे कि सब सपना है और जब वे इससे जागेंगे सब ठीक हो जाएगा। जो ढेले उन्होंने चलाए होंगे वे भी यह सोचकर कि वे सपने में हैं और इससे किसी को कोई चोट नहीं आएगी। उनका चीखना भी दरअसल गुस्से के कारण न था बल्कि वे मुझे, बहन को या माँ को पुकार रहे हांगे कि अपने आप इस सपने में न जग पाएँ तब कोई आकर उन्हें जगा दे। खबर यह भी उड़ी कि भीड़ से घिरा हुआ आदमी पाकिस्तानी जासूस है और वह पानी टंको में जहर डालने जा रहा था, उसे ही लोग मार रहे हैं।

जब पिताजी ने हिलना-डुलना छोड़ दिया तो भीड़ ने मरा हुआ समझकर छोड़ दिया। उसके दस-पंद्रह मिनट बाद भी वे जब न उठे तो सतनाम सिंह ने दूर से एक बाल्टी पानी उनके ऊपर डाला था। जमीन की मिट्टी गिली होकर पिताजी के शरीर से लिथर गई थी। गवाही के भय से सतनाम सिंह दूकान बंद कर चला गया था।

उस समय लगभग छह बजे थे। वे सिविल लाइंस की सड़क की पटरियों पर एक कतार में बनी मोचियों की दूकानों में से एक मोची गनेशवा की गुमटी में पिताजी ने अपना सिर घुसेड़ा। उस समय तक उनके शरीर पर चड्डी भी नहीं बची थी, वे घुटनों

के बल किसी चौपाये की तरह रेंग रहे थे । शरीर पर कालिख और कीचड़ लगी हुई थी और जगह-जगह चोटें थीं । गनेशवा हमारे गाँव के तालाब के पारवाले टोले का मोची है । उसने बताया कि वह डर गया था और मास्टर साहब को पहचान नहीं पाया । वह शोर मचाने लगा । तब तक कुछ और लोग भी इकट्ठा हो गए थे । पिताजी चमड़े के टुकड़ों, रबड़ आदि के बीच दुबके हुए थे । गनेशवा का कहना था कि उसने पिताजी के कान में कुछ आवाजें भी लगाईं लेकिन वे कुछ बोल नहीं पा रहे थे । बहुत देर बाद उन्होंने 'रामस्वारथ प्रसाद.....' और 'बकेली' जैसा कुछ कहा था । फिर चुप हो गए थे ।

पुलिस ने पिताजी का शव शहर के मुर्दाघर में रखवा दिया था । पोस्टमार्टम रिपोर्ट के अनुसार उनका कॉलर बोन टूटा हुआ था । आमाशय खाली था । इसका मतलब यही हुआ कि धतूरे का काढ़ा उल्टियों द्वारा पहले ही निकल चुका था । उनकी मृत्यु मानसिक सदमे और रक्तस्राव के कारण हुई थी ।

थानू और पंडित रामऔतार का मानना है कि तिरिछ के काटे ने ठीक चौबीस घंटे बाद अपना असर दिखाया ।

मैं अंदाज लगाता हूँ कि गनेशवा के कान में कहने के बाद वे सपने से जाग गए होंगे । उन्होंने माँ, बहन और मुझे देखा होगा, चेहरा धोया होगा, कुल्ला किया होगा और इस दु:स्वप्न को भूल गए होंगे । उन्होंने अदालत जाने के बारे में सोचा होगा । मकान की चिंता ने उन्हें परेशान किया होगा ।

लेकिन, मैं अपने एक सपने के बारे में बताना चाहता हूँ । मैं देखता हूँ कि तिरिछ मारा जा चुका है । मैं पत्थर लेकर उसे कुचलने लगता हूँ । तभी अचानक पाता हूँ कि मैं उस चट्टान पर नहीं हूँ । वहाँ कोई जंगल नहीं है बल्कि मैं दरअसल शहर में हूँ । मेरे कपड़े मैले, फटे और चिथड़े जैसे हो गए हैं । मुझे प्यास लगी है और शायद मैं बोलने की कोशिश करता हूँ । शायद मैं बकेली, अपने घर जाने का रास्ता पूछना चाहता हूँ और तभी अचानक चारों ओर शोर उठता है.... हजारों-हजारों घंटियाँ बजने लगती हैं । मैं भागने लगता हूँ । लगता है भीड़ मेरे पास पहुँचने ही वाली है । अपनी हत्या की साँसें मुझे छूने लगती हैं ।

मैं रोता हूँ । मेरा पूरा शरीर नींद में ही पसीने में डूब जाता है । मैं बोलकर जागने की कोशिश करता हूँ और यह विश्वास करना चाहता हूँ कि यह सपना है । मैं सपने के भीतर आँख फाड़कर देखता हूँ....लेकिन वह पल आ ही जाता है । माँ मेरे माथे को सहलाकर रजाई से ढाँप देती है । मैं अकेला छोड़ दिया जाता हूँ, अपनी मृत्यु से बचने की कोशिश करता । माँ कहती है कि मुझे अभी भी नींद में बड़बड़ाने-चीखने की आदत है । लेकिन मुझे यही सवाल परेशान करता है कि मुझे आखिरकार अब तिरिछ का सपना क्यों नहीं आता ?

6.3 कहानी की विशेषताएँ

'तिरिछ' समाकलीन हिंदी कहानी की श्रेष्ठ उपलब्धियों में गिनी जाती है । 'तिरिछ' एक प्रतीक है । यह प्रतीक है शहर के बनैलेपन का । यह प्रतीक है शहरी समाज की अमानवीयता का । यह प्रतीक है वर्तमान पूँजीवादी समय का, जिसमें मामूली आदमी की पहचान गुम हो चुकी है । यह प्रतीक है शत्रुपक्ष की चालाकी, समझदारी, घाघपन और सर्वव्यापकता का । यह समझने की चीज है कि तिरिछ के बनैलेपन में हमारे समय-समाज की असलियत छिपी है । वह हर जगह है; चट्टानों की दरार में, पुरानी इमारतों के पिछवाड़े में या किसी झाड़ के पास, बाजार में, सिनेमा हॉल में, दुकान में, कमरे में । सब जगह । वह सुपर नैचुरल फोर्स बन चुका है । वह मृत्यु नहीं देता है, हत्या करता है । उससे बचने की हर कोशिश उसके सामने कमजोर है क्योंकि वह सर्वशक्तिमान है ।

तिरिछ साँप नहीं है, वह साँप से सौगुना अधिक जहरीला है । साँप तब काटता है जब उसे छेड़ा जाए । जबकि तिरिछ आँख मिलाते ही नजर मिलानेवाले को पहचान लेता है, हवा में बिखड़ी उसकी गंध पहचान लेता है । उससे नजर मिलाना मानो अपराध है और उसके साम्राज्य में हस्तेक्षप करने के समान है । फिर कितना भी भागो, वह आपकी गंध के साथ आपके पास पहुँच जाएगा । आपको ढूँढ़ निकालेगा । मानो, वह कोई तानाशाह हो और आँख मिलाने भर से वह नाराज हो गया हो । इस बिंदु पर तिरिछ की प्रतीकात्मकता स्पष्ट हो जाती है । यह साफ दिख जाता है कि लेखक ने तिरिछ के माध्यम से अपने समय के सच को बताना चाहा है । कहानी में सपने से सच और सच से सपने तक सभी जगह तिरिछ की उपस्थिति है । सपने और सच का अंतर यहाँ लुप्त हो जाता है ।

'तिरिछ' में कई चीजें मरती हुई दिखाई पड़ती हैं - एक साथ । यह 'रामस्वारथ प्रसाद, एक्स स्कूल हेडमास्टर....एंड विलेज हेड ऑफ ग्राम बकेली' की मृत्यु कथा है इसके साथ ही शहर के पंजे में फँसे, तड़पते, असहाय बना दिए गए गाँवों की भी मृत्यु कथा

है । यह ध्यान देनेवाली बात है कि 'मृत्यु' उदय प्रकाश के लिए एक कथन भर नहीं है। तिरिछ के अतिरिक्त नेलकटर, सहायक, छतरियाँ, छप्पन तोले का करधन, पालगोमरा का स्कूटर, वारेन हेस्टिंग्स का सांड़, मेंगोसिल जैसी उनकी कई कहानियों में 'मृत्यु' अनिवार्यत: उपस्थित है । मृत्यु को रोका नहीं जा सकता है । यह एक नेचुरल फेनामिनन है । पर, उदय प्रकाश की कहानियों में मृत्यु 'अननेचुरल' है । उनकी कहानियों के किसी पात्र की मृत्यु केवल उस एक पात्र की मृत्यु नहीं होती है; बल्कि यह सपनों, संस्कारों और मूल्यों की भी 'मौत' होती है । उनकी कहानियों में मृत्यु का संदर्भ निजी या पारिवारिक मात्र नहीं होता है, बल्कि वह एक वैश्विक संकट के रूप में उपस्थित होता है । रामस्वारथ प्रसाद का मरना केवल एक व्यक्ति या किसी पिता का मरना नहीं है बल्कि एक बेहद सीधे-सादे आदमी का भी मरना है । शहर के छद्मों, आपाधापी, वाचालता और अंधी होड़ में गाँव के एक सामान्य आदमी का मरना सच कहें तो गाँव के ही मरने की निशानी है । एक सिलसिले के रूप में यहाँ कई सवाल खड़े हो जाते हैं । यह प्रश्न उठता है कि रामस्वारथ प्रसाद क्यों मरे ? उनका अपराध क्या था ? रामस्वारथ प्रसाद का हत्यारा कौन है ? इन सवालों के जवाब में हमें अपने समय का सच दिखाई पड़ने लगता है और अपने समय की तस्वीर बेहद घिनौनी और भयावह लगने लगती है । रामस्वारथ प्रसाद 'अत्यंत संवेदनशील' हैं, अपने समय में अनफिट । वे जिस समय में है वह समय चालाकियों और मक्कारियों का है । यह समय अपने चेहरे पर मुखौटे लगा के चलने का है । वैसे ही जैसे कहानी के थपलियाल साहब जैसे लोग चलते हैं । यह समय आपको यह छूट नहीं देता है कि जब कोई थानेदार या वैसा ही कोई शख्स करैले की सब्जी खा रहो तो आप उसके उखड़े हुए मन को और भी बेमजा करने के लिए पहुँच जाएँ । अगर आप यह गलती करेंगे तो वह आपसे भी वैसी ही घृणा करेगा जैसे करेले की सब्जी से । यानी इंसान की जिंदगी और करेले की सब्जी में कोई अंतर नहीं है । यह समय आपको इसकी अनुमति नहीं देता है कि आप गंदे, थके-हारे और परेशान चेहरे के साथ किसी बैंक में चले जाएँ या किसी हाई फाई मोहल्ले में; अगर आप ऐसा करेंगे तो आप रामस्वारथ प्रसाद की तरह एक्स स्कूल हेडमास्टर और विलेज हेड भले रहिए; एक कैशियर से लेकर चपरासी तक आपकी पिटाई कर सकता है । यह क्रूर समय-समाज आपकी पहचान और व्यक्तित्व की कोई परवाह नहीं करता है । और, इसलिए नहीं करता है क्योंकि आप भी उसकी तरह नकली, वाचाल, घाघ और शातिर नहीं होते । अत: आपको इस दुनिया में प्रवेश करना हो तो अपने औसत गँवई चेहरे को उतार कर आइए । अन्यथा, यह शहर और इसका समाज आपको जीने नहीं देगा ।

पूँजीवादी व्यवस्था ने भारत में नए-नए पॉश इलाकों और नव धनाढ्य वर्ग की बयार बहा दी है । शहर एक बड़ा तिलिस्म है जिसमें रामस्वारथ प्रसाद और उनके जैसे लोग फँस जाते हैं । गाँव की पगडंडियों की समूची पहचान यहाँ किसी काम में नहीं आती है । उदय प्रकाश दिखाते हैं कि शहर का दायरा कितना संकुचित हो चुका है । वह अपने से इतर कुछ भी स्वीकारने के लिए तैयार नहीं है । जब रामस्वारथ प्रसाद जैसा व्यक्ति शहर में अपनी ठेठ पहचान के साथ आता है तो मारा जाता है । शहर एक भय है । उदारीकरण और पूँजीवादी व्यवस्था ने भारत के गाँवों को लील लिया है । जंगल, जमीन और इनसे जुड़ी संस्कृति को खत्म कर दिया है । इनकी एक मात्र इच्छा है कि सब शहर हो जाए । सबका निजत्व खो जाए और सब एक रूप, एकाकार हो जाएँ । उसकी हाँ में 'यदि हाँ न मिलाया जाएगा तो वह अत्यंत क्रूर हो सकता है । वह रामस्वारथ प्रसाद की ही तरह किसी को भी 'पागल', 'पाकिस्तानी' या इसी तरह कुछ भी करार दे सकता है ।

'तिरिछ' एक शांत शिल्प की कहानी है । भाषा में उबाल, हड़बड़ी या बहुत अधिक कह जाने का लोभ दूर-दूर तक नहीं है । यह एक ऐसी भाषा है जो जितनी अभिधात्मक है उतनी ही संकेतात्मक भी । परिचित शब्दों के जरिए वे ऐसी दुनिया में ले जाते हैं जो हमसे अपरिचित तो नहीं होता, पर उनके शब्दों के साथ की गई यात्रा हर क्षण पर विशिष्ट हो जाती है । वह अर्थ, संवेदना और प्रश्नों से भरी हुई यात्रा होती है । कहानी से ऐसे कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं:

"हम पिताजी पर गर्व करते थे, प्यार करते थे, उनसे डरते थे और उनके होने का एहसास ऐसा था जैसे हम किसी किले में रह रहे हों । ऐसा किला, जिसके चारों ओर गहरी नदी खूदी हुई हो, बूर्जे बहुत ऊँची हों, दीवारें सख्त लाल चट्टानों की बनी हुई हों और हर बाहरी हिस्से के सामने हमारा किला अभेद्य हो ।"

"यह सोचने के करीब पहुँचना ही बुरी तरह से बेचैन कर डालनेवाला है कि उस समय पिताजी सिर्फ तिरिछ के जहर और धतूरे के नशे के खिलाफ ही नहीं लड़ रहे थे, बल्कि हमारे मकान को बचाने की चिंता भी कहीं न कहीं उनके नशे की नींद में से बार-बार सिर उठा रही थी । शायद उन्हें अब तक यह लगने लगा हो कि यह सब कुछ जो हो रहा है, सिर्फ एक सपना है, पिताजी इससे जागने और बाहर निकलने की कोशिश भी करते रहे होंगे ।"

"मुझे यह सोचकर एक अजीब-सी राहत मिलती है और मेरी फँसती हुई साँसें फिर से ठीक हो जाती हैं कि उस समय पिताजी को कोई दर्द महसूस नहीं होता रहा होगा; क्योंकि वे अच्छी तरह से, पूरी तार्किकता और गहराई के साथ विश्वास करने लग गए होंगे कि यह सब सपना है और जैसे ही वे जागेंगे, सब ठीक हो जाएगा । आँखें खुलते ही आँगन बुहारती माँ नजर आ जाएगी या नीचे फर्श पर सोते हुए मैं और छोटी बहन दिख जाएँगे....या गोरैयों का झुंड ।"

उदय प्रकाश कहानी को खोलकर दिखाते नहीं है बल्कि पाठक स्वयं कहानी में उपस्थित हो जाता है । वह जंगल में तिरिछ को जलाने के समय उपस्थित रहता है, लेखक के पिता के साथ ट्रैक्टर पर सवार होता है, उनके साथ शहर जाता है, बैंक-थाने-गलियों की खाक छानता है । उनके चेहरे पर लगी धूल-मिट्टी कुछ उसके हिस्से में भी आती है, उनकी चोट वह भी महसूस करता है । साथ ही 'रामस्वारथ प्रसाद, एक्स स्कूल हेडमास्टर....एंड विलेज हेड ऑफ ग्राम बकेली' की मृत्यु के साथ वह अपने समय और समाज से गायब हो चुके, मर चुके या कहें कि मार दिए गए या गायब कर दिए गए अनेक चीजों की पहचान करने लगता है ।

रामस्वारथ प्रसाद को अपनी मृत्यु से भय नहीं है । वह अपनी चोट से भी परेशान नहीं हैं । उन्हें तो लगता है कि यह सब स्वप्न है और स्वप्न के टूटते ही सब ठीक हो जाएगा । यथार्थ की यह बेहद मार्मिक अभिव्यक्ति है । चोट कम महसूस हो या न महसूस हो इसके लिए यह सोचना कि यह तो सपना है; कहानी का यह तिलमिला देनेवाला दृश्य है । यह कितना भयानक है कि एक व्यक्ति अपनी आसन्न मृत्यु को झूठलाते हुए मिलने वाली हरेक चोट को सपने में मिलनेवाली चोट मान रहा हो । और, वह चीख रहा है ताकि इस भयानक सपने से बाहर निकल सके । जबकि सपने से बाहर उसे मारा जा रहा है ।

रामस्वारथ प्रसाद जब भी अपना परिचय देते हैं, तो इस रूप में देते हैं–'रामस्वारथ प्रसाद, एक्स स्कूल हेडमास्टर....एंड विलेज हेड ऑफ ग्राम बकेली' । आखिर क्यों ? शहर उन्हें स्वीकारने के लिए तैयार नहीं होता है । उनका शहर में आना मानो अवांछित और अयाचित घटना है । शहर के सामने उनका अस्तित्व नगण्य है । जब-जब उन्हें लगता है कि उनके अस्तित्व से, उनकी पहचान से इंकार किया जा रहा है वे तब-तब अपना पूरा परिचय दुहराते हैं । शहर की भीड़ में, शहर के अजनबी माहौल में अपनी पहचान को बचा लेने की बहुत मासूम परंतु निरीह कोशिश है । वे अपना पूरा परिचय इसलिए देते हैं ताकि शहर उनके वजूद को झूठलाए नहीं ।

6.4 महत्त्वपूर्ण अंशों के अर्थ

(अ) पिताजी एक मजबूत किला थे । उनके परकोटे पर हम सबकुछ भूलकर खेलते थे, दौड़ते थे । और, रात में खूब गहरी नींद मुझे आती थी ।

अर्थ : 'तिरिछ' उदय प्रकाश की चर्चित कहानी है । नवपूंजीवादी व्यवस्था और शहरीकरण की प्रक्रिया में आम आदमी के गुम होते अस्तित्व, उसकी पहचान के समक्ष उपस्थित संकट, पूंजीवादी संरचना के क्रूर, घातक और घाघ चेहरे को यह कहानी बहुत ढंग से उभारती है । यह 'रामस्वारथ प्रसाद' की मृत्यु कथा है । रामस्वारथ प्रसाद कहानी के उत्तमपुरुष यानी 'मैं' के पिता हैं । रामस्वारथ प्रसाद अपनी दुनिया में संतुष्ट रहनेवाले व्यक्ति थे, ऐसे व्यक्ति जो गाँव और जंगल की पगडंडियों को पहचानते थे, पर शहर के रास्तों की याद उन्हें नहीं रहती थी । वे शहर से हमेशा बचना चाहते थे । शहर की दुनिया उनके लिए एकदम अलग थी जिससे वे स्वयं को जोड़ना नहीं चाहते थे ।

शहर में पिता की हत्या के बाद उन्हें और उनकी मृत्यु कथा का स्मरण ही इस कहानी की अंतर्वस्तु है । इस स्मरण में रुदन नहीं है, विलाप नहीं है; बल्कि एक ठंडे दुख की उपस्थिति है जो प्रत्येक शब्द और दृश्य में महसूस की जा सकती है । यह दुख प्रत्यक्षत: वैयक्तिक है, पर इसकी उपस्थिति कई रूपों और कई दिशाओं में है । यह पिता के साथ ही गाँव, आम आदमी और उसकी पहचान पर छाए संकटों और उसके समक्ष इनकी असहायता से भी परिचित कराता है ।

पिता की स्मृति जितनी गहरी है, स्वभावत: पीड़ा भी उसी अनुरूप सांद्र होती जाती है । पिता की स्मृति ऐसे किले के रूप में उभरती है जो खूब मजबूत और बड़ा है । ऐसा किला जो अपने भीतर रहनेवाले को सुरक्षा, सुकून और निश्चिंतता देता है । पिता ऐसे किला थे जिनके परकोटे पर खेलने, दौड़ने और दुनिया-जहान की चिंताओं से मुक्त रहने की गारंटी थी । पिता का होना दुनिया की एक बड़ी आश्वस्ति थी, उनके पास समस्याओं के समाधान थे । घर-परिवार की चिंताओं के लिए निश्चित उपाय थे । पिता ऐसे थे जिनके सहारे दिन का खेल और रात की नींद दोनों का होना सुनिश्चित हो जाता था । पिता की इस आत्मीय छवि में गहरी करुणा

बसी हुई है जो उनकी मृत्यु के साथ दुख की त्रासद नदी में बदल जाती है । इसे फिर से दुहराने की जरूरत है कि अपने अर्थ-संदर्भों में यह हमारे समय के बेचैन सत्य के रूप में प्रत्यक्ष होती है ।

(ब) माँ कहती हैं मुझे अभी भी नींद में बड़बड़ाने और चीखने की आदत है । लेकिन मैं पूछना चाहता हूँ और यही सवाल मुझे हमेशा परेशान करता है कि मुझे आखिरकार अब तिरिछ का सपना क्यों नहीं आता ?

अर्थ : 'तिरिछ' समकालीन हिंदी कहानी की श्रेष्ठ उपलब्धियों में गिनी जाती है । पूंजीवादी समय ने भारत और भारत जैसे तीसरी दुनिया के देशों के समक्ष अनेक संकट खड़े कर दिए हैं । व्यक्ति का अस्तित्व, उसकी निजता, उसकी मौलिकता ये सभी छिनने की कोशिशें यह व्यवस्था लगातार कर रही है । अपने से इतर पहचान के प्रति अस्वीकार और घृणा की सीमा तक विरोध इसकी खास पहचान है । इसने गाँवों की पहचान छीन कर शहर को विस्तार दिया है और शहरों के चरित्र को नितांत असहिष्णु और छल-छद्मों से भरा हुआ बना दिया है । तिरिछ इसी का प्रतीक है ।

तिरिछ से आँख मिलाने की मनाही थी क्योंकि आँख मिलाते ही वह सामने वाले की गंध पहचान लेता था फिर उससे भागने की हर कोशिश नाकाम होती । तिरिछ से नजर मिलाने की परिणति है । मानो तिरिछ एक तानाशाह है जो आँख मिल जाने में अपनी अवज्ञा मानता हो और इसका दंड अनिवार्यत: देता हो । तिरिछ के प्रतीकार्थ को ग्रहण करते हुए कहें कि पूंजीवादी व्यवस्था अपने से इतर पहचान की किसी वस्तु का अस्तित्व ही समाप्त कर देना चाहती है, वह समस्त विभिन्नता को एक ही रंग में रँग देना चाहती है ताकि उसके लिए स्थितियाँ अनुकूल बनी रहें । उसे किसी असुविधा और विरोध का सामना न करना पड़े ।

तिरिछ का सपना उत्तम पुरुष को पहले आता था, पर अब नहीं आता है । उसके स्वप्न तिरिछ के प्रभाव और भय से भरे होते थे पर अब वैसे सपने नहीं आते । इसके कारण हैं । तिरिछ की उपस्थिति पहले स्वप्न तक थी, यानी उसकी पहुँच सीमित थी । पूंजीवादी समय का प्रभाव पहले सीमित था लेकिन धीरे-धीरे उसका प्रभाव गहराता गया और वह स्वप्न की बात भर नहीं रह गया बल्कि प्रत्येक व्यक्ति उसकी जद में आ गया । घर, परिवार से लेकर व्यक्ति की पहचान तक हर क्षेत्र में उसका प्रभाव साफ-साफ दिखाई देने लगा । कोई कोना उससे न बचा । अब वह कल्पना या स्वप्न का विषय भर नहीं रहा । यही कारण है कि कहानी के उत्तमपुरुष को अब उसका स्वप्न नहीं आता है ।

6.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) 'तिरिछ' कहानी की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए ।

(ख) उदय प्रकाश के लेखकीय व्यक्तित्व का परिचय दीजिए ।

(ग) 'तिरिछ' कहानी की मूल समस्या का परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(घ) अर्थ लिखें –

हम पिताजी पर गर्व करते थे, प्यार करते थे, उनसे डरते थे और उनके होने का एहसास ऐसा था जैसे हम किसी किले में रह रहे हों । ऐसा किला, जिसके चारों ओर गहरी नदी खूदी हुई हो, बूर्जे बहुत ऊँची हों, दीवारें सख्त लाल चट्टानों की बनी हुई हों और हर बाहरी हिस्से के सामने हमारा किला अभेद्य हो ।

(ङ) अर्थ लिखें –

मैं सपने में कोशिश करता कि उससे नजर न मिलने पाए, लेकिन वह इतनी परिचित आँखों से मुझे देखता कि मैं अपने आप को रोक नहीं पाता था और बस, आँख मिलते ही उसकी नजर बदल जाती थी–वह दौड़ता था और मैं भागता था ।

■■■

दोनों ओर प्रेम पलता है

पाठ संरचना

7.0 उद्देश्य
7.1 परिचय
7.2 कविता का सारांश
7.3 कविता की विशेषताएँ
7.4 अभ्यास के प्रश्न

7.0 उद्देश्य

'दोनों ओर प्रेम पलता है' मैथिलीशरण गुप्त की रचना है । यह इकाई इस रचना पर केंद्रित है । इस इकाई में गुप्तजी के रचनाकार व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त करते हुए इस कविता के अर्थ एवं विशेषताओं से अवगत हुआ जाएगा ।

7.1 कवि परिचय

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त 1886 को चिरगाँव (झाँसी, उत्तर प्रदेश) में हुआ था । उन्होंने स्वाध्याय से शिक्षा ग्रहण की । उन्हें हिंदी, संस्कृत, बंगला, उर्दू आदि भाषाओं का ज्ञान था । 'रंग में भंग' (1910) उनकी पहली पुस्तक थी । उनकी प्रसिद्ध रचना 'भारत-भारती' 1912 में प्रकाशित हुई थी । 'भारत भारती' ने हिंदी जनता और भारतीय जनमानस में स्वतंत्रता, स्वाभिमान और संघर्ष की चेतना का अलख जगाया । राष्ट्रीयता और नवजागरण के विचार-कण जो अबतक हिंदी साहित्य में चमकते हुए यत्र-तत्र मिल जाते थे; यह रचना उन कणों का विराट कोश साबित हुई । किसी भी पराधीन और हताश समाज में उत्साह भरने और अपनी स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित करनेवाला पहला आवश्यक तत्त्व अपनी परंपरा, इतिहास और संस्कृति के लिए गौरव-बोध होता है; गुप्तजी ने इस रचना से इसी उद्देश्य की आरंभिक पूर्ति की । अपने रचनाकर्म से वे इसे आगे भी मजबूती प्रदान करते हैं । राजनीतिक चेतना और सांस्कृतिक बोध की उपलब्धि के लिए वे भारतीय संस्कृति और जन स्मृति के उदात्त प्रसंगों को चुनते हैं । इस तरह हिंदी पट्टी में नवजागरण और राष्ट्रीय आंदोलन के वे प्रमुख प्रवक्ता बनकर उपस्थित होते हैं । वे विचारों से गाँधीवादी, मन-मिजाज से शुद्ध वैष्णव और कविताई की दृष्टि से अभिधावादी हैं । विजयेंद्र स्नातक के अनुसार, "उनके काव्य में जो नया है उसका मेरुदंड पुराना है और जो पुराना है उस पर नए भावबोध का रंग पूरी तरह चढ़ा हुआ है । सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए इसी समन्वित जीवन दृष्टि की अपेक्षा होती है ।" उनका 'साकेत' मानस के पश्चात हिंदी का सबसे महत्त्वपूर्ण रामकाव्य है । राम, सीता, उर्मिला, भरत, कैकेयी, हिडिंबा, नहुष, आदि पात्र गुप्तजी का पुनस्स्पर्श पाकर नवीन चेतना से युक्त दिखाई पड़ते हैं । 'द्वापर' कृष्णकथा तथा 'यशोधरा' बुद्धकथा को लेकर लिखे गए उनके लोकप्रिय काव्य हैं । 'गुरुकुल' में उन्होंने सिख गुरुओं की महिमा का गान किया है ।

उनके काव्यों में चरित्र-चित्रण और प्रबंधकला की उत्कृष्टता निखरे हुए रूप में सामने आती है । उन्होंने अपने व्यापक उद्देश्य और कथ्य के अनुरूप प्रबंधकाव्य का माध्यम अपनाया और आधुनिक युग में प्रबंधकाव्य की लुप्त होती परंपरा को समर्थ संरक्षण दिया । उन्होंने अनेक महाकाव्यों और खंडकाव्यों की रचना की । उन्होंने लगभग चालीस पुस्तकों की रचना की । वे खड़ी बोली हिंदी में सर्वाधिक प्रबंध काव्य लिखने वाले कवियों में से एक हैं । उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं : रंग में भंग, जयद्रथ वध, भारत-भारती, पंचवटी, झंकार,

साकेत, यशोधरा, द्वापर, जयभारत, विष्णुप्रिया, गुरुकुल, विकट भट, सिद्धराज, वैतालिक, किसान, अनघ, तिलोत्तमा, चंद्रहास आदि। गुप्तजी ने अनुवाद कार्य भी किया। उनके द्वारा अनूदित पुस्तकें हैं : पलासी का युद्ध, मेघनाद वध, वृत्रसंहार आदि।

हिंदी कविता को गुप्त जी की अनेक देन हैं। आज जो काव्यभाषा हमें प्राप्त है उसे निखारने, माँजने और सँवारने में गुप्तजी का प्रमुख योगदान है। खड़ी बोली को काव्य प्रयोग के अर्थ में ही नहीं, जनरुचि की काव्यभाषा के रूप में विकसित करने में भी उनकी केंद्रीय भूमिका रही है। यह एक ज्ञात तथ्य है कि हिंदी पट्टी की कई-कई पीढ़ियाँ गुप्तजी की काव्य पंक्तियों को दुहराते हुए बड़ी हुई हैं। यह उनकी काव्यभाषा की सामर्थ्य और शक्ति का उदाहरण है। यह कहा जा सकता है कि आज की काव्य भाषा के निर्माण में उनकी आधारभूत भूमिका रही है।

गुप्त जी की प्राय: कविताएँ तुकांत हैं। उन्होंने गीत भी लिखें हैं। हरिगीतिका उनका प्रिय और बहुप्रयुक्त छंद है। उनकी रचनाओं में तुकांत का प्रयोग कई जगहों पर अखरने वाला भी है। आगे चलकर उन्होंने अतुकांत रचनाएँ भी कीं। यों गुप्तजी छायावाद और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी लिखते रहे, किंतु प्रमुख काव्योपलब्धियों के आधार पर उनकी गणना द्विवेदीयुगीन कवि के रूप में ही की जाती है। वे हिंदी के प्रथम राष्ट्रकवि के रूप में समादृत हैं।

भारतीय समाज और भारतीय साहित्य दोनों संदर्भों में गुप्तजी का महत्त्व निर्दिष्ट करते हुए अज्ञेय ने लिखा है, "मैथिलीशरण गुप्त उस युग के प्रतीक पुरुष थे, जिसका एक प्रमुख लक्षण था – एक भारतीय अस्मिता की खोज की व्याकुलता। यह व्याकुलता राष्ट्रीयता का या राष्ट्र-मुक्ति के संग्राम का केवल परिणाम नहीं थी, बल्कि उसका कारण भी थी।.....गुप्तजी भारतीयता में निष्णात थे, उसके खोजी नहीं थे; हमारी ही भारतीयता की खोज हमें उनकी देहरी तक ले आती है। उसी देहरी पर खड़ा होकर मैं उनका स्वरूप निहारता हूँ। उनके काव्य की देहरी सांस्कृतिक भारत की देहरी है, जहाँ से कोई रीता नहीं लौटता, आप्यायित होकर ही लौटता है।"

प्रस्तुत रचना 'दोनों ओर प्रेम पलता है' गुप्तजी के प्रसिद्ध काव्य 'साकेत' के नवम् सर्ग से संकलित है। गुप्तजी ने 'साकेत' के नवम् सर्ग में उर्मिला के विरह वर्णन को प्रस्तुत किया है। उर्मिला रामकथा की एक उपेक्षित पात्रा है। संस्कृत, अवधी और अन्य भारतीय भाषाओं के कवियों ने रामकथा को प्रस्तुत करते हुए इस उज्ज्वल चरित्र की लगभग उपेक्षा की है। उर्मिला के त्याग और दुख का कोई उल्लेख हमें नहीं मिलता है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' शीर्षक से एक लेख लिखकर कवियों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया था। यह लेख 'साकेत' में उर्मिला को मिले महत्त्व के पीछे एक सद्प्रेरणा के रूप में रहा है।

गुप्तजी का निधन 12 दिसंबर 1964 को हुआ।

7.2 कविता का अर्थ

सखि, पतंग भी जलता है हा ! दीपक भी जलता है।
सीस हिलाकर दीपक कहता-
'बंधु, वृथा ही तू क्यों दहता ?'
पर पतंग पड़कर ही रहता।
कितनी विह्वलता है।
दोनों ओर प्रेम पलता है।
बचकर हाय! पतंग मरे क्या ?
प्रणय छोड़कर प्राण धरे क्या ?
जले नहीं तो मरा करे क्या ?
क्या यह असफलता है ?
दोनों ओर प्रेम पलता है।
कहता है पतंग मन मारे-
'तुम महान, मैं लघु, पर प्यारे,
क्या न मरण भी हाथ हमारे ?'

शरण किसे छलता है ?
दोनों ओर प्रेम पलता है ।
दीपक के जलने में आली,
फिर भी है जीवन की लाली ।
किंतु पतंग-भाग्य-लिपि काली,
किसका वश चलता है ?
दोनों ओर प्रेम पलता है ।

अर्थ : राम और सीता के वन जाने के निर्णय के बाद लक्ष्मण भी उनके साथ हो लेते हैं । साकेत यानी अयोध्या में उर्मिला अकेले रह जाती है । लक्ष्मण के बिना उर्मिला के जीवन में शून्य आ जाता है । वे दिन जो उसके हँसने और उल्लास मनाने के थे, अब पहाड़ जैसे अकाट्य हो जाते हैं । उसकी स्थिति अत्यंत विकट हो जाती है । उर्मिला अपने प्रेम की तुलना पतंग के प्रेम से करती है । प्रेम का यह एकांतिक स्वरूप है । पतंग जीवन का मोह खो अग्नि में लीन हो जाता है । वह जानता है कि ऐसा करके वह अपने जीवन को समाप्त कर देगा, पर वह इसकी परवाह नहीं करता । यदि मृत्यु ही प्रिय के समीप ले जाने में समर्थ है तो यह भी उसे स्वीकार है.।

उर्मिला कहती है कि सखि ! जलते तो पतंग और दीपक दोनों ही हैं । पर, दोनों के जलने के भाव में अंतर है । दीपक पतंग को जलने से बरजता है, उससे कहता है कि तुम व्यर्थ ही जल रहे हो । अपना प्राण अकारण ही त्याग रहे हो । आग की इस तपिश को तुम क्यों झेलते हो । पतंग दीपक की इस सीख को नहीं स्वीकारता है । वह तो अपने प्रेम में विह्वल रहता है । उसे किसी भी चीज की सुध नहीं रहती है । वह दीपक में मिलकर ही रहता है ।

पतंग दीपक से न मिले तो उसका जीवन बच सकता है । पर इस बचने का क्या अर्थ ! जब प्रिय से अलग रहना पड़े तो उस जीवन का क्या अर्थ ! जीवन और प्रणय में वह प्रणय को चुनाव करता है । जलने में प्रिय से मिलने का सुख होता है जबकि जलने से बचकर जो जीवन मिलेगा उसमें तिल-तिल मरना ही लिखा होगा । प्रिय के बिना जीवन की कल्पना मृत्यु के समान होती है । इसलिए पतंग जीवन का नहीं बल्कि प्रेम का चुनाव करता है । उसका यह निर्णय गलत नहीं है । यह असफलता की निशानी नहीं है ।

पतंग कहता है कि ऐ दीपक ! तुम बड़े हो, महान हो; मैं लघु हूँ, तुच्छ हूँ । पर, इतना तो बताओ कि क्या हम अपनी मृत्यु का निर्णय भी नहीं ले सकते । क्या प्रेम में अपनी आहुति भी नहीं दे सकते । क्या इतना भी हमारा अधिकार नहीं है ।

हे सखि, दीपक का जलना प्रकाश फैलाने के लिए होता है, संसार को आलोकित करने के लिए होता है । उसके जलने में जीवन और सृजन के बीज उपस्थित रहते हैं । पर, पतंग के भाग्य में यह सब कहाँ होता है । उसका भाग्य तो अंधकारमय होता है । उसकी नियति कौन बदल सकता है ? कोई भी नहीं । मेरी भी स्थिति पतंग की भाँति है । मैं विरहाग्नि में जल रही हूँ । मेरे भाग्य में लिखे को भला कौन बदल सकता है !

7.3 कविता की विशेषताएँ

'साकेत' के नवम् सर्ग से उद्धृत गुप्तजी की ये काव्य-पंक्तियाँ हिंदी कविता के पाठकों के बीच पर्याप्त लोकप्रिय रही हैं । इन पंक्तियों में पतंग के एकनिष्ठ प्रेम का परिचय दिया गया है । पतंग के आत्मोत्सर्ग के ब्याज से यहाँ उर्मिला के विरह की धवल छवि उभरती है साथ ही एकांतिक प्रेम के स्वरूप का उद्घाटन भी होता है । गुप्तजी की इन पंक्तियों में एक ओर पतंग और उर्मिला की तुलना मिलती है तो दूसरी ओर दीपक और पतंग की । पतंग और उर्मिला दोनों विरहाग्नि से दग्ध हैं । इनमें से पतंग को अपने प्रेम में गति मिल जाती है । जलकर वह प्रिय का सान्निध्य प्राप्त कर लेता है । उर्मिला की स्थिति उससे कहीं अधिक विकट है । ऐसा चुनाव करने की छूट उसे नहीं है । वह विरह झेलने के लिए अभिशप्त है । वह जीवित रह कर प्रतिदिन घुल-घुल कर मर सकती है, पर अपने प्राण नहीं त्याग सकती ।

दूसरी तुलना यहाँ दीपक और पतंग की है । दोनों ही जलते हैं पर दोनों का जलना भिन्न होता है । दीपक के जलने में परोपकार का गौरव बोध होता है जबकि पतंग के पास इस तरह का कोई बोध नहीं होता है । उसे किसी सम्मान और प्रसिद्धि की इच्छा नहीं

होती है; वह किसी गौरव-बोध से इठलाना नहीं चाहता है । उसकी एकमात्र इच्छा अपने प्रिय का सामीप्य पाने और उससे एकाकार हो जाने की होती है । पतंग के जरिए उर्मिला अपनी स्थिति संबोधित करती है । लक्ष्मण दीपक रूप में भले जलें, समाज और संसार इससे उन्हें आदर देगा । संसृति के अंतिम क्षण तक उनका चरित्र एक आदर्श बना रहेगा पर उर्मिला की व्यथा कौन समझेगा ! उसके त्याग पर तो अंधकार ही पड़ा रहेगा । इन अंतिम पंक्तियों में उर्मिला जैसे अपने प्रेम और समर्पण की विकटता प्रत्यक्ष कर देती है । प्रिय का बिछोह उसके भाग्य में लिखा है । वह त्याग की अग्नि में स्वयं को होम कर देती है । वह जानती है कि दुनिया उसके इस कृत् का उल्लेख कभी न करेगी ।

गुप्तजी ने खड़ी बोली हिंदी हिंदी कविता का संस्कार किया था । खड़ी बोली हिंदी कविता की खुरदरेपन से लेकर सुरूप छवि तक की यात्रा में उनका योगदान ऐतिहासिक है । उनकी काव्यभाषा की सबसे पहली विशेषता यह है कि उसमें कुछ भी गोपन या रहस्यात्मक नहीं रहता है । वह अभिधात्मक होती है । काव्यभाषा के विकास की प्रक्रिया में भाषा का अभिधात्मक स्वरूप एक अनिवार्य पड़ाव होता है, भाषा की विविध भंगिमाएँ इसके बाद ही दिखाई पड़ती हैं । गुप्तजी ने अपने रचनाकर्म से इस आवश्यकता की पूर्ति की थी । इस रचना में भी भाषा का खुलापन द्रष्टव्य है । कविता का माधुर्य और संगीतात्मकता इसकी अन्य विशेषताएँ हैं ।

गुप्तजी की काव्यभाषा में तुक अनिवार्य रूप से मिलते हैं । कतिपय आलोचकों ने इस कारण से उनकी आलोचना भी की है । पर, यदि उनके तुकों को ध्यान से देखें तो उसकी देशजता हिंदी की विशिष्ट उपलब्धि के रूप में नजर आएगी । तुकों में इतनी विविधता का निर्वाह जन सामान्य से उनके जुड़ाव के कारण ही संभव हुआ था । यह विविधता किसी दूसरे कवि के यहाँ नहीं मिलती है । इस कविता से ही हम कतिपय उदाहरण देख सकते हैं--"बंधु, वृथा ही तू क्यों दहता ?" यहाँ 'दहता' की विशिष्टता देखनी चाहिए ।

7.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) मैथिलीशरण गुप्त का कवि परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(ख) 'दोनों ओर प्रेम पलता है' में कवि ने क्या कहना चाहा है ।

(ग) अर्थ लिखें–

बचकर हाय ! पतंग मरे क्या ?
प्रणय छोड़कर प्राण धरे क्या ?
जले नहीं तो मरा करे क्या ?
क्या यह असफलता है ?
दोनों ओर प्रेम पलता है ।

(घ) अर्थ लिखें–

कहता है पतंग मन मारे-
'तुम महान, मैं लघु, पर प्यारे,
क्या न मरण भी हाथ हमारे ?'

■■■

ले चल मुझे भुलावा देकर

पाठ संरचना

8.0 उद्देश्य
8.1 परिचय
8.2 कविता का सारांश
8.3 कविता की विशेषताएँ
8.4 अभ्यास के प्रश्न

8.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचय प्राप्त करते हुए उनकी 'ले चल मुझे भुलावा देकर' शीर्षक रचना के अर्थ एवं विशेषताओं से अवगत होना है ।

8.1 कवि परिचय

जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी 1889 (माघ शुक्ल दशमी, संवत् 1946) में वाराणसी में हुआ था । उनके पिता का नाम देवीप्रसाद साहु था । प्रसादजी के दादाजी शिवरत्न साहु सुरती (तंबाकू) के व्यवसाय के कारण सुंघनी साहु के नाम से विख्यात थे । प्रसादजी का शिक्षारंभ घर पर हुआ । घर पर शिक्षक उन्हें संस्कृत, हिंदी, फारसी पढ़ाने आते थे । वे बचपन में ही माता-पिता से वंचित हो गए । पारिवारिक कारणों से उनकी स्कूली शिक्षा आठवीं तक ही हो पाई । बड़े भाई के निधन के बाद परिवार का समूचा दायित्व बहुत कम उम्र में उनके कंधों पर आ गया ।

प्रसादजी ने कविता रचना ब्रजभाषा में शुरू की थी । वे 'कलाधर' उपनाम से ब्रजभाषा में लिखा करते थे । पर, युगीन परिवर्तन और आवश्यकताओं को देखकर वे खड़ी बोली में काव्य रचना करने लगे । 'चित्राधार' उनका प्रथम प्रकाशित संकलन है जिसमें कविता, कहानी, नाटक आदि संग्रहित हैं । उन्होंने कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबंध, आलोचना आदि विधाओं को अपनी प्रतिभा से संपन्न किया । उनकी कृतियाँ हैं – 'झरना', 'आँसू', 'लहर', 'महाराणा का महत्त्व', 'करुणालय', 'प्रेम पथिक' और 'कामायनी' (काव्य)। 'कल्याणी परिणय', 'प्रायश्चित', 'राज्यश्री', 'विशाख', 'कामना', 'जन्मेजय का नागयज्ञ', 'स्कंदगुप्त', 'एक घूँट', 'चंद्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' (नाटक) । 'छाया', 'प्रतिध्वनि' और 'इंद्रजाल' (कहानी संकलन) । 'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती' (अपूर्ण) उनके उपन्यास हैं ।

जयशंकर प्रसाद हिंदी की सार्वकालिक श्रेष्ठ प्रतिभाओं में से एक हैं । बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में जब हिंदी भाषा अपनी पहचान को अधिक स्पष्ट और प्रखर करने की प्रक्रिया से गुजर रही थी, तब प्रसादजी ने अपने साहित्य से इसमें उल्लेखनीय योग दिया । साहित्य की विभिन्न विधाओं में युगांतकारी सफलता प्राप्त करनेवाले वे विरले लेखक हैं । कथा-साहित्य में वे प्रेमचंद के समानांतर एक भिन्न धारा को सफलतापूर्वक स्थापित करते हैं तो नाटकों में वे मील के पत्थर हैं । हिंदी के नाट्य-साहित्य का काल विभाजन उन्हें ही केंद्र में रखकर किया जाता है । हिंदी कविता के इतिहास में छायावाद के वे सबसे वरिष्ठ और इस काव्यधारा का समग्रता में प्रतिनिधित्व करनेवाले कवि के रूप में समादृत हैं । भावना और विचार दोनों ही उनकी कविता की संगिनी हैं । प्रकृति, प्रेम,

कल्पनाशीलता, स्वातंत्र्यचेतना, उन्मुक्तता और दार्शनिकता उनकी भावधारा में विद्यमान हैं तो लाक्षणिकता, कोमलता, तत्समता, चित्रात्मकता, अमूर्तन, संगीतात्मकता उनकी अभिव्यक्ति शैली में ।

जयशंकर प्रसाद का पहला हिंदी काव्य संकलन 'कानन कुसुम' है । 'कानन कुसुम' से लेकर 'कामायनी' तक चिंतन और काव्य-भाषा दोनों ही स्तर पर उनकी अभिव्यक्ति उत्तरोत्तर प्रौढ़ होती जाती है । उनकी 'कामायनी' आधुनिक हिंदी कविता की सर्वश्रेष्ठ प्रबंधात्मक कृति है । 'कामायनी' सभ्यता-समीक्षा है । प्रलय के बाद मानवीय सृष्टि के फिर से विकसित होने की कथा को प्रसादजी ने यहाँ आधुनिक संदर्भों में प्रस्तुत किया है । भोगमूलक और भौतिकतावादी समाज के अंतर्विरोधों और उसके विकल्प का रास्ता कवि ने इस कृति में सुझाया है । इसका महत्त्व बीसवीं शताब्दी के तीसरे-चौथे दशक में जितना था उससे अधिक आज है । इतना ही नहीं, मानवीय सभ्यता के विकास का वर्तमान मॉडल जब तक न बदलेगा इसकी प्रासंगिकता बनी रहेगी ।

'ले चल वहाँ भुलावा देकर' उनकी काव्य पुस्तक 'लहर' से संकलित है । 'लहर' की कविताओं में छायावाद के प्रमुख तत्त्व जैसे प्रकृति, मानवता, स्वानुभूति, दर्शन, इतिहास, कल्पनाशीलता, करुणा, उदात्त बोध, भाषा का माधुर्य और लाक्षणिकता आदि घुले हुए हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'लहर' के संबंध में लिखा था, "लहर में हम प्रसादजी को वर्तमान और अतीत जीवन की प्रकृत ठोस भूमि पर अपनी कल्पना ठहराने का कुछ प्रयत्न करते पाते हैं।" 'लहर' के विषय में सुमित्रानंदन पंत ने लिखा है, "लहर के प्रगीतों में गांभीर्य, मार्मिक अनुभूति तथा बुद्ध की करुणा का भी प्रभाव है । प्रसाद जी का भावजगत 'झरना' की प्रेम व्याकुलता तथा चंचल भावुकता से बाहर निकलकर इसमें उनकी व्यापक जीवनानुभूति को अधिक सबल संगठित अभिव्यक्ति दे सका है ।" सत्यप्रकाश मिश्र ने 'लहर' के विषय में लिखा है, "मुझे मूलत: यह स्मृति और आकांक्षा दोनों की लहर लगती है । जीवन के सूनेपन का संकेत प्राय: लहर में भी है, परंतु इस सूनेपन को वे करुणा, वेदना आदि से उदात्त करते रहते हैं ।..वे सौंदर्याभिरुचि में एक विशेष भंगिमा और प्रकृति का संकेत करते हैं। लहर के गीतें में कसावट, संक्षिप्तता और संकेतात्मकता के साथ विशेष प्रकार की विशेषणप्रियता भी है ।"

प्रस्तुत गीत के संबंध में प्रसादजी पर यह आरोप लगाया जाता है कि वे यहाँ जीवन-संघर्ष से पलायन की बात कर रहे हैं । जबकि यह रचना धरती के अर्थहीन कोलाहाल, निरुद्देश्य भागमभाग और आपाधापी के बीच से जीवन के लिए शांति के कुछ मनोरम पल की तलाश करती है । यह जीवन-जगत से मुँह मोड़ने का संदेश नहीं देती है, बल्कि इसकी आकांक्षा प्रकृति और मानव की अंत:संगति को पहचानने और अपनी जीवन-यात्रा पर तनिक विचार कर लेने की है ।

प्रसादजी का निधन 15 नवंबर 1937 को वाराणसी में हुआ ।

8.2 कविता का अर्थ

ले चल वहाँ भुलावा देकर,
मेरे नाविक! धीरे-धीरे ।
जिस निर्जन में सागर-लहरी
अंबर के कानों में गहरी-
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे ।
जहाँ साँझ-सी जीवन छाया,
ढीले अपनी कोमल काया,
नील नयन से ढुलकाती हो,
ताराओं की पाँति घनी रे ।
जिस गंभीर मधुर छाया में-
विश्व चित्र-पट चल माया में-
विभुता विभु-सी पड़े दिखाई,
दुख-सुख वाली सत्य बनी रे ।

श्रम-विश्राम क्षितिज वेला से-
जहाँ सृजन करते मेला से-
अमर जागरण उषा-नयन से-
बिखराती हो ज्योति घनी रे ।

अर्थ : प्रसादजी कहते हैं कि हे नाविक ! मुझे कोलाहल से भरी इस धरती से दूर ले चलो । मुझे भुलावा दो । अन्यथा, जाना संभव न हो पाएगा । मुझे प्रकृति की उस गोद में ले चलो, जहाँ शांति हो, जहाँ भीड़-भार न हो, एकांत हो; जहाँ सागर की लहरें आकाश को छूती हों और उसके कानों में अपनी निश्छल, निर्दोष और गहरी प्रेम कहानी सुनाती हों । मुझे वहाँ ले चलो जहाँ धरती की क्षुद्रता, घृणा, हिंसा और बेचैनी न हो ।

नाविक ! मुझे वहाँ ले चलो जहाँ जीवन को सुकून मिल सके । जैसे साँझ के समय छायाएँ लंबी हो जाती हैं, विस्तार पा लेती हैं, उनकी प्रकृति में गांभीर्य और अचंचलता आ जाती है । मुझे वैसी जगह ले चलो । जहाँ दिनभर के परिश्रम के बाद आकाश भी सुस्ता रहा हो, और उसकी नीली आँखों से तारों की मुसकुराहट झलक रही हो । धरती के जीवन में यह अवसर कहाँ मिलता है !

यह पूरा विश्व एक चित्रपट है । यह चंचल है । मुझे वहाँ ले चलो जहाँ यह निरर्थक चंचलता न हो । जहाँ गांभीर्य हो । उस गंभीर छाया में, विश्रांति में धरती का पूरा वैभव, ऐश्वर्य, प्रगति, भौतिक उपलब्धियाँ; सब कुछ उस विभु, ईश्वर का ही अंश प्रतीत हो । जीवन केवल दुख नहीं है, जीवन केवल सुख नहीं है – इसका बोध हो सके । मुझे वैसी जगह ले चलो जहाँ जीवन का सत्य नजर आ सके ।

हे नाविक, मुझे वहाँ ले चलो, जहाँ श्रम और विश्राम का मिलन होता हो; दोनों वैसे मिलते हों जैसे क्षितिज में धरती और आकाश मिलते हैं । हे नाविक, मुझे इस कोलाहाल से दूर वहाँ ले चलो जहाँ श्रम के पश्चात विश्राम का अवसर मिलता हो । जहाँ उषा के आलोक में हमारी आँखें खुलें । यह जागरण विवेक का जागरण हो । वह जागरण न हो जिसकी परिणति पुनः निद्रा में होती है । बल्कि वह स्थायी जागरण हो । कोलाहल और व्यर्थ की आपाधापी से अलग जीवन के उद्देश्यों से परिचय के लिए जागरण हो । नाविक, मुझे वहाँ ले चलो । संसार के प्रपंच शायद मुझे न जाने देंगे; अतः मुझे भुलावा देकर ही सही, वहाँ ले चलो ।

8.3 कविता की विशेषताएँ

'ले चल मुझे भुलावा देकर' जयशंकर प्रसाद की एक अत्यंत चर्चित रचना है । छायावादी कविता की चिंतन धारा, भाव-संरचना और काव्य भाषा के संस्कार का यह रचना बखूबी परिचय देती है । स्वानुभूति, स्वतंत्रता, बौद्धिकता, एकांत, प्रकृति-साहचर्य, प्रेम और विश्व-दृष्टि इस रचना की विशेषताएं हैं । भौतिकता की आँधी और भागमभाग से भरे समय में जीवन को अपने हिसाब से जीने का अवसर व्यक्ति को नहीं मिलता है । कुछ देर ठहर विश्राम कर लेने, अपनी यात्रा का मूल्यांकन करने और अपने उद्देश्यों को परखने की अनुमति नहीं मिलती है । मनुष्य एक यंत्र हो जाता है । उसकी इच्छाएँ कृत्रिम और यांत्रिक हो जाती हैं । इच्छाओं का विस्तार खो जाता है । उनकी सहजता और सामाजिकता गायब हो जाती है । जयशंकर प्रसाद इस स्थिति से असंतुष्ट हैं । उनके 'लहर' को छायावादी समय के अनुरूप पढ़ना चाहिए । छायावादी रचनाकारों ने पूंजीवादी सभ्यता के खोखलेपन को समझ-देख लिया था । इसकी अंतर्गति और नियति पहचान ली थी । पूंजीवादी व्यवस्था में मानवीय संभावनाओं और निजताओं के होनेवाले क्षरण से वे परिचित हो चुके थे । यही कारण है कि वे एक दूसरी व्यवस्था के निर्माण का सपना निरंतर सँजोते रहे । जयशंकर प्रसाद की रचनाएँ इस समस्या का पूरी परिपक्वता और बौद्धिकता के साथ का वर्णन करती हैं । 'कामायनी' में उन्होंने इसी समस्या को व्यापक फलक पर उठाया है ।

प्रस्तुत रचना में कवि की इच्छा को पलायन की इच्छा के रूप में नहीं बल्कि मौजूदा सभ्यता की आलोचना के रूप में देखा-समझा जाना चाहिए । आखिरकार, हम कैसी धरती बनाना चाहते हैं । कैसी दुनिया बनाना चाहते हैं । जहाँ केवल भागमभाग हो, बेचैनी हो । शोर हो । कृत्रिमता हो । जहाँ शांति के क्षण मयस्सर न हों । जहाँ सहजता न हो । हम जिस आपाधापी में हैं वह लोभ पैदा करती है, घृणा को जन्म देती है और अंततः हिंसा का रूप धर लेती है । ऐसी प्रगति किस काम की । प्रसादजी की यह रचना ऐसे प्रश्नों के बीच हमें ला खड़ा करती है । मशीनी सभ्यता के इस युग में हम खुद ही विचार करें कि आकाश को आखिरी बार कब निहारा था । क्या मनुष्य को प्रकृति के समीप होने के इतने मामूली अवसर भी यह मशीनी संस्कृति नहीं दे सकती । ऐसे में इस पूरी

विकास-यात्रा और इसकी उपलब्धियों का परखने की जरूरत सामने आ जाती है । कहना न होगा, जिस समस्या से हम आज जूझ रहे हैं, प्रसादजी की पारखी दृष्टि ने उसे वर्षों पहले पहचान लिया था ।

8.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) जयशंकर प्रसाद का कवि परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(ख) 'ले चल मुझे भुलावा देकर' कविता का भाव स्पष्ट करें ।

(ग) अर्थ लिखें–

ले चल वहाँ भुलावा देकर,
मेरे नाविक ! धीरे-धीरे ।
जिस निर्जन में सागर-लहरी
अंबर के कानों में गहरी-
निश्छल प्रेम-कथा कहती हो,
तज कोलाहल की अवनी रे ।

(घ) अर्थ लिखें–

श्रम-विश्राम क्षितिज वेला से-
जहाँ सृजन करते मेला से-
अमर जागरण उषा-नयन से-
बिखराती हो ज्योति घनी रे ।

■■■

बेटी की विदा

पाठ संरचना

9.0 उद्देश्य

9.1 परिचय

9.2 कविता का सारांश

9.3 कविता की विशेषताएँ

9.4 अभ्यास के प्रश्न

9.0 उद्देश्य

'बेटी की विदा' माखनलाल चतुर्वेदी की कविता है । यह इकाई इसी कविता पर केंद्रित है । इस इकाई का उद्देश्य माखनलाल चतुर्वेदी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से परिचय प्राप्त करने के साथ-साथ कविता के अर्थ एवं विशेषताओं से अवगत होना है ।

9.1 कवि परिचय

माखनलाल चतुर्वेदी का जन्म 4 अप्रैल 1889 को बवई (होशंगाबाद, मध्यप्रदेश) में हुआ था । प्राथमिक शिक्षा के बाद वे घर पर ही संस्कृत का अध्ययन करने लगे । सोलह वर्ष की अवस्था से उन्होंने अध्यापकी शुरू की । 1913 में उन्होंने 'प्रभा' का प्रकाशन आरंभ किया । यह पहले पूने से निकलता था बाद में कानपुर से निकलने लगा । इसी समय वे गणेश शंकर विद्यार्थी के संपर्क में आए । विद्यार्थीजी के राष्ट्रप्रेम, कर्मठता, निश्छलता, हिंदी प्रेम और राग-द्वेष से परे व्यक्तित्व का उनपर काफी प्रभाव पड़ा । इसी बीच उनकी पहली रचना 'कृष्णार्जुन युद्ध' (नाटक, 1918) प्रकाशित हुई । इस रचना में हिंदी नाट्य परंपरा को पारसी रंगमंच के प्रभावों से मुक्त करने का एक उद्देश्य समाहित था । 1919 से उन्होंने जबलपुर से 'कर्मवीर' का प्रकाशन प्रारंभ किया । राजनीति और साहित्य दोनों ही इसमें स्थान पाते थे और दोनों का लक्ष्य एक था– राष्ट्रीय जागरण । इसकी आवाज निर्भीक और बुलंद थी । 'कर्मवीर' के घोषणा पत्र को प्रस्तुत करते समय जिला मजिस्ट्रेट के यह पूछे जाने पर कि एक अंग्रेजी साप्ताहिक के होते हुए हिंदी साप्ताहिक क्यों निकालना चाहते हैं तो माखनलाल चतुर्वेदी का उत्तर था कि, "आपका अंग्रेजी साप्ताहिक तो दब्बू है मैं वैसा पत्र नहीं निकालना चाहता । मैं एक ऐसा पत्र निकालना चाहूँगा कि ब्रिटिश शासन चलते-चलते रुक जाए ।" 'कर्मवीर' को कई देशी राज्यों में प्रतिबंधित भी कर दिया गया ।

माखनलाल चतुर्वेदी को 1921 में राजद्रोह के आरोप में पहली बार गिरफ्तार किया गया जहाँ से वे 1922 में छुटे । विद्यार्थीजी की गिरफ्तारी के बाद वे 1924 में 'प्रताप' से जुड़े । वे हिंदी साहित्य सम्मेलन (1943) के अध्यक्ष भी रहे ।

माखनलाल चतुर्वेदी हिंदी कविता में 'एक भारतीय आत्मा', गद्य में 'साहित्य देवता' और साहित्यिकों में 'दादा' के नाम से ख्यात रहे । उनकी रचनाएँ हैं – हिम किरीटिनी, हिम तरंगिनी, साहित्य देवता, माता (काव्य); युगचरण, समर्पण, वेणु लो गूँजे धारा (कहानी); अमीर इरादे गरीब इरादे (निबंध) आदि । हिम तरंगिनी के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ था ।

माखनलाल चतुर्वेदी के लिए हिंदी और हिंदुस्तान की चिंता एक थी । लेखनी से लेकर जेल तक, राजनीति से लेकर साहित्य तक उनके उद्देश्य स्पष्ट थे । चाहे साहित्य हो, पत्रकारिता हो, राजनीति हो, समाजचेतना हो या राष्ट्रभाषा प्रचार का विषय उन्होंने एक योद्धा की भूमिका निभायी । उनके आरंभिक लेखन में भक्ति विषयक रचनाएँ प्रमुखता से उपस्थित हैं । उनका परिवार राधावल्लभ संप्रदाय

में दीक्षित था । इसी से वैष्णव भक्ति का प्रभाव उनकी रचनाओं में मिलता है । उनकी भक्ति में निवेदन है, सहजता है और राष्ट्र मुक्ति की प्रार्थना भी । राष्ट्र उनके चिंतन में सदैव उपस्थित रहता है । उन्होंने राजनीतिक घटनाओं को आधार बनाकर अनेक रचनाएँ की । 'पुष्प की अभिलाषा' और 'कैदी और कोकिला' उनकी बहुप्रसिद्ध रचनाएँ हैं । समर्पण और आत्मोत्सर्ग इन रचनाओं का प्राण है । 'पुष्प की अभिलाषा' की प्रसिद्ध पंक्तियाँ हैं :

मुझे तोड़ लेना वनमाली
उस पथ पर देना तू फेंक
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने
जिस पथ जावें वीर अनेक

देश से बढ़कर और अपनी भाषा से प्रिय कुछ और भी हो सकता हैं, माखनलाल चतुर्वेदी इसकी कल्पना भी नहीं करते थे । दुहराने की जरूरत नहीं है कि उनकी यह प्रतिबद्धता वैचारिक ही नहीं क्रियात्मक भी थी ।

माखनलाल चतुर्वेदी की भाषा जीवंत है । वह स्थानीयता के आग्रह की रक्षा करते हुए सार्वदेशिकता और संप्रेषणीयता की कसौटी पर एक समान खरी उतरती है । बुंदेलखंडी, संस्कृत, उर्दू-फारसी और देशज शब्दों के प्रयोग में उन्होंने कोई हिचक नहीं दिखाई । इसी मिलन में वे हिंदी की शक्ति देखते थे । उनका कहना था कि, "हिंदी अपनी इस विशेषता के कारण बढ़ी है नहीं कि उसे अपने साहित्य पर यों गर्व और त्यों गर्व है । वह तो अपनी सरलता के कारण बढ़ी है ।.....सो, साहित्य में उन्नत और अलंकृत भाषाओं के रहते, यदि हिंदी को राष्ट्रभाषा बनना पड़ा तो इसलिए कि देश की जो सीमा, जो घेरा एक लोकवाणी के प्रभाव में लाया जा सकता था, वहाँ हिंदी ही ठहर सकती थी ।"

माखनलाल चतुर्वेदी नए लेखकों को आगे बढ़ने में सदैव प्रेरक और सहायक होते थे । उनका निधन 30 जनवरी 1968 को हुआ ।

9.2 कविता का अर्थ

आज बेटी जा रही है,
मिलन और वियोग की दुनिया नवीन बसा रही है ।
मिलन यह जीवन प्रकाश
वियोग यह युग अँधेरा,
उभय दिशि कार्दबिनी, अपना अमृत बरसा रही है ।
यह क्या, कि इस घर में बजे थे, वे तुम्हारे प्रथम पैंजन,
यह क्या, कि इस आँगन सुने थे, वे सजीले मृदुल रुनझुन,
यह क्या, कि इस वीथी तुम्हारे तोतले-से बोल फूटे,
यह क्या, कि इस वैभव बने थे, चित्र हँसते और रूठे,
आज यादों का खजाना, याद भर रह जाएगा क्या ?
यह मधुर प्रत्यक्ष, सपनों के बहाने जाएगा क्या ?
गोदी के बरसों को धीरे-धीरे भूल चली हो रानी,
बचपन की मधुरीली कूकों के प्रतिकूल चली हो रानी,
छोड़ जाह्नवी कूल, नेहधारा के कूल चली हो रानी,
मैंने झूला बाँधा है, अपने घर झूल चली हो रानी,

मेरा गर्व, समय के चरणों पर कितना बेबस लोटा है,
मेरा वैभव, प्रभु की आज्ञा पर कितना, कितना छोटा है ?
आज उसाँस मधुर लगती है, और साँस कटु है, भारी है,
तेरे विदा दिवस पर, हिम्मत ने कैसी हिम्मत हारी है !
कैसा पागलपन है, मैं बेटी को भी कहता हूँ बेटा,
कड़ुवे-मीठे स्वाद विश्व के स्वागत कर, सहता हूँ बेटा,
तुझे विदा कर एकाकी आगत-सा रहता हूँ बेटा,
दो आँसू आ गये, समझता हूं उनमें बहता हूँ बेटा,
बेटा आज विदा है तेरी, बेटी आत्मसमर्पण है यह,
जो बेबस है, तो ताड़ित है, उस मानव ही का प्रण है यह ।
सावन आवेगा, क्या बोलूँगा हरियाली से कल्याणी ?
भाई-बहिन मचल जायेंगे, ला दो घर की, जीजी रानी ।
मेंहदी और महावर मानो सिसक-सिसक मनुहार करेंगी,
बूढ़ी सिसक रही सपनों में, यादें किसको प्यार करेंगी ?
दीवाली आवेगी, होली आवेगी, आवेंगे उत्सव,
'जीजी रानी साथ रहेंगी' बच्चों के? यह कैसे संभव ?
भाई के जी में उठ्ठेगी कसक, सखी सिसकार उठेगी,
माँ के जी में ज्वार उठेगी, बहिन कहीं पुकार उठेगी!
तब क्या होगा झूम-झूम जब बादल बरस उठेंगे रानी ?
कौन कहेगा उठो अरुण तुम सुनो, और मैं कहूँ कहानी !
कैसे चाचा जी बहलावें, चाची कैसे बाट निहारें ?
कैसे अंडे मिलें लौटकर, चिड़ियाँ कैसे पंख पसारें ?
आज वासंती दृगों की बरसात जैसे छा रही है ।
मिलन और वियोग की दुनिया नवीन बसा रही है ।
आज बेटी जा रही है ।

अर्थ : इस कविता में कवि ने बेटी की बिदाई का मार्मिक चित्र खींचा है । कवि यहाँ दोहरी भूमिका में है। वह पिता है और लेखक भी । पिता के रूप में वह जो भोगता है, कवि के रूप में उसे अभिव्यक्ति देता है ।

आज बेटी जा रही है । यह मिलन और वियोग की घड़ी है । एक घर को छोड़ वह दूसरे घर से जुड़ने जा रही है । आज उसकी एक नयी दुनिया बसेगी । वह जहाँ जाएगी वहाँ मिलन का प्रकाश होगा और जिस घर से वह जा रही है वहाँ बिदाई का अँधेरा । इस घड़ी कादंबिनी सभी दिशाओं में अमृत बरसा रही है । खुशियाँ हर ओर छलक रही हैं । बेटी, इसी घर में पहली बार तुम्हारे पायल बजे थे । उसकी रुनझुन, वह सुंदर और मीठी आवाज पहली बार यहीं सुनी गई थी । इस गली में ही तो तुम्हारी बोली फूटी थी । वह तोतली बोली । तुम्हारा हँसना और रुठना तो इसी घर हुआ था । क्या मेरी वे खुशियाँ, मेरी संपत्ति, मेरा वैभव सब छीन जाएगा और यादों का अनमोल खजाना ही मेरे पास रह जाएगा । जो अब तक मेरे सामने था, क्या अब सपना हो जाएगा ।

ए रानी, ए बेटी ! मेरी गोद में न जाने कितने वर्ष तुम खेली हो, रही हो । पर, आज वह सब भूल एक नयी दुनिया की ओर चल रही हो । तुम्हारा बचपन इस घर में बीता, उन मीठी स्मृतियों को छोड़ तुम एक अलग दिशा में जा रही हो । अपने पिता के किनारे

को छोड़ नेह की एक अलग धारा की ओर बहने चली हो । बिटिया, ए रानी; तुम्हारे लिए मैंने न जाने कितनी बार झूला बाँधा है, तुम उस पर झूल चुकी हो । खुशियों के न जाने कितने क्षण जी कर तुम आज एक अलग दुनिया में जा रही हो ।

बेटी, तुम तो मेरा गौरव हो । तुमसे मेरा शीश ऊँचा होता है । तुम मेरी संपत्ति हो । पर यह कैसा समय है कि मैं बेबस हो गया हूँ । मेरा वैभव मुझसे दूर जा रहा है । ईश्वर की यही इच्छा है । इस घड़ी यह जीवन बोझ प्रतीत होता है । यह दुख ही मेरे पास रह गया है । साँसें तीखी लगती हैं । जब तुम ही जा रही हो तो जीवन की मिठास चली जा रही है । यह कड़वा प्रतीत हो रहा है । बिदाई की इस घड़ी में मुझमें हिम्मत नहीं बची है । यह दुख मेरे लिए असह्य हो रहा है ।

मैंने तो अपनी बेटी को बेटा ही कहा । मेरा वह प्रेम आज मुझसे विदा हो रहा है । दुनिया के कड़वे-मीठे सभी अनुभवों को स्वीकारने के लिए मैं प्रस्तुत हूँ । तुम्हें बिदा करने के समय लगता है मेरा सम्मान कहीं दूर चला जा रहा है । न जाने क्यों मैं लज्जित हूँ । आँसू के जो दो बूँद टपक रहे हैं उनमें बह लेना चाहता हूँ, अपने दुख में डूब जाना चाहता हूँ । यह विदा की घड़ी है, तेरे रूप में मैं यह मेरा भी समर्पण है ।

तुम्हारा पिता आज बेबस है, ताड़ित है, । वह कुछ नहीं कर सकता । करे भी तो कैसे । तुम आज दूसरी दुनिया से जुड़ने जा रही हो । बेटी, पर जब यहाँ सावन आएगा तो मैं उसे क्या जवाब दूँगा । मेरी कल्याणी मेरे घर में झूला कैसे बँधेगा । मेरे घर में आने और ठहरने से पहले हरियाली तुम्हारे बारे में पूछेगी तो क्या जवाब दूँगा । सच कहूँ, सावन अब इस देहरी न आएगा । हरियाली यहाँ न ठहरेगी । तुम्हारे लिए तुम्हारे भाई-बहन मचलेंगे । मैं उनकी जीजी कहाँ से लाकर दूँगा । मेंहदी और महावर भी मुझसे मनुहार करेंगी कि तुम्हें ले आउँ, पर कहाँ से लाऊँगा । ये भी तुम्हारे न होने से दुखी होंगी । मेरी बूढ़ी आँखों को तो अब रोना ही लिखा है । मैं किसे प्यार कर पाऊँगा । तुम मेरे लिए बस याद रह जाओगी । दीवाली, होली और सब उत्सव आएँगे; पर बच्चों की जीजी उनके साथ रहे । यह कहाँ संभव है ।

भाई के मन में कसक उठेगा और सखी के भी । तुम्हारे लिए तुम्हारी माँ बेकल हो जाएगी और बहन की पुकारों में तुम्हारा ही नाम होगा । बताओ बेटी, इनकी आँखों से जो बादल बरसेंगे, तब क्या होगा । अपने भाई को कौन कहेगा कि अब उठ जा, मैं तुम्हें कहानी सुनाऊँ । तुम्हारे चाचा का जी कैसे बहलेगा, चाची किसकी राह निहारेंगी । तुम आज विदा हो रही है । एक नए बसेरे की ओर इस घोंसले को छोड़ नए ठिकाने की ओर । तुम्हारी आज से एक नई दुनिया बसने जा रही है । मैं तो चिड़ियाँ हूँ, और तुम अंडा; जब तुम ही न होगी तो मैं किसके लिए पंख पसारूँगा । मेरी उड़ान किसके लिए होगी । इन आँखों में जैसे अब बरसात छा रही है । आँसुओं की झड़ी लग गई है । आँखें लाल हो रही हैं । बेटी तुम आज जा रही हो । आज मिलन और वियोग दोनों साथ-साथ हैं । मिलन और वियोग, दोनों संसार तुम ही बसा रही हो ।

9.3 कविता की विशेषताएँ

माखनलाल चतुर्वेदी की यह कविता अत्यंत मार्मिक है । बेटी जब अपने पिता का घर छोड़ पति के संग नए घर की ओर कदम बढ़ाती है तो यह एक अलग-सा क्षण होता है । वह एक नए संसार में प्रवेश करती है । नए संबंध जुड़ने की खुशी बेटी के दूर होने क बात सोचकर आँसुओं से गिली हो जाती है । भावनाएँ हिलोड़े लेती हैं और सिसकियाँ फूट पड़ती हैं । जिस घर में वह खेली कूदी, बड़ी हुई; उस देहरी को छोड़ते हुए वह रोती है । उसके साथ उसके अपने भी रो देते हैं । जिस घर से, जिस गली से वह विदा होती है वह घर-गली सूनी हो जाती है । गूँगी हो जाती है । समकालीन हिंदी कविता के एक प्रमुख कवि राजेश जोशी ने 'बेटी की बिदाई' शीर्षक कविता में यह मार्मिक दृश्य इस तरह खींचा है :

तुमने देखा है कभी
बेटी के जाने के बाद का कोई घर ?
जैसे बिना चिड़ियों की सुबह
जैसे बिना तारों का आकाश
बेटियाँ इतनी एक सी होती हैं
कि एक की बेटी में दिखती है दूसरे को अपनी बेटी की शक्ल

माखनलाल चतुर्वेदी की यह रचना हृदय की अतल गहराई से निकली है । पिता का दुख अपने प्रकृत रूप में यहाँ प्रकट हुआ है । दुख पूरी तरह शब्दों से घुल-मिल गया है । यही कारण है कि शब्दों के चयन में किसी तरह के सायास लक्षण दिखाई नहीं पड़ते । भाव जिस तरह उमड़े हैं उसी तरह कविता में प्रकट हुए हैं । पिता दुख की सबसे ऊँची सीढ़ी पर खड़ा स्वयं को 'बेबस' और 'ताड़ित' महसूस करता है । यह अजब स्थिति है कि जिसके समक्ष वह बेबस महसूस कर रहा है वह चुनाव उसका ही होता है । समय के सामने वह लाचार होता है । उसके सामने उसकी बेटी घर को छोड़ नए घरौंदे को बनाने-सँजोने चली जाती है । पिता अपने स्नेह की उष्मा से जहाँ मंगलकामना करता है वहीं बेटी की विदाई देखकर उसके हृदय का एक कोना दरक भी जाता है ।

घर, परिवार, रिश्ते, नाते, माँ-पिता, भाई-बहन, चाचा-चाची सभी इस कविता में उपस्थित हैं । यानी पूरा परिवार । हिंदी कविता में इन दिनों यह विस्तार कम ही दिखाई देता है । यह उस दौर की कविता है जब दुख और सुख को साझे में जीन-भोगने का चलन था । भारतीय उपमहाद्वीप की इस विशिष्टता का यह कविता स्मरण कराती है ।

यह कविता कथन-शैली में हैं । कविता में कुछ सुदर बिंब भी हैं । जैसे– 'कैसे अंडे मिले लौटकर, चिड़ियाँ कैसे पंख पसारे' । संप्रेषणीयता इसकी प्रमुख उपलब्धि है ।

9.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) माखनलाल चतुर्वेदी का कवि परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(ख) 'बेटी की विदा' कविता का भावार्थ लिखें ।

(ग) अर्थ लिखें–

मेरा गर्व, समय के चरणों पर कितना बेबस लोटा है,
मेरा वैभव, प्रभु की आज्ञा पर कितना, कितना छोटा है ?
आज उसाँस मधुर लगती है, और साँस कटु है, भारी है,
तेरे विदा दिवस पर, हिम्मत ने कैसी हिम्मत हारी है !

■■■

समर शेष है

पाठ संरचना

10.0 उद्देश्य
10.1 परिचय
10.2 कविता का सारांश
10.3 कविता की विशेषताएँ
10.4 अभ्यास के प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य रामधारी सिंह दिनकर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अवगत होते हुए उनकी 'समर शेष है' शीर्षक रचना के अर्थ एवं विशेषताओं से परिचय प्राप्त करना है ।

10.1 कवि परिचय

रामधारी सिंह दिनकर का जन्म 23 सितंबर 1908 को सिमरिया (बेगूसराय, बिहार) में हुआ था । उनकी माता मनरूप देवी एवं पिता रवि सिंह थे । दिनकर की आरंभिक शिक्षा गाँव के आसपास हुई थी । 1928 में मोकामा घाट रेलवे हाई स्कूल से उन्होंने मैट्रिक और 1932 में पटना कॉलेज से बी० ए० ऑनर्स (इतिहास) की परीक्षा पास की । दिनकरजी ने कई संस्थानों और विभागों में अपनी सेवा दी ।

दिनकर की साहित्यिक प्रतिभा बचपन से ही मुखर थी । युवा रचनाकार के रूप में उन्हें शीघ्र प्रसिद्धि मिल गई थी । 21 वर्ष की अवस्था में उनकी पहली कविता पुस्तक 'प्रणभंग' (1929) प्रकाशित हुई थी । उनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं– प्रणभंग, रेणुका, हुंकार, रसवंती, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी, नीलकुसुम, उर्वशी, परशुराम की प्रतीक्षा, हरि को हरिनाम आदि । उनकी गद्य रचनाओं में मिट्टी की ओर, अर्धनारीश्वर, संस्कृति के चार अध्याय, दिनकर की डायरी आदि प्रमुख हैं । उन्हें 'संस्कृति के चार अध्याय' के लिए साहित्य अकादमी तथा 'उर्वशी' के लिए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ था । वे पद्मभूषण सहित कई अन्य अलंकरणों से भी सम्मानित हुए ।

दिनकर छायावादोत्तर युग के प्रमुख कवि हैं । उनकी कविताएँ विषय की दृष्टि से काफी संपन्न हैं । अपनी कविताओं में राष्ट्रीय भाव-धारा को उत्कट रूप से प्रस्तुत करने के कारण वे 'राष्ट्रकवि' के रूप में समादृत हैं । ओज, पौरुष, परिवर्तन-कामना और स्वातंत्र्येच्छा उनकी कविता की सार्वजनिक पहचान के विषय हैं । वैश्विक बोध और मानव-केंद्रित राजनीति उनकी कविताओं की विषय-वस्तु के रूप में आसानी से पहचानी जा सकती हैं । इसके साथ ही दर्शन-संस्कृति-प्रेम और ऐसे ही कई विषयों पर दिनकर की कविताएँ हिंदी कविता की श्रेष्ठ उपलब्धि के रूप में स्वीकृत हैं । दिनकर ने प्रबंध, मुक्तक, गीत-प्रगीत आदि अनेक काव्य-शैलियों में रचनाएँ की । उनकी कविताओं का पहला आकर्षण उसकी स्पष्टता और सहजता है । इसी गुण के कारण उनकी कविताओं को प्रशंसनीय लोकप्रियता मिली । उनकी कविताएँ अपने पहले पाठ के साथ ही गहरा प्रभाव छोड़ती हैं । उनकी रचनाओं का स्वर कभी भी ढका, दबा या बुझा हुआ नहीं रहा । वे अपने स्वर से सुनियोजित मौन को तोड़ते हैं और मौन की संभावनाओं को भी ।

दिनकर का गद्य लेखन हिंदी के वैचारिक गद्य की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में सर्वस्वीकृत है । इतिहास, दर्शन, समाज, संस्कृति, राजनीति, साहित्यिक आलोचना इन सभी विषयों पर लिखते हुए उनकी वैचारिक प्रखरता, स्पष्टता और मानवीय दृष्टि से परिचय होता है । उनका गद्य उनकी काव्य-भाषा के अनुरूप ही ओजयुक्त, प्रांजल और अर्थगर्भ है ।

दिनकरजी का निधन 24 अप्रैल 1974 को हुआ ।

10.2 कविता का अर्थ

ढीली करो धनुष की डोरी, तरकस की कस खोलो,
किसने कहा, युद्ध की बेला गई, शांति से बोलो ?
किसने कहा, और मत बेधो हृदय बह्नि के शर से,
भरो भुवन का अंग कुसुम से, कुंकुम से, केसर से ?
कुंकुम ? लेपूँ किसे ? सुनाऊँ किसको कोमल गान,
तड़प रहा आँखों के आगे भूखा हिन्दुस्तान ।

फूलों की रंगीन लहर पर, ओ उतराने वाले,
ओ रेशमी नगर के वासी! ओ छवि के मतवाले !
सकल देश में हालाहल है, दिल्ली में हाला है,
दिल्ली में रौशनी, शेष भारत में अँधियाला है ।
मखमल के पर्दों के बाहर, फूलों के उस पार,
ज्यों-का-त्यों है खड़ा आज भी, मरघट-सा संसार ।

वह संसार जहाँ पर पहुँची अब तक नहीं किरण है,
जहाँ क्षितिज है शून्य, अभी तब अंबर तिमिर-वरण है ।
देख जहाँ का दृश्य आज भी अंतस्तल हिलता है,
माँ को लज्जा-वसन और शिशु को न क्षीर मिलता है ।
पूछ रहा है जहाँ चकित हो जन-जन देख अकाज,
सात वर्ष हो गए, राह में अटका कहाँ स्वराज ?

अटका कहाँ स्वराज? बोल दिल्ली! तू क्या कहती है ?
तू रानी बन गई, वेदना जनता क्यों सहती है ?
सबके भाग दबा रक्खे हैं, किसने अपने कर में ?
उतरी थी जो विभा, हुई बंदिनी, बता, किस घर में ?
समर शेष है, यह प्रकाश बंदी-गृह से छूटेगा,
और नहीं तो तुझ पर पापिन ! महाव्रज टूटेगा ।
समर शेष है, इस स्वराज्य को सत्य बनाना होगा,
जिसका है यह न्यास, उसे सत्वर पहुँचाना होगा ।

धारा के मग में अनेक पर्वत जो खड़े हुए हैं,
गंगा का पथ रोक इंद्र के गज जो अड़े हुए हैं ।
कह दो उनसे, झुके अगर तो जग में यश पाएँगे,
कड़े रहे तो ऐरावत पत्तों-से बह जाएँगे ।
समर शेष है, जनगंगा को खुलकर लहराने दो,
शिखरों को डूबने और मुकुटों को बह जाने दो ।
पथरीली, ऊँची जमीन है? तो उसको तोड़ेंगे,
समतल पाटे बिना समर की भूमि नहीं छोड़ेंगे ।
समर शेष है, चलो ज्योतियों के बरसाते तीर,
खंड-खंड हो गिरे विषमता की काली जंजीर ।
समर शेष है, अभी मनुज-भक्षी हुंकार रहे हैं,
गाँधी का पी रुधिर जवाहर पर फुँकार रहे हैं ।
समर शेष है, अहंकार इनका हरना बाकी है,
वृक को दंतहीन, अहि को निर्विष करना बाकी है ।
समर शेष है, शपथ धर्म की, लाना है वह काल,
विचारें अभय देश में गाँधी और जवाहर लाल ।
तिमिर-पुत्र थे दस्यु कहीं कोई दुष्कांड रचें ना,
सावधान, हो खड़ी देश भर में गाँधी की सेना ।
बलि देकर भी बली ! स्नेह का मृदु व्रत साधो रे !
मंदिर औ' मस्जिद, दोनों पर एक तार बाँधो रे !
समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध,
जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध ।

अर्थ : दिनकर इस कविता में आजादी के अधूरे लक्ष्यों पर टिप्पणी करते हैं । वे इस लक्ष्य की पूर्ति तक संघर्ष की आवश्यकता महसूस करते हैं । वे कहते हैं कि शांति की वेला अभी नहीं आई है । संघर्ष के दिन अभी बाकी हैं । युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ है । धनुष की डोरी ढीली करने और तरकस के कस को खोलने का समय अभी नहीं आया है । किसने कह दिया कि युद्ध समाप्त हो गया है । संघर्ष का अध्याय समाप्त हो गया है । इसलिए हुंकार न करो, शांति से बोलो, यह किसने कह दिया । यह किसने कह दिया कि अग्निवाण चलाने की घड़ी चली गई, हृदय को अब इनसे नहीं बेधना है । और, यह किसने कह दिया कि अपने घरों को फूलों से सजाओ, वहाँ कुमकुम बिखेरो, केसर से लेपो; यह समय अभी नहीं आया है । कुमकुम किसे लेपा जाए, कोमल गान किसे सुनाया जाए जबकि मेरी आँखों के आगे हिंदुस्तान भूख से तड़पता नजर आ रहा है । अतः अभी खुशियाँ मनाने की घड़ी नहीं आई है । संघर्ष अभी शेष है । जबतक भारत की भूख न मिटेगी, इसकी समस्याएँ दूर न होगी, समर चलता रहेगा ।

देश को आजादी भले मिल गई हो, पर यह आजादी दिल्ली तक ही सिमट कर रह गई है । कुछ लोगों के हिस्से में आजादी की समूची सुविधाएँ आकर जमा हो गई हैं । कैद हो गई हैं । जो फूलों के सौंदर्य में विचरण करते हैं, जो रेशमी नगर में रहते हैं, जो राजधानियों में विराजते हैं, जो सुंदर-सुंदर चेहरे देखना चाहते हैं, क्या उन्हें इस देश की सचाई का पता नहीं है । क्या यह बात उन्हें मालूम नहीं है कि समूचे भारत में हालाहल है, विष है, जीवन कष्टकर है । यह कैसी स्थिति है कि पूरा देश कष्ट में है और दिल्ली में आनंद मनाया जा रहा है । एक ओर विष है दूसरी ओर हाला है । यह कैसी विडंबना है कि दिल्ली रोशनी से नहाती है और समूचा

देश अँधकार में जीने को बाध्य है । सबकुछ दिल्ली में आकर सिमट गया है । दिल्लीवाले यह क्यों नहीं देखते हैं कि दिल्ली के बाहर भारत कैसा है । उनके मखमल के पर्दों और फूलों की सेज से इतर हिंदुस्तान कैसा है । हिंदुस्तान की असल तस्वीर कैसी है, वे क्यों नहीं देखते । उनके पास रंगीनी है जबकि पूरा भारत मरघट बना हुआ है । जीवन के लक्षण कहीं भी नहीं है । देश आज भी वहीं दिखाई दे रहा है जहाँ वर्षों पहले था । फिर इस आजादी के क्या माने हैं ?

दिनकर अपने प्रश्नों से दिल्ली यानी दिल्ली की सत्ता को घेरते हैं । कहते हैं, आजादी की रोशनी दिल्ली में ही कैद होकर रह गई है । दिल्ली से बाहर केवल अँधकार ही है । देश की हालत देख कलेजा काँप जाता है । बच्चे को दूध नहीं मिल रहा, वह भूख से पीड़ित है, तो दूसरी ओर माँ की देह पर कपड़े नहीं हैं । उसकी लज्जा कैसे बचे । इस मुल्क की जनता बेरोजगार है, वह पूछ रही है कि आजादी के सात वर्ष हो गए पर हमारा स्वराज कहाँ अटक गया । हम तक क्यों नहीं पहुँच पाया है । क्या वह राह भूल गया है ।

दिल्ली, तुम्हें इस सवाल का जवाब देना ही होगा कि स्वराज कहाँ अटक गया । किन लोगों ने इसे रोक लिया और देश की करोड़ों-करोड़ जनता तक यह क्यों नहीं पहुँच पाया । दिल्ली तुम्हें देश की सेवा करनी चाहिए थी, पर तुम तो रानी बन गई हो । जनता वेदना सह रही है और तुम उससे अनभिज्ञ हो । तुम्हें जनता के दुखों का कारण बताना ही होगा । वह कौन है जिसने सबके हिस्से की खुशी कैद कर रखी है, अपने घर में सबके हिस्से को दबा रखा है । दिल्ली, तुम्हें यह जवाब देना ही होगा कि आजादी की चाँदनी किसके घर में वंदिनी बना ली गई है । उसे किसने अपने पास रोक रखा है । ऐ दिल्ली, चेत जाओ, युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ है । जबतक यह प्रकाश देश की करोड़ों-करोड़ जनता तक नहीं पहुँचेगा तब तक समर चलता रहेगा । जिसने भी इसे अपने पास कैद कर रखा है, इसके मार्ग को रोक रखा है उसके विरुद्ध समर होना निश्चित है । ऐ दिल्ली, सुन लो, ये अधिक दिन तक ऐसा नहीं कर पाएँगे । ये बदल जाएँ तो बेहतर है । अन्यथा, जनता के क्रोध का सामना तुम्हें करना होगा । यह स्थिति न बदली तो जन-विप्लव निश्चित है । और, वह विप्लव तुम्हारे चरित्र को बदल डालेगा ।

आजादी के उद्देश्य अभी अधूरे हैं, हमारा समर अभी शेष है । स्वराज्य को हमें उसके सच्चे अर्थ तक पहुँचाना है । उसके उद्देश्यों को साकार करना है । कोटि-कोटि जनता की दशा में बदलाव लाना है । जो इस कार्य में बाधक बनेंगे, बदलाव की इस धारा को रोकना चाहेंगे; वे चाहे पर्वत ही क्यों न हों और उनकी संख्या अनगिनत ही क्यों न हों, ऐ दिल्ली ! उनसे कह दो उनका भला इसी में है कि वे झुक जाएँ और जनता की इच्छा का सम्मान करें । जनशक्ति को पहचान लें । चाहे वे कितने भी बड़े क्यों न हो, जनशक्ति के समक्ष छोटे पड़ जाएँगे । ऐ दिल्ली, इंद्र के ऐरावत को कह दो कि वह हट जाए, इस गंगा का रास्ता रोकने का प्रयास न करे, अन्यथा वह पत्तों की तरह बह जाएगा । उसका नामलेवा कोई नहीं बचेगा ।

समर अभी शेष है । जनगंगा को खुलकर लहराने दो । जनशक्ति का प्रदर्शन हो जाने दो । बड़े-बड़े शिखर, बड़े-बड़े सत्ता केंद्र, बड़े-बड़े मठाधीश, बड़ी-बड़ी शक्तियाँ इस जनगंगा में डूब जाएँगी । यदि मार्ग में पथरीली और उँची जमीन आएगी, कठिनाइयाँ आएँगी, संघर्ष पथ पर समस्याएँ मिलेंगी तो हम उससे पीछे नहीं हटेंगे । हम इस समर-क्षेत्र को तब तक नहीं छोड़ेंगे जब तक भारत में समानता न ला दें । गैर-बराबरी समाप्त न कर दें । अमीरी-गरीबी की खाई न पाट दें । दिनकर निमंत्रण देते हैं कि इस संघर्ष पथ पर तब तक चलते चलो जब तक कि विषमता समाप्त न हो जाए । जिस विषमता ने देश की असंख्य जनता को बेड़ियों में बाँध रखा है, वह जब तक टुकड़े-टुकड़े न हो जाए तब तक संघर्ष करते रहो ।

समर अभी शेष है । देश की करोड़ों जनता का हक मारनेवाले भी हुँकार रहे हैं । अपनी ओर से वे भी समर की तैयारी में लग गए हैं । जनता का शोषण करने वाले अधिकारों की माँग कर रही जनता पर फुफकार रहे हैं । वे इन्हें भयभीत कर देना चाहते हैं । गाँधी को उन्होंने मार डाला अब जवाहरलाल के रूप में हमारी बची उम्मीदों को भी खत्म कर देना चाहते हैं । लेकिन हमें उनके इस अहंकार को चूर-चूर कर देना है । उनके दर्प को जमीन दिखा देना है । वे तो सियार हैं, शेर का भेस बनाते हैं । इन सर्पों को हमें विषहीन करना ही है । हम धर्म की शपथ लेते हैं कि देश में वह समय लेकर आएँगे ताकि गाँधी और जवाहरलाल निर्भय घूम सकें । हम वह दिन लाएँगे जब गाँधी और जवाहरलाल के विचारों की कोई हत्या नहीं कर पाएगा । उनके सपनों के मुताबिक देश में हर ओर बराबरी होगी, शोषण न होगा ।

शत्रुपक्ष स्वतंत्रता के प्रकाश को अपने घरों में रोके हुए हैं, वे बहुत चालाक और घाघ हैं । हमें सावधान रहना होगा ताकि इनकी चाल में न फँसे और उनके दुष्चक्र को काट सकें । हमें अपनी लड़ाई हिंसा के रास्ते नहीं लड़नी है । हम गाँधी की सेना हैं । गाँधी

के बताए रास्ते पर ही हमें आगे बढ़ना है । सत्य और अहिंसा ही हमारा अस्त्र होगा । हम अपने त्याग से अपना बल प्रदर्शित करेंगे । अपने संघर्ष में अपना बल दिखाएँगे । हम किसी से घृणा नहीं करनी है । सबसे स्नेह जोड़ना है । विपरीत से विपरीत चीजों जैसे मंदिर-मस्जिद सबको स्नेह के एक धागे से बाँधेंगे ।

अभी समर शेष है । उद्देश्य अधूरे हैं । इस समर में हम सभी को अपना योग देना है । देश की दुरवस्था का दोषी केवल वही नहीं है जो शोषक है, जो बहेलिया है और जनता की हकमारी करता है । बल्कि वह भी दोषी है जो इन चीजों को तटस्थ होकर देखता रहता है । इन चीजों के खिलाफ आवाज नहीं उठाता है । जो यह सोचता रहता है कि इस शोषण और अत्याचार से वह अप्रभावित है । उसपर इसका कोई असर नहीं होनेवाला है । इस प्रवृत्ति को छोड़कर हमें 'स्वराज' के समर में तत्पर हो जाना है ।

10.3 कविता की विशेषताएँ

दिनकर उत्तरछायावादी काव्यधारा के कवि हैं । उत्साह, आवेग और जीवनधर्मिता इस काव्यधारा की प्रमुख विशेषताएँ हैं । उत्तरछायावाद का समय बीसवीं शताब्दी के चौथे और पाँचवें दशक का है । इस धारा के कवि एक ओर गुलामी से मुक्ति चाहते थे तो दूसरी ओर समाज में ठोस परिवर्तन भी चाहते थे । दिनकर, भगवतीचरण वर्मा, बच्चन, नेपाली, आरसी प्रसाद सिंह आदि इसी काव्यधारा के प्रमुख कवि हैं । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात देश की स्थिति और गति ने इन्हें निराश किया । आजादी के सपने धूमिल होते दिखाई पड़ने लगे । दिनकर की यह कविता देश की इस स्थिति का रचनात्मक प्रतिकार करती है । इस कविता में कवि ने गैर बराबरी और शोषण के सभी संस्थानों को चुनौती दी है । दिनकर देश की दशा देखकर उद्वेलित हैं; उन्हें लगता है कि हमने जिस आजादी के लिए संघर्ष किया था उसके लक्ष्य पूरे नहीं हुए हैं । समाज में एक वर्ग ऐसा है जिसने आजादी की किरणों को अपने तक ही रोक लिया है । आजादी से मिलनेवाले लाभों से वह फल-फूल रहा है जबकि देश की असंख्य जनता अभी भी भूख, गरीबी और गैरबराबरी से जूझ रही है । दिल्ली इनका ठिकाना है । देश की राजनीति देश की राजधानी तक सिमट कर रह गई है । गाँव की, पगडंडियों की, जंगलों की, गरीबों की, मजदूरों की, मेहनतकशों की चिंता करनेवाला देश में कहीं नहीं दिखाई पड़ता है । दिल्ली यानी देश की राज-व्यवस्था इनके ही पक्ष में खड़ी दिखाई पड़ती है । जनता के सुख-दुख से अधिक उसे इसी वर्ग की चिंता रहती है । दिनकर इस कविता में दिल्ली के इस चरित्र की आलोचना करते हैं । वे इस स्थिति में बदलाव के लिए संघर्ष की आवश्यकता महसूस करते हैं । ऐसे अनवरत संघर्ष की, जो देश में शोषण और असमानता के समाप्त होने तक चलता रहे । 'समर शेष है' दिनकर की एक अत्यंत प्रसिद्ध कविता है । जनता के जागरण, संगठन और सशक्तीकरण के लिए ये पंक्तियाँ मार्गदर्शक का कार्य करती हैं :

समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध,
जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध ।

दिनकर का आह्वान यहाँ विशेषकर मध्यवर्ग से है जो अपनी सुविधाओं के मोह में, अपने लाभ की चिंताओं में संघर्ष की किसी भी स्थिति से दूर रहता है । वह व्यवस्था में बदलाव चाहता है पर स्वयं संघर्ष नहीं करना चाहता । दिनकर उसकी इस तटस्थ वृत्ति की आलोचना करते हैं ।

स्पष्टता, एकार्थकता और संप्रेषणीयता दिनकर की काव्यभाषा की विशेषताएँ हैं । वे ओज और उद्‌बोधन के कवि हैं । वे कविता के माध्यम से पाठकों से संवाद स्थापित कर लेने में सिद्धस्थ हैं । उनकी काव्यभाषा प्रवाहमयी है, यह अपने साथ पाठक को खींच ले जाती है । प्रस्तुत कविता में ये विशेषताएँ देखी जा सकती हैं ।

10.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) दिनकर का कवि परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(ख) 'समर शेष है' में कवि ने क्या कहना चाहा है ।

(ग) अर्थ लिखें–

समर शेष है, नहीं पाप का भागी केवल व्याध,
जो तटस्थ हैं, समय लिखेगा उनका भी अपराध ।

(घ) अर्थ लिखें –

फूलों की रंगीन लहर पर, ओ उतराने वाले,
ओ रेशमी नगर के वासी! ओ छवि के मतवाले !
सकल देश में हालाहल है, दिल्ली में हाला है,
दिल्ली में रौशनी, शेष भारत में अँधियाला है ।
मखमल के पर्दों के बाहर, फूलों के उस पार,
ज्यों-का-त्यों है खड़ा आज भी, मरघट-सा संसार ।

■■■

इस पार उस पार

पाठ संरचना

11.0 उद्देश्य
11.1 परिचय
11.2 कविता का सारांश
11.3 कविता की विशेषताएँ
11.4 अभ्यास के प्रश्न

11.1 उद्देश्य

'इस पास-उस पार' हरिवंशराय बच्चन की रचना है । यह एक गीत है । प्रस्तुत इकाई इसी गीत पर केंद्रित है । इस इकाई का उद्देश्य हरिवंशराय बच्चन के कवि-व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त करते हुए प्रस्तुत गीत के अर्थ एवं विशेषताओं से अवगत होना है ।

11.2 कवि परिचय

हरिवंशराय बच्चन का मूल नाम हरिवंश श्रीवास्तव था । उनका जन्म 27 नवंबर 1907 को इलाहाबाद में हुआ था । उनकी आरंभिक शिक्षा वहीं कायस्थ पाठशाला में हुई । 1929 में उन्होंने बी०ए० की परीक्षा पास की और एम०ए० में प्रवेश लिया । देश में असहयोग आंदोलन छिड़ने के कारण उनकी शिक्षा अधूरी रही । उस समय वे वहीं एक विद्यालय में अध्यापक के रूप में अपनी सेवा देने लगे । इलाहाबाद में रहते हुए वे कई लेखकों-कवियों के संपर्क में आए और 'चाँद', 'भविष्य', 'अभ्युदय' जैसी पत्रिकाओं से भी जुड़े । तदंतर इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उन्होंनें 1938 में अंग्रेजी विषय से एम०ए० की डिग्री प्राप्त की । इलाहाबाद विश्वविद्यालय क अंग्रजी विभाग में 1941 से 1952 तक एक अध्यापक के रूप में कार्य करने के बाद वे 1952 में इंगलैंड गए जहाँ कैंब्रिज विश्वविद्यालय से उन्होंने अंग्रेजी के कवि डब्लू०बी०यीट्स पर पीएच० डी० की उपाधि प्राप्त की ।

बच्चन का पहला संकलन 'तेरा हार' है । यह 1932 में प्रकाशित हुआ था । 'मधुशाला' उनकी सर्वाधिक ख्यात रचना है । यह 1935 में प्रकाशित हुई थी । यह हिंदी की सर्वाधिक लोकप्रिय रचनाओं में से एक है । बच्चन की अन्य रचनाएँ हैं – मधुबाला, मधुकलश, निशा निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल अंतर, सतरंगिनी, मिलन यामिनी, प्रणय-पत्रिका, हलाहल, आरती के अंगारे, बुद्ध और नाचघर, दो चट्टानें, त्रिभंगिमा, बहुत दिन बीते, जाल समेटा आदि । बच्चन का गद्य भी यथेष्ट लोकप्रिय है । उनकी आत्मकथा चार खंडों में प्रकाशित है – क्या भूलूँ क्या याद करूँ, नीड़ का निर्माण फिर, बसेरे से दूर, प्रवासी की डायरी । एक अनुवादक के रूप में भी उन्होंने पर्याप्त सफलता प्राप्त की । उनके द्वारा अनूदित रचनाएँ हैं – उमर खय्याम की मधुशाला, चौंसठ रूसी कविताएँ, जनगीता, खय्याम की रुबाइयाँ, ओथेलो और मैकबेथ आदि ।

'दो चट्टानें' के लिए बच्चन को 1968 में साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ था । इसी वर्ष उन्हें 'चौसठ रूसी कविताएँ' के लिए सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार दिया गया । बच्चन को एफ्रो एशियाई सम्मेलन का लोटस अवार्ड और बिरला फाउंडेशन का सरस्वती सम्मान भी मिला । वे राज्यसभा के मनोनीत सदस्य भी रहे ।

बच्चन उत्तरछायावाद के प्रतिनिधि कवि हैं । इस काव्यधारा की उपलब्धियाँ और सीमाएँ दोनों ही बच्चन के काव्य में मौजूद हैं । आत्माभिव्यक्ति, स्वतंत्रता, रूढ़ियों और गलित परंपराओं का अस्वीकार, आवेग और मस्ती, जीवन के प्रति आस्था, प्रेम और सौंदर्य इस काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं । इस काव्यधारा में आत्मसंकोच, रहस्यात्मकता और वायवीयता नहीं है । यह काव्यधारा आकाश और अंतरिक्ष की बातें नहीं करती है, बल्कि धरती और उसके सुख-दुख को ही अपना विषय बनाती है ।

उत्तरछायावादी काव्यधारा राष्ट्रीय पराधीनता और निराशा के बीच चेतन की स्वतंत्रता और उमंग का उत्सव मनाती है । उत्तरछायावादी कवि जीवन की समस्याओं से भागते नहीं है बल्कि उसका सामना करने में अपने जीवन और कविकर्म की सार्थकता तलाशते हैं । हरिवंशराय बच्चन अपनी रचनाओं के जरिए समाज को नवीन और उत्साही बनाने का प्रयास करते हैं । 'मधुशाला' उनके आरंभिक संकलनों में से है । इस रचना ने उन्हें ख्याति और कुख्याति दोनों दिलाई । उनपर 'हाला' के दर्शन के प्रचारक होने का आरोप लगा । जबकि 'मधुशाला' जीवन में संघर्ष, उल्लास, परिवर्तन और आपसदारी का घोषक है :

मुसलमान ओर हिंदू दो एक मगर उनका प्याला
एक मगर उनका मदिरालय एक मगर उनकी हाला
दोनों रहते एक न जबतक मस्जिद मंदिर में जाते
बैर कराते मंदिर मस्जिद मेल कराती मधुशाला ।

'मधुकलश' में बच्चन ने लिखा है; 'वृद्ध जग को क्यों अखरती है क्षणिक मेरी जवानी ।' वे जीर्ण व्यवस्था को अस्वीकारते हैं और अपने अनुभव की सचाई को आधार बनाकर सृजन पथ पर अग्रसर होते हैं ।

'निशा निमंत्रण' को बच्चन की काव्य यात्रा में निर्णायक मोड़ के रूप में स्वीकारा जाता है । उनकी काव्य यात्रा यहाँ से अधिक प्रशांत और चिंतनमय हो जाती है ।

सहजता और संवेदनशीलता बच्चन के काव्य की प्राथमिक पहचान है । उनकी काव्यभाषा सीधी और सादी है । वह सहज संप्रेष्य है ।

बच्चन का निधन 18 जनवरी 2003 को हुआ ।

11.2 कविता का अर्थ

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !
यह चाँद उदित होकर नभ में कुछ ताप मिटाता जीवन का,
लहरा-लहरा यह शाखाएँ कुछ शोक भुला देतीं मन का,
कल मुरझानेवाली कलियाँ हँसकर कहतीं हैं, मग्न रहा,
बुलबुल तरु की फुनगी पर से संदेश सुनाती यौवन का,
तुम देकर मदिरा के प्याले मेरा मन बहला देती हो,
उस पार मुझे बहलाने का उपचार न जाने क्या होगा !
इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !
जग में रस की नदियाँ बहतीं, रसना दो बूँदें पाती है,
जीवन की झिलमिल-सी झाँकी नयनों के आगे आती है ।
स्वर-तालमयी वीणा बजती, मिलती है बस झंकार मुझे,
मेरे सुमनों की गंध कहीं यह वायु उड़ा ले जाती है;
ऐसा सुनता, उस पार, प्रिये, ये साधन भी छिन जाएँगे;
तब मानव की चेतनता का आधार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

प्याला है पर पी पाएँगे, है ज्ञात नहीं इतना हमको,

इस पार नियति ने भेजा है असमर्थ बना कितना हमको;

कहनेवाले पर, कहते हैं हम कर्मों से स्वाधीन सदा;

करनेवालों की परवशता है ज्ञात किसे, जितनी हमको;

कह तो सकते हैं, कहकर ही कुछ दिल हल्का कर लेते हैं !

उस पार अभागे मानव का अधिकार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

कुछ भी न किया था जब उसका, उसने पथ में काँटे बोये,

वे भार दिये कंधों पर जो रो-रोकर हमने ढोये;

महलों के सपनों के भीतर जर्जर खंडहर का सत्य भरा,

उर में ऐसी हलचल भर दी, दो रात न हम सुख से सोये;

अब तो हम अपने जीवन भर उस क्रूर कठिन को कोस चुके;

उस पार नियति का मानव से व्यवहार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

संसृति के जीवन में, सुभगे, ऐसी भी घड़ियाँ आएँगी,

जब निज प्रियतम का शव, रजनी तम की चादर से ढक देगी,

तब रवि-शशि-पोषित यह पृथ्वी कितने दिन खैर मनाएगी;

जब इस लंबे-चौड़े जग का अस्तित्व न रहने पाएगा,

तब हम दोनों का नन्हा-सा संसार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

ऐसा चिर पतझड़ आएगा कोयल न कुहुक फिर पाएगी,

बुलबुल न अँधेरे में गा-गा जीवन की ज्योति जगाएगी;

अगणित मृदु-नव पल्लव के स्वर 'मरमर' न सुने फिर जाएँगे,

अलि-अवलि कलि-दल पर गुंजन करने के हेतु न आएगी;

जब इतनी रसमय ध्वनियों का अवसान, प्रिये, हो जाएगा,

तब शुष्क हमारे कंठों का उद्‌गार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

सुन काल प्रबल का गुरु-गर्जन निर्झरणी भूलेगी नर्तन,

निर्झर भूलेगा निज टलमल, सरिता अपना 'कलकल' गायन;

वह गायक-नायक सिंधु कहीं चुप हो छिप जाना चाहेगा,

मुँह खोल खड़े रह जाएँगे गंधर्व, अप्सरा, किन्नरगण;

संगीत सजीव हुआ जिसमें, जब मौन वही हो जाएँगे,

तब, प्राण, तुम्हारी तंत्री का जड़ तार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

उतरे इन आँखों के आगे जो हार चमेली ने पहने

वह छीन रहा, देखो, माली सुकुमार लताओं के गहने;

दो दिन में खींची जाएगी ऊषा की सारी सिंदूरी,

पट इंद्रधनुष का सतरंगा पाएगा कितने दिन रहने;

जब मूर्तिमती सत्ताओं की शोभा-सुषमा लुट जाएगी,

तब कवि के कल्पित स्वप्नों का शृंगार न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

दृग देख जहाँ तक पाते हैं, तम का सागर लहराता है,

फिर भी उस पार खड़ा कोई हम सबको खींच बुलाता है;

मैं आज चला, तुम आओगी कल, परसों सब संगी-साथी,

दुनिया रोती-धोती रहती, जिसको जाना है, जाता है;

मेरा तो होता मन डग-मग तट पर के ही हलकोरों से,

जब मैं एकाकी पहुँचूँगा मँझधार, न जाने क्या होगा !

इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

अर्थ : 'इस पार-उस पार' कविता यह बताती है कि 'इस पार' जीवन है यह तो निश्चित है; 'उस पार' क्या होगा; कौन जाने । इस पार जीवन की खुशियाँ हैं, आनंद हैं, निश्चित रूप से कष्ट और दुख भी हैं; उस पार क्या होगा; कौन जानता है ।

बच्चन कहते हैं, इस पार मेरा प्रिय है, प्रेम है, जीवन और उसकी मधुरता है, उस पार क्या होगा, कौन जानता है । इस पार चाँद है जो अपने उगने के साथ जीवन की तपिश को कुछ कम कर देता है । कष्टों से मन को तनिक बहला देता है; उस पार यह चाँद होगा, यह कौन जानता है । इस पार पेड़ों की शाखाएँ हैं, लहराती हुई ये डालियाँ दुख को कम कर देती हैं । उस पार ये होंगे कौन जानता है । इस ओर कलियाँ हैं, जो कल मुरझा जाएँगी, जिनका जीवन आजभर का है, पर अपने इस छोटे से जीवन में भी वे यही कहती हैं कि मगन रहो, उदास न हो । अपने जीवन को जिओ । उस पार की बात कौन बताए ! वृक्षों की फुनगी पर बैठी बुलबुल भी यौवन का संदेश देती है । वह अपनी आवाज से उदासी हर लेती है और जीवन की रागिनी बिखेड़ देती है । और प्रिय, तुम अपनी प्रेम-मदिरा से मेरा मन बहला देती हो । ये सभी चीजें यहाँ हैं, उस पार क्या होगा, कौन जानता है ।

इस लोक में जीवन है, रस है, आनंद है । रस की नदियों में से दो बूँदें मेरे हिस्से भी आ जाती हैं । सबकुछ तो नहीं, पर कुछ खुशियाँ मुझे भी मिल जाती हैं । जीवन की बहुरंगी छवियाँ मेरी आँखों के सामने से गुजरती रहती हैं । इस पार वीणा के स्वर गूँजते रहते हैं, हालांकि मेरे हिस्से बस झंकार आते हैं । जो फूल मेरे होते हैं हवा उसकी खुशबू उड़ा कर ले जाती है । मुझे इसका मलाल नहीं है । उस पार के बारे में तो सुना है कि ये चीजें भी छिन जाएँगी । वहाँ तो रस की दो बूँदें, वीणा की झंकार या खूशबू उड़े फूल भी मेरे पास न होंगे । बताओ, वैसी स्थिति में मानव किस प्रकार चेतनशील रहेगा । यहाँ कुछ अभाव हैं, पर तुम हो, तुम्हारा प्रेम है, जीवन है, उस पार कौन जाने क्या होगा ।

कहने वाले कहते हैं कि उस पार सोमरस का प्याला है, आनंद है; और नियति ने इस पार हमें कितना असमर्थ बनाकर भेजा है । पर यह कौन बताएगा कि हम उस सोमरस और आनंद का प्याला पी भी पाएँगे । कहनेवाले कहते हैं कि उस लोक में कोई काम नहीं करना पड़ता है, पर वास्तविकता किसे ज्ञात है । इस लोक में कर्मों के बंधन हैं, परवशता भी है; पर इतनी स्वतंत्रता तो है कि अपनी पीड़ा कहकर मन हल्का कर लेते हैं । कौन जाने उस पार इतनी स्वतंत्रता मिलेगी या नहीं ।

नियति का हमने कुछ भी न बिगाड़ा था, फिर भी उसने हमारे रास्ते में काँटे बोए; हमारे कंधों पर कर्त्तव्यों के इतने भार दिए जिन्हें हमने किसी तरह ढोया, उनसे मुँह न मोड़ा, चाहे कितने भी कष्ट मिले उस कर्त्तव्य भार को स्वीकारा । इस लोक का चेहरा और

उस चेहरे की सचाई भिन्न है । जो महल दिखते हैं उनकी सचाई जर्जर होती है । उनकी चमक फीकी होती है । इस लोक में जीवन भर हलचल मची रहती है । शांति का एक क्षण हमें नसीब नहीं होता है । एक रात भी हम सुख से सो नहीं पाते । हम जीवनभर नियति की क्रूरता को कोसते रहते हैं । इस पार का यह जीवन निस्संदेह आसान नहीं है, पर कौन जाने नियति उस पार मानव से कैसा व्यवहार करेगी । उस पार का सच क्या है, कौन जानता है !

प्रिय, इस सृष्टि की यात्रा में ऐसा भी समय आएगा जब सबकुछ नष्ट और समाप्त हो जाएगा । अंधकार को हरनेवाली सूर्य की किरणें अंधकार को भेद नहीं पाएँगी, उसी में छिप जाएँगी । चंद्रमा भी रात के अंधकार में ढक जाएगा, चाँदनी का कहीं नामों-निशान नहीं होगा । सूर्य और चंद्रमा से ही इस पृथ्वी पर जीवन है, पर जब वे ही न उगेंगे तो यहाँ जीवन का अस्तित्व कितने दिन बच पाएगा । यह पृथ्वी कितने दिन रह पाएगी । जगत का अस्तित्व ही न बचेगा । प्रिय, तब मेरी और तुम्हारी यह सलोनी दुनिया भी समाप्त हो जाएगी ।

इस पृथ्वी पर जीवन नहीं होगा, वसंत के लक्षण नहीं होंगे, केवल पतझड़ होगा, ऐसा दुष्काल होगा कि कोयल की आवाज नहीं सुनाई देगी; अंधेरे में गा-गा कर अपनी आवाज से सबको जगानेवाली, जीवन का संदेश देनेवाली बुलबुल भी चुप हो जाएगी । हम नए-नए पत्तों के हवा में हिलने से पैदा हुए 'मरमर' के स्वर न सुन पाएँगे । कलियों पर गुंजन करने भ्रमरों का झुंड भी न आएगा । वह दिन आएगा, जब इतनी मधुर ध्वनियाँ चुप हो जाएँगी । सब शांत हो जाएँगे । यकीनन तब हमारे कंठों से दुख के ही उद्‌गार फुटेंगे ।

उस दुष्काल में मृत्यु ही चारों ओर व्याप्त होगा । जीवन के चिह्न कहीं न होंगे । तब निर्झरणी भी अपनी आवाज भूल जाएगी । निर्झर भी अपनी टलमल गति भूल जाएगा, नदियों का कलकल मौन हो जाएगा । समुद्र भी चुप हो कहीं छिप जाना चाहेगा । चारों ओर केवल मुर्दा शांति होगी । जीवन का संगीत कहीं भी न होगा । गंधर्व, अप्सरा, किन्नर सब चुप हो जाएँगे । हे प्रिय, उस वेला हमारे प्राणों का क्या मोल होगा ।

हे प्रिय, उस घड़ी कुछ भी न बचेगा । चमेली के हार न बचेंगे, फूलों की खूबसूरती न बचेगी । स्वयं माली या विधाता ही अपनी सर्जना को नष्ट करेगा । उषा का सिंदूरी सौंदर्य नष्ट हो जाएगा । इंद्रधनुष का सतरंगा रूप न बच पाएगा । रूप के सभी चिह्न मिट जाएँगे । बड़े-बड़े सत्ता केंद्रों का समूचा वैभव छिन जाएगा । कवि की कल्पना का तब क्या हश्र होगा, कौन जाने । वह भला किस प्रकार अपनी कल्पनाओं में सौंदर्य-राशि भर पाएगा ।

आँखें जहाँ तक देख पाएँगी, अँधकार ही अँधकार दिखाई पडेगा । जीवन के लक्षण कहीं भी दिखाई न देंगे । ऐसे में यह लग सकता है कि उस पार से कोई आमंत्रण दे रहा है, बुला रहा है । अपनी ओर खींच रहा है । प्रिय, वहाँ सभी जाएँगे । आज मैं, कल तुम, परसों संगी-साथी । दुनिया के नेह-नाते यहीं रह जाते हैं । जिसका जाना निश्चित होता है, वह चला ही जाता है । कोई उसे रोक नहीं पाता । सभी अपनी नियति भोगते हैं ।

प्रिय, दुनिया इसी तरह सोचती है । इसी तरह सोचने की सीख देती है । 'इस पार' की नश्वरता और 'उस पार' की चिरंतरता इसी तरह समझायी जाती है । पर, मैं इस तरह नहीं सोचता । 'उस पार' का आकर्षण लोगों को भरमाता है । मैं उस आकर्षण में नहीं बँधता । 'उस पार' की यात्रा का विचार भी मुझे स्वीकार्य नहीं है । मेरा मन तो तट पर से ही डगमग होने लगता है कि जब मैं मँझधार में होऊँगा, तब क्या जाने क्या हो जाए ! इसलिए, प्रिय ! मुझे 'उस पार' की यात्रा नहीं करनी । 'इस पार' की दुनिया ही मुझे प्रिय है । चाहे जितने कष्टों को झेलना पड़े, जो दुख हो; सब स्वीकार्य है । क्योंकि इस पार, तुम हो । तुम्हारा प्रेम है । उस पार क्या होगा, कौन जाने ।

11.3 कविता की विशेषताएँ

'इस पार-उस पार' हरिवंशराय बच्चन का प्रसिद्ध गीत है । बच्चन 'इस पार' के कवि हैं । वे जीवन की आस्तिकता और यथार्थता के कवि हैं । यह रचना जीवन में किसी रहस्य, गोपन या पारलौकिक सत्ता को नकारती है । मोक्ष, स्वर्ग या दूसरी दुनिया उनके सामने महत्त्वहीन है । जीवन को पूरेपन में स्वीकारते हुए वे इसकी कमनीय तस्वीर प्रस्तुत करते हैं । उत्तरछायावादी काव्यधारा और अपने युग-समय के अनुरूप वे जीवन को उत्साह और खुलेपन से स्वीकारते हैं । नियति से अधिक उन्हें अपने होने पर विश्वास है । और, यही विश्वास उनकी रचनाओं में चमकीली आस्था भर देता है । जीवन को उसके वर्त्तमान में जीने का अर्थ केवल भोगवाद और भौतिकता के पीछे भागना नहीं है । इसका एक दूसरा पक्ष भी है । यह पक्ष कर्मठता, सामाजिकता, आपसदारी और बराबरी का है । जीवन को उसके वर्त्तमान में जी लेने की इच्छा से जीवन में प्रेम को अपनाने और विकसने का आधार मिलता है । बच्चन ने इस गीत में जीवन

में दुखों की उपस्थिति से इंकार नहीं किया है । पर, वे मानते हैं कि ये दुख 'उस पार' के रहस्य से कहीं अधिक सहज हैं । इन्हें स्वीकारना अधिक आसान है, बनिस्पत दूसरे लोक की कल्पना से ।

जीवन में तमाम विपरीत स्थितियाँ स्वीकार्य हैं, अगर प्रिय का सामीप्य हो । यह सामीप्य अभावों की पीड़ा कम कर देता है । दुख के संघातों को हल्का कर देता है और सदैव ही जीवन जीने के लिए उत्साही बनाए रखता है । इस तरह यह गीत केवल जीवन के स्वीकार की ही उद्घोषणा नहीं है बल्कि जीवन में प्रेम की अनिवार्यता की भी व्याख्या करता है । अगर प्रेम न हो तो जीवन अंधेरे पहाड़ सा हो जाएगा ।

'इस पार-उस पार' एक गीत है । गीत में भावना की एकात्मकता, तीव्रता, मार्मिकता, सादगी और स्पष्टता आवश्यक होती है । आत्माभिव्यक्ति इसकी मूल पहचान है । बच्चन के इस गीत में इन तत्वों की सहज पहचान की जा सकती है । बच्चन की रचनाओं में सदैव सादगी मिलती है । यह सादगी उनके लिए एक चुनौती थी । इसमें लाक्षणिकता के लिए स्थान नहीं था । संप्रेषणीयता इसकी पहली प्राथमिकता थी । बच्चन के इस गीत की भाषा बोलचाल के स्तर पर दिखाई देती है ।

11.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) बच्चन का कवि परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(ख) 'इस पार-उस पार' कविता का भावार्थ अपने लिखें ।

(ग) उत्तरछायावादी काव्यधारा की विशेषताओं का संक्षेप में परिचय दें ।

(घ) अर्थ लिखें–

दृग देख जहाँ तक पाते हैं, तम का सागर लहराता है,
फिर भी उस पार खड़ा कोई हम सबको खींच बुलाता है;
मैं आज चला, तुम आओगी कल, परसों सब संगी-साथी,
दुनिया रोती-धोती रहती, जिसको जाना है, जाता है;
मेरा तो होता मन डग-मग तट पर के ही हलकोरों से,
जब मैं एकाकी पहुँचूँगा मँझधार, न जाने क्या होगा !
इस पार, प्रिये, मधु है, तुम हो, उस पार न जाने क्या होगा !

■■■

कमल के फूल

पाठ संरचना

12.0 उद्देश्य
12.1 परिचय
12.2 कविता का सारांश
12.3 कविता की विशेषताएँ
12.4 अभ्यास के प्रश्न

12.1 उद्देश्य

'कमल के फूल' भवानीप्रसाद मिश्र की कविता है । यह इकाई इसी कविता पर केंद्रित है । इस इकाई का उद्देश्य भवानीप्रसाद मिश्र के कवि-व्यक्तित्व से परिचय प्राप्त करने के साथ-साथ प्रस्तुत कविता के अर्थ एवं विशेषताओं से अवगत होना है ।

12.1 कवि परिचय

भवानीप्रसाद मिश्र का जन्म 29 मार्च 1913 को तिगरिया गाँव (होशंगाबाद, मध्यप्रदेश) में हुआ था । सोहागपुर, होशंगाबाद, नरसिंहपुर और जबलपुर में उन्होंने अपनी पढ़ाई की । मिश्रजी 1932-1933 के आस-पास माखनलाल चतुर्वेदी के संपर्क में आए । माखनलाल चतुर्वेदी अपने पत्र 'कर्मवीर' में उनकी रचनाएँ बराबर प्रकाशित करते थे । 1935 में उन्होंने बी०ए० की परीक्षा पास की । इसके बाद वे गाँधीजी के विचारों के अनुरूप विद्यालय चलाने लगे । इसी क्रम में 1942 में वे अंग्रेजी सरकार द्वारा गिरफ्तार किए गए । जेल से वे 1945 में छुटे । जेल से छूटने के बाद वे वर्धा में शिक्षक हो गए । फिर राजभाषा प्रचार सभा में कार्य किया । आप मासिक पत्रिका 'कल्पना' और 'संपूर्ण गाँधी वाङ्मय' के संपादन कार्य तथा आकाशवाणी से भी जुड़े ।

भवानीबाबू की प्रमुख रचनाएँ हैं – गीतफरोश, चकित है दुख, गाँधी पंचशती, बुनी हुई रस्सी, खुशबू के शिलालेख, त्रिकाल संध्या, व्यक्तिगत, परिवर्तन जिए, तुम आते हो, फसलें और फूल, मानसरोवर दिन, संप्रति, तूस की आग, कालजयी आदि । उन्होंने बच्चों के लिए भी कविताएँ लिखीं । उनकी गद्य रचनाएँ हैं– जिन्होंने मुझे रचा है (संस्मरण), कुछ नीति और कुछ राजनीति (निबंध संग्रह) । उनकी रचनाएँ 'हंस' में भी प्रकाशित होती थीं । अज्ञेय ने उनकी कविताओं को 'दूसरा सप्तक' में सम्मिलित किया था ।

1972 में उन्हें 'बुनी हुई रस्सी' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया । उन्हें मिले अन्य सम्मानों में प्रमुख हैं - उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान का संस्थान पुरस्कार और मध्यप्रदेश शासन का शिखर सम्मान ।

भवानीप्रसाद मिश्र हिंदी जगत में 'भवानी भाई' के नाम से विख्यात थे । जो आत्मीयता और सीधाई इस संबोधन से व्यंजित होती है, वह उनके व्यक्तित्व और लेखन की मूल उपलब्धि है । वे किसी वाद या आंदोलन से नहीं जुड़े । उनकी एक प्रसिद्ध काव्य-पंक्ति है, "जिस तरह हम बोलते हैं उस तरह तू लिख और उसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख ।" उन्होंने अपनी कविता के लिए युगीन प्रचलन से भिन्न रास्ता चुना । यह रास्ता सहजता का था । किसी नारे या मुहावरे के बजाए अपने अनुभवों और लोक-जुड़ाव को उन्होंने अधिक सार्थक आधार माना । वे मानते थे कि शब्दों की सहजता और लोक से जुड़ाव दोनों एक दूसरे के पर्याय हैं । यदि शब्द सहज हैं तो यह लोक से जुड़े होने की सूचना देते हैं और यदि आप लोक से जुड़े हैं तो शब्दों की सहजता अपने आप संभव होते जाएगी ।

माखनलाल चतुर्वेदी ने मिश्रजी से कभी कहा था, "तुम्हारा आसान लिखना कहीं छुट न जाए.....ध्यान रखना, आसान लिखना ध्येय नहीं है, ध्येय लिखना है मन की बात, भीतर की बात, भीतर-से-भीतर की बात और वह इस तरह की कि न वह सूत्र हो, न भाष्य । जो मन में समा न सके उसे वाणी तक लाओ....कलम को जीभ मत बना देना ।" चतुर्वेदीजी की इस उक्ति में कवि-कर्म के लिए सीख थी और सहजता के खतरे की ओर संकेत भी । कहना न होगा, भवानीप्रसाद मिश्र की 'सहजता' अर्थ के महत्त्व को कम करने से नहीं उपजी है ।

मिश्रजी की रचनाधर्मिता का उत्स कोई पीड़ा, विरह या गूढ़ दर्शन नहीं है । वे कभी प्रकृति सौंदर्य के गीत गाते हैं तो कभी युगीन व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए मिलते हैं । कभी प्रिय के मनुहार में तन्मय दिखाई देते हैं तो कभी चिंतन के नए आयामों के बीच मिलते हैं । उनके कवि-व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य बताते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी ने लिखा है, "भवानीप्रसाद मिश्र का रंग कई दृष्टियों से अपने समकालीनों से अलग खुलता है । प्रगति-प्रयोग युग और नयी कविता के अधिकतर कवि वैचारिक दृष्टि से साम्यवाद और समाजवाद के अधिक निकट रहे तब भवानी भाई खुले रूप में अपनी निष्ठा गाँधी में व्यक्त करते थे । बोलचाल की भाषा और लय-विधान में भी उनका स्वर अलग सुन पड़ता है । कुल मिला कर कुछ पुराना-सा जँचता भवानी भाई का ठाट फरक दिखाई देगा, पर वे इसे लेकर एकदम सहज और अकुंठ भाव में दिखेंगे । प्रयोग की दृष्टि से न केवल उन्होंने बोलचाल की शब्दावली बल्कि इससे अधिक बोलचाल का लहजा भी चुना । एक ओर एकदम सहज गद्य का विन्यास, तो दूसरी ओर बड़े टनटनाते तुकों में छंद-विधान । और निष्ठा उनकी बराबर सहज-अकिंचन में रही जहाँ वे नयी कविता की भाव-भूमि के एकदम निकट होते हैं ।"

भवानीप्रसाद मिश्र का निधन 20 फरवरी 1985 को तिगरिया में हुआ ।

12.2 कविता का अर्थ

फूल लाया हूं कमल के ।
क्या करूँ इनका ?
पसारें आप आँचल,
छोड़ दूँ,
हो जाए जी हलका !

किंतु क्या होगा कमल के फूल का ?

कुछ नहीं होता
किसी की भूल का-
मेरी कि तेरी हो-
ये कमल के फूल केवल भूल हैं ।

धूल से आँचल भरूँ ना
गोद में इनके सम्हाले
मैं वजन इनके मरूँ ना ।

ये कमल के फूल
लेकिन मानसर के हैं,

इन्हें हूँ बीच से लाया
ना समझो तरी पर के हैं ।

भूल भी यदि है
अछूती भूल है ?
मानसर वाले कमल के फूल हैं ।

अर्थ : यह कविता एक प्रेम-कविता है । नायक और उसकी प्रिया के संवादों से बुनी यह रचना प्रेम में विश्वास और समर्पण दोनों की अकृत्रिम व्यंजना है ।

नायक अपनी प्रिया के लिए कमल के फूल लाता है । कमल के फूलों में उसका प्रेम समाया हुआ है । उसकी निष्ठा और समूची भावना उन फूलों में बस चुकी है । अपनी प्रिया को वह लाए हुए फूल भेंट करता है । उसका समर्पण है – कमल के फूल लाया हूँ । ले लो । स्वीकार लो । उसकी प्रिया बदले में एक प्रश्न उसकी ओर भेज देती है – इन फूलों का क्या करूँ । मनुहार के शब्दों में नायक कहता है– अपने आँचल पसार लो, इन्हें स्वीकार लो । तुम्हारे आँचल में इन्हें छोड़ देना चाहता हूँ । ताकि ये कहीं इतर न छिटक जाएं, मैले न हो जाएँ, और, इसी रूप में तुम तक पहुँच जाएँ । तुम्हारे आँचल में पहुँचकर इन्हें ठिकाना मिल जाएगा । तुम अपना आँचल पसार दो, मैं ये कमल उसमें छोड़ सकूँ; ताकि मेरा जी हल्का हो जाए ।

यह भावनाओं की यात्रा है । कमल के फूल यदि आँचल से पहले कहीं और रख दिए गए तो उनके होने का अर्थ खो जाएगा । इसलिए, आग्रह के स्वर में नायक कहता है अपना आँचल पसार दो । ये फूल जो मुझे बेचैन किए हैं, उन्हें स्वीकार लो । निर्णय तुम्हें करना है । ये फूल और यह समय, ये मेरे हृदय पर बहुत भारी पड़ रहे हैं । मेरे प्रेम को स्वीकार कर तुम मुझे भार मुक्त कर सकती हो ।

प्रिया नायक से फिर प्रश्न करती है, इन कमल के फूलों का क्या होगा । ये मेरे किस काम के । इनका क्या महत्त्व । किसी के प्रेम से कुछ नहीं होता । प्रेम भ्रम है । केवल भूल है । चाहे वह मेरी हो या तुम्हारी हो । ये कमल के फूल कुछ और नहीं, बस भूल हैं । इस भूल से अपना आँचल भर लूँ । इस भ्रम को अपने जीवन में जगह दे दूँ । और फिर हमेशा का बोझ ढोते रहूँ । इसकी इच्छा मुझे नहीं । इसके बोझ से मैं अपनी जान नहीं देना चाहती ।

नायक अपनी टेक पर फिर लौटता है, ये कमल के फूल सामान्य नहीं हैं । ये मानसरोवर के हैं । ये राह चलते हुए नहीं मिल गए हैं । ये किनारे पर से हाथ नहीं लग गए हैं । इन्हें मैं मानसरोवर के बीच से लाया हूँ । मेरा प्रेम अगंभीर नहीं है । यह मनबहलाव नहीं है । यह तुरंता नहीं है । तुम इसे भूल कहो तो कहो, पर ये अछूती भूल है । इस भूल की निजता है । यह भूल सिर्फ तुम्हारे हिस्से का है । मेरे फूल, मेरा प्रेम बनावटी और दिखाऊ नहीं है । यह झूठ-मूठ का नहीं है । मेरा हृदय मानसरोवर की ही तरह उज्ज्वल, अकलुषित और निखरा हुआ है । मेरा प्रेम गहरा है ।

12.3 कविता की विशेषताएँ

भवानीप्रसाद मिश्र की इस रचना में प्रेम की बेहद सोंधी, अकृत्रिम और स्नेहिल अभिव्यक्ति हुई है । इसमें प्रिया को मनाने का प्रयास है और अपनी भावनाओं पर अगाध विश्वास भी । इस प्रेम निवेदन में कोई आकाशीय वृत्ति नहीं है । बल्कि यह धरती का प्रेम है । इसमें अपनी भावनाओं की विशिष्टता की रक्षा है और प्रिय के सम्मान का सलीका भी । नायक के प्रेम निवेदन में, आग्रहों में उजास भरा है । इसमें हिचक, संशय और बनावटीपन के लक्षण नहीं हैं । इसमें ओस की बूँदों सी कोमलता और ठहराव है एवं भोर की हवाओं सी रुहानी ठंडक भी । निश्चय ही, समूचे समर्पण और अगाध विश्वास से सराबोर इस प्रेम का एक चेहरा और होगा । जिस समर्पण की गूँज यहाँ सुनाई पड़ती है उस पर टिककर भीषण ताप को सहने की क्षमता सहज मिल जाएगी, इसमें तनिक भी संशय नहीं है ।

भवानीप्रसाद मिश्र की भाषा-शैली के विषय में पूर्व में कही गई बातों की यह कविता तस्दीक-सी करती है । कविता में संवाद को संभव करना आसान नहीं होता । जबकि यह कविता संवादों के सहारे ही पूरी हुई है । छोटे-छोटे शब्दों से काव्यभाषा विशेष रूप

से चमकती हुई जान पड़ती है । जो शब्द बड़े हैं, जैसे- मानसरोवर; कवि ने इस प्रचलित नाम से अलग 'मानसर' का प्रयोग किया है । इस प्रयोग से प्रवाह अक्षुण्ण रहता है और माधुर्य बढ़ जाता है ।

जो चीजें सहज दिखती हैं वह सहजता किस रूप में उपलब्ध होती है, इसे एक [illegible] समझना चाहिए । कविता के आरंभ की ही पंक्ति है – 'पसारे आप आँचल' । यहाँ आँचल को फैलाना नहीं है, पसार[illegible] । यह देशजता है । 'पसारने' कहने में यह विश्वास समाया है कि तब कोई भी फूल छिंटकेगा नहीं, बल्कि वह पूरे ख्याल से, सँभाल के स्वीकारा जाएगा । आँचल पसरेगा, तब फूलों के देख-सँवार की जवाबदेही प्रिया की होगी । पसारने में आत्मीयता की ठंडक और विश्वास की गर्माहट दोनों बसी है । भावना का यह ठेठपन 'फैलाने' में उपलब्ध नहीं है । 'तरी पर के हैं'- इस मुहावरे के प्रयोग से भी कथन की व्यंजकता बढ़ गई है ।

12.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) भवानीप्रसाद मिश्र का कवि परिचय अपने शब्दों में लिखें ।

(ख) भवानीप्रसाद मिश्र की काव्य-भाषा की विशेषताएँ संक्षेप में बताएँ ।

(ग) अर्थ लिखें–

ये कमल के फूल
लेकिन मानसर के हैं,
इन्हें हूँ बीच से लाया
ना समझो तरी पर के हैं ।

भूल भी यदि है
अछूती भूल है ?
मानसर वाले कमल के फूल हैं ।

■■■

भाषा संप्रेषण

पाठ संरचना

13.0 उद्देश्य
13.1 भाषा का अर्थ
13.2 संप्रेषण के विविध रूप
13.3 संप्रेषण की प्रयोज्यता
13.4 संप्रेषण की प्रक्रिया
13.5 सफल संप्रेषण की पहचान
13.6 अभ्यास के प्रश्न

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का शीर्षक 'भाषा संप्रेषण' है । इस इकाई में सबसे पहले भाषा की विभिन्न परिभाषाओं से परिचय प्राप्त किया जाएगा । तत्पश्चात इस बात से अवगत हुआ जाएगा कि भाषा संप्रेषण के विविध पक्ष क्या हैं और इसके रूप कौन-कौन से हैं ।

13.1 भाषा का अर्थ

'भाषा संप्रेषण' पर विचार करने से पूर्व 'भाषा' शब्द से परिचय आवश्यक है । भाषा शब्द से कई अर्थ लिए जाते हैं । सामान्य रूप से संप्रेषण के लिए प्रयुक्त प्रत्येक माध्यम को भाषा कहते हैं । ट्रैफिक का लाल सिग्नल हो या आँखों से किया जा रहा कोई संकेत या फिर किसी बात पर सिर हिलाना; सभी भाषा के रूप हैं; क्योंकि इनसे संप्रेषण का कार्य लिया जाता है । ये आंगिक भाषा के उदाहरण हैं । इसी आंगिक भाषा से आगे चलकर वाचिक भाषा तक की यात्रा तय हुई । और फिर बाद में लिखित भाषा की बारी आयी । इस विकास क्रम को ध्यान में रखें तो भाषा की कोई एक सर्वमान्य परिभाषा दे पाना संभव नहीं है । बहरहाल, भाषा की कुछ प्रमुख परिभाषाओं को यहाँ दिया जा रहा है–

ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है । – हेनरी स्वीट

मनुष्य ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा अपना विचार प्रकट करता है । मानव मस्तिष्क वस्तुत: विचार प्रकट करने के लिए ऐसे शब्दों का निरंतर उपयोग करता है । इस प्रकार के कार्य-कलाप को ही भाषा की संज्ञा दी जाती है । –ओत्तो येस्पर्सन

भाषा एक प्रकार का चिह्न है, चिह्न से तात्पर्य उन प्रतीकों से है, जिनके द्वारा मनुष्य अपना विचार दूसरों पर प्रकट करता है । ये प्रतीक भी कई प्रकार के होते हैं । जैसे नेत्रग्राह्य, श्रोत्रग्राह्य एवं स्पर्शग्राह्य । वस्तुत: भाषा की दृष्टि से श्रोत्रग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ हैं । –वांद्रेये

जिन ध्वनि चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उसे भाषा कहते हैं । – बाबूराम सक्सेना

भाषा यादृच्छिक ध्वनि संकेतों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा सामाजिक समूह के सदस्य परस्पर सहयोग एवं विचार विनिमय करते हैं । –स्वुतेवाँ

भाषा यादृच्छिक ध्वनि संकेतों की वह प्रणाली है जिसके माध्यम से सामाजिक समूह परस्पर सहयोग करते हैं ।
–ब्लॉख तथा ट्रेगर

इन परिभाषाओं में से किसी एक को भाषा की सर्वमान्य परिभाषा नहीं कहा जा सकता है । मोटे तौर पर यही कह सकते हैं कि यह एक व्यवस्था है जो शब्द और अर्थ के अंतर्संबध पर टिकी है ।

13.2 संप्रेषण के विविध रूप

संप्रेषण भाषा का अनिवार्य पक्ष है । यह अनेक प्रकार से किया जा सकता है । यह बोलकर, लिखकर या अंगों के चालन आदि के द्वारा किया जा सकता है । संप्रेषण की प्रत्येक स्थिति में भाषा का स्वरूप भिन्न होता है । मानव की समूची विकास यात्रा इसी संवाद पर टिकी हुई है । हम ऐसी दुनिया की कल्पना नहीं कर सकते हैं जब कोई किसी दूसरे से न बोले, चाहे वह लिखकर हो, बोलकर हो या संकेतों से हो । संप्रेषण का इतिहास दरअसल मानव सभ्यता के विकास का इतिहास है ।

संप्रेषण के विविध रूप हैं–

1. **आंगिक संप्रेषण**–जब उच्चरित भाषा का जन्म नहीं हुआ होगा, तब मनुष्य अपनी बातें दूसरे तक कैसे पहुँचाता होगा, यह एक दिलचस्प प्रश्न है । जब उसके कंठ से निकलनेवाली ध्वनियाँ वर्ण और शब्द का रूप धारण नहीं की होंगी, उन दिनों वह अपनी बात कैसे कह पाता होगा । तब उसके अंग ही संप्रेषण के माध्यम थे । भाषा के विकासक्रम में मौखिक और लिखित स्वरूप के आने के बाद भी इसका महत्त्व अपनी जगह बना हुआ है । मौखिक संप्रेषण के साथ इसका जुड़ाव सहज रूप से हो जाता है । कंधे उचकाकर हम किसी चीज से अपनी अनभिज्ञता दिखाते हैं तो आँख दिखाकर अपना क्रोध प्रकट करते हैं । अगर चेहरा खिला हो तो यह कहने की जरूरत नहीं होती है कि वह व्यक्ति प्रसन्न है और इसी तरह यदि आँखें नम हैं तो यह बात सहज रूप से संप्रेषित हो जाती है कि वह व्यक्ति दुखी है ।

2. **मौखिक संप्रेषण**–'बोलना' एक प्रमुख कारक है जो मनुष्य को दूसरे जीवों से अलग करता है । ध्वनियों के उच्चारण से लेकर धाराप्रवाह भाषण तक की यात्रा कोई एक दिन में पूरी नहीं हो जाती है । भाषा एक सामाजिक वस्तु है और समाज में रहते हुए यह इसे सीखने की प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है । मौखिक संप्रेषण के लिए किसी व्यक्ति का शिक्षित होना आवश्यक नहीं है इसके लिए एक वक्ता और एक श्रोता की उपस्थिति पर्याप्त होती है । पर, यहाँ यह आवश्यक है कि दोनों एक भाषा-भाषी हों और उनका बौद्धिक स्तर समरूप हो ।

3. **लिखित संप्रेषण**–आंगिक संप्रेषण में दो व्यक्तियों का आमने-सामने होना आवश्यक है । संप्रेषण के समय प्रकाश का होना भी आवश्यक है । मौखिक संप्रेषण में आमने-सामने और प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है पर दोनों का एक स्थान पर और नजदीक होना आवश्यक होता है । लिखित संप्रेषण ने इस तरह की अनिवार्यता को समाप्त कर दिया । इसने अभिव्यक्ति को स्थायित्व प्रदान किया । लिखने की शुरुआत ने मनुष्य को वैचारिक रूप से अधिक संपन्न बनाने में मदद दी । ज्ञान के संचरण, सवर्धन और संरक्षण में इसने क्रांतिकारी भूमिका निभायी ।

लिखित संप्रेषण के लिए कुछ चीजों का स्पष्ट होना आवश्यक है । जैसे– क्या लिखना है, किसे लिखना है, क्यों लिखना है, कब लिखना है, कैसे लिखना है ।

13.3 संप्रेषण की प्रयोज्यता

संप्रेषण मानव-विकास का आधार है । फिर भी यदि इसकी आवश्यकता को कुछ ठोस बिंदुओं के रूप में पहचानने की कोशिश करें तो निम्नलिखित बातें मुख्य तौर पर सामने आती हैं–

1. अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए
2. अपने अनुभवों और भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए
3. सूचना प्रदान करने के लिए
4. ज्ञान के संचरण, संरक्षण और संवर्धन के लिए
5. मनोरंजन के लिए
6. संबंध निर्माण और निर्वाह के लिए

13.4 संप्रेषण की प्रक्रिया

पाश्चात्य विचारक याॅकब्सन ने भाषा-संप्रेषण के अंतर्गत कई तत्त्वों को स्वीकारा है और इस प्रक्रिया को इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

संबोधनकर्ता संप्रेषण का स्रोत होता है । मौखिक संप्रेषण में यह वक्ता होगा तो लिखित संप्रेषण में लेखक । उसका कथन संदेश कहलाता है जिसे संबोधित ग्रहण करता है । लिखित संदेश की स्थिति में यह संबोधित पाठक होता है । संदेश केवल लिखित या मौखिक ही नहीं होते हैं बल्कि वे आंगिक भी हो सकते हैं । संबोधनकर्ता जब किसी व्यक्ति को संबोधित करता है यानी उसे कोई संदेश देता है तो यह संदेश किसी 'कोड' में होता है । 'कोड' का अर्थ है भाषिक तंत्र । इसे डिकोड करके ही संबोधित यानी संदेशग्राहक संदेश समझ पाता है । संदेश को भेजने और ग्रहण करना इसी भाषा पर निर्भर करता है । अगर हम कहें कि राम आम खाता है और जिस व्यक्ति तक यह बात पहुँचानी हो वह हिंदी न जानता हो तो संप्रेषण नहीं हो पाएगा । संबोधनकर्ता और संबोधित में इस विषय में समानता होनी चाहिए । संदेश भाषा का पूरा रूप नहीं होता है । वह उसका एक हिस्सा होता है । जैसे जब हम कहते हैं कि हम हिंदी बोल रहे हैं तो दरअसल हम हिंदी के कुछ शब्द या वाक्य बोल रहे होते हैं । हिंदी या किसी भी भाषा की पूरी संरचना एक अदृश्य संरचना है । कोई भी संदेश एक संपर्क यानी माध्यम जैसे बोलकर, लिखकर, टेलीफोन, सिनेमा आदि के द्वारा दिया जाता है । इसी तरह संदेश के साथ संदर्भ (परिप्रेक्ष्य) की भी अनिवार्यता होती है । संदेश की स्पष्टता के लिए उसके संदर्भ को जानना आवश्यक होता है ।

संप्रेषण में प्रतिक्रिया का अपना महत्त्व है । इसे अंग्रेजी में फीडबैक कहते हैं । प्रतिक्रिया या प्रतिपुष्टि इस बात को निश्चित करती है कि संप्रेषण हुआ या नहीं और यदि हुआ तो किस सीमा तक ।

13.5 सफल संप्रेषण की पहचान

सफल संप्रेषण के लिए कई बातें आवश्यक हैं, जैसे–

1. संदेश स्पष्ट और सार्थक होने चाहिए । संदेश को भ्रामक नहीं होना चाहिए ।
2. संदेश उपयुक्त होने चाहिए । अपूर्ण संदेश संप्रेषण में बाधक होते हैं ।
3. संदेश की भाषा स्पष्ट, शुद्ध और बोधगम्य होनी चाहिए । यदि वह मौखिक संदेश है तो वह स्पष्ट आवाज में होना चाहिए । यदि आवाज धीमी होगी तो श्रोता उसे सुन नहीं पाएगा और संप्रेषण नहीं हो पाएगा ।
4. वक्ता से श्रोता तक या लेखक से पाठक तक पहुँचने में संदेश किसी प्रकार से बाधित, विरूपित या खंडित नहीं होना चाहिए ।
5. सफल संप्रेषण के लिए यह आवश्यक है कि वक्ता और श्रोता दोनों एक ही भाषा के हों या वे एक दूसरे की भाषा जानते हों ।
6. संबोधनकर्ता और संबोधित दोनों को एक दूसरे के सांस्कृतिक संदर्भों से परिचित होना चाहिए ।
7. संदेश ग्रहण करनेवाले व्यक्ति में संदेश ग्रहण करने के लिए तत्परता होनी चाहिए ।

13.6 अभ्यास के प्रश्न

(क) भाषा संप्रेषण से आप क्या समझते हैं ।

(ख) संप्रेषण के विविध रूपों का परिचय दें ।

(ग) सफल संप्रेषण की पहचान कैसे करेंगे ।

(घ) संप्रेषण की प्रक्रिया को अपने शब्दों में स्पष्ट करें ।

■■■

उच्चरित और लिखित भाषा में अंतर

पाठ संरचना

14.0 उद्देश्य
14.1 उच्चरित भाषा
14.2 लिखित भाषा
14.3 उच्चरित और लिखित भाषा में अंतर
14.4 अभ्यास के प्रश्न

14.0 उद्देश्य

पिछली इकाई में भाषा संप्रेषण से परिचय प्राप्त किया गया है । इस इकाई में उच्चरित और लिखित भाषा में अंतर को जाना जाएगा । इम जानते हैं कि भाषा के मुख्य रूप हैं– आंगिक भाषा, मौखिक भाषा, लिखित भाषा । आंगिक भाषा भाषा विकास की आरंभिक सीढ़ी है । मनुष्य अपनी अभिव्यक्ति के लिए बहुत सहजता से इसका प्रयोग करता है । इस इकाई में इससे आगे की कड़ी मौखिक भाषा और लिखित भाषा का अध्ययन किया जाएगा और उनके बीच के अंतर को जाना जाएगा ।

14.1 उच्चरित भाषा

भाषा विकास की प्रक्रिया में आंगिक भाषा से उच्चरित भाषा तक पहुँचना मानव इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी । आंगिक भाषा में संप्रेषण की अनेक समस्याएँ थीं, उच्चरित भाषा ने इनसे मुक्ति दिलाई । उच्चरित भाषा का प्रयोग किसी भी समय किया जा सकता था जबकि आंगिक भाषा में अंग संचालन को देखने के लिए प्रकाश की अनिवार्यता थी । अँधेरे में कोई अपने अंग चलाएगा तो हम उसे नहीं देख सकते हैं । उच्चरित भाषा में किसी श्रोता और वक्त का आमने सामने रहना अनिवार्य नहीं रहा । श्रोता का मुख किसी दिशा में हो और वक्ता का किसी दूसरी दिशा में, यह उच्चरित भाषा में संभव हुआ । आंगिक भाषा में यह भी संभव न था । उच्चरित भाषा में सूक्ष्म से सूक्ष्म बौद्धिक अभिव्यंजना संभव हो पाई । इसकी कोई संभावना आंगिक भाषा में नहीं थी ।

आंगिक भाषा से उच्चरित भाषा तक की यात्रा हजारों वर्षों में पूरी हुई । भाषा वैज्ञानिकों ने उच्चरित भाषा के विकास से जुड़े कई सिद्धांत दिए हैं । उच्चरित भाषा का समूचा संसार एक अदृश्य संसार होता है । हम अपने प्रयोग में भाषा की विस्तृत संरचना के कुछ हिस्से को ही प्रयोग में लाते हैं । भाषा के उच्चरित रूप को घर, परिवार और समाज से सीखा जाता है । यह सीखना स्वाभाविक रूप से होता है । उच्चरित भाषा एक क्षेत्र विशेष में प्रयुक्त होती है । उस क्षेत्र में ही इसके स्वरूप में विविधता पाई जाती है । हिंदी क्षेत्र की ही बात करें तो विभिन्न क्षेत्रों में इसके विभिन्न रूप मिल जाते हैं । ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मगही, मैथिली आदि में हम हिंदी के उच्चरित रूप की विविधता देख सकते हैं । इन्हें बोली कहा जाता है । इनका प्रभाव खड़ी बोली के उच्चारण पर भी पड़ता है । ऐसी स्थिति अहिंदी भाषी क्षेत्रों में भी दिखाई पड़ती है । हिंदी के उच्चारण में वहाँ की स्थानीय भाषा का प्रभाव दिखाई पड़ता है । मुंबई और कोलकाता में हिंदी एक ही लहजे में नहीं बोली जाती है ।

14.2 लिखित भाषा

उच्चरित भाषा के बाद लिखित भाषा की आवश्यकता क्यों हुई होगी, यह एक रोचक प्रश्न है । उच्चरित भाषा को केवल उच्चारण के समय ही ग्रहण किया जा सकता था । उच्चारण के साथ ही वह वातावरण में विलोपित हो जाती थी । इसे किसी भी तरह

से पुनर्प्राप्त नहीं किया जा सकता था । अगर वक्ता अपने कथन को दुहराए तब भी यह संभव नहीं है कि वह अपने उसी पूर्व रूप में प्राप्त हो जाए । उच्चरित भाषा की इसी क्षणभंगुरता को दूर करने के लिए स्थायी भाषा की आवश्यकता महसूस हुई । लिखित भाषा ने उच्चरित भाषा को स्थायित्व प्रदान किया । उच्चरित भाषा के लिखित भाषा में आने के बाद एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक मनुष्य के अनुभवों का स्थानांतरण अधिक सुगम हो गया । उच्चरित भाषा में आँखों का उपयोग गौण था । वक्ता की भाव भंगिमा और अंग संचालन को देखने के लिए ही इसका उपयोग होता था जबकि लिखित भाषा में इसका उपयोग प्रमुख हो गया ।

14.3 उच्चरित और लिखित भाषा में अंतर

भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा के दो पक्ष माने हैं– वे एक को लांग (LANGUE) यानी 'भाषा' कहते हैं और दूसरे को पैरोल (PAROLE) यानी 'वाक्' कहते हैं । 'लांग' भाषा का संपूर्ण तंत्र है जबकि 'पैरोल' बोली जानेवाली भाषा है जो कि 'लांग' का ही हिस्सा होती है । इस तरह कह सकते हैं कि 'लांग' एक अमूर्त अवधारणा है जबकि 'पैरोल' उसका वह हिस्सा है जो कोई व्यक्ति किसी समय, व्यवहार हेतु प्रयोग में लाता है । भाषा में हर चीज आपसी संबंधों पर टिकी होती है । ये संबंध दो प्रकार के होते हैं– विन्यासक्रमी और अविन्यासक्रमी । वाक्य में शब्द एक के बाद एक आते हैं, यह क्रमवार उपस्थिति ही विन्यासक्रम है । यह क्रम न हो तो अर्थ नहीं मिलेगा । जैसे 'राम ने श्याम की मदद की ।' इस वाक्य में जब तक अंतिम शब्द 'मदद' नहीं आता; तब तक अर्थ नहीं मिलता । या शब्दों का क्रम ही बदल दें तो भी उचित अर्थ नहीं प्राप्त होगा । दूसरा संबंध अविन्यासक्रम का है । ऊपर के उदाहरण में ही देखें तो हम पाएँगे कि मदद की जगह पीटा या मारा शब्द होता तो वही अर्थ नहीं आता । इस तरह इस वाक्य का अर्थ प्राप्त करने में उपस्थित शब्द की ही भूमिका महत्त्वपूर्ण नहीं होती है, बल्कि अनुपस्थित शब्द भी महत्त्वपूर्ण होते हैं । पैरोल से बोली जानेवाली भाषा का अर्थ लेते हैं, लिखित भाषा की संरचना भी उसी पर आधारित होती है ।

लिखित भाषा और उच्चरित भाषा दोनों में क्या अंतर है और कौन अधिक महत्त्वपूर्ण है, इस विषय पर भाषा वैज्ञानिकों ने खूब गहन-विचार किया है । एक मत के अनुसार उच्चरित भाषा अधिक महत्त्वपूर्ण है तो दूसरा मत लिखित भाषा को अधिक महत्त्व देता है । इन दोनों के अंतर को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझ सकते हैं –

- लिखित भाषा अपनी प्रकृति में स्थायी होती है जबकि उच्चरित भाषा को रिकार्डर आदि की सहायता से सहेजा जा सकता है । उच्चरित भाषा को सहेजकर हम उसे स्थायी बनाने का प्रयास करते हैं पर यह उसकी स्वाभाविक प्रकृति नहीं है ।

- लिखित संप्रेषण का रेंज बड़ा होता है । एक लिखी हुई चीज इसकी तुलना में अधिक दूर तक फैल सकती है । यदि हम भाषण दें तो इसे वहाँ उपस्थित कुछ व्यक्ति ही सुनेंगे जबकि यदि उसे लिखित रूप देकर वितरित किया जाए तो उसका भौगोलिक विस्तार अधिक होगा ।

- लिखित संप्रेषण ने मानवीय संपर्क में गति लाई और इससे मानवीय प्रतिभा का विस्तार हुआ ।

- लिखित भाषा सतर्कता के साथ प्रस्तुत की जाती है । लेखन एक सुविचारित पद्धति है । यह मानकीकृत और एकरूपता लिए हुए होती है । स्थानीय प्रभाव इसमें उच्चरित भाषा की तुलना में नहीं होते हैं या बहुत कम होते हैं ।

- उच्चरित भाषा में व्यक्ति आरोह-अवरोह, बलाघात, तान-अनुतान आदि के प्रयोग से अपनी बात संप्रेषित करता है लिखित भाषा में इतनी सुविधा नहीं होती है । हाव-भाव प्रदर्शन, अंग-संचालन या संकेत के लिए उसमें अवसर नहीं होते हैं । इसके स्थान पर लिखित भाषा में विभिन्न प्रकार के चिह्नों का उपयोग किया जाता है । उद्धरण, विस्मयादिबोधक, प्रश्नवाचक आदि चिह्नों के प्रयोग द्वारा कथ्य को संप्रेषित करने का प्रयास किया जाता है । उच्चरित भाषा में ऐसी सुविधाएँ नहीं होती हैं ।

- उच्चरित भाषा में श्रोता की प्रतिपुष्टि मिल जाती है । इससे यह पता चल जाता है कि संप्रेषण हुआ कि नहीं और यदि हुआ तो कितना । इसके साथ संप्रेषण की बाधाओं का भी पता चल जाता है । वक्ता और श्रोता दोनों के पास संप्रेषण की बाधाओं को दूर करने का अवसर होता है । लिखित भाषा में पाठक के पास यह अवसर नहीं होता है । लिखित भाषा में पाठक अपने अनुसार अर्थ निकालता है । अर्थ प्राप्ति की यह प्रक्रिया पाठक के निजी सांस्कृतिक परिदृश्यों के अनुरूप होती है । इस तरह लिखित भाषा पाठक के समक्ष अर्थ की विभिन्न संभावनाओं को उत्पन्न करती है ।

● लिखित भाषा में भाषा की इकाइयाँ जैसे वाक्य, उपवाक्य, पदबंध आदि मिलते हैं और एक निश्चित विन्यास द्वारा स्पष्टता के साथ उल्लिखित रहती हैं । बोलचाल की भाषा इतनी सहज, स्वाभाविक और तीव्र होती है कि उसमें लिखित भाषा की इस संरचना को प्राप्त कर सकना संभव नहीं होता है ।

● लिखित भाषा की संरचना में हमें हमेशा एक क्रमबद्धता दिखाई देती है । कर्त्ता, कर्म, क्रिया आदि का स्थान निश्चित होता है । जबकि बोलचाल की भाषा में इसकी इतनी निश्चितता नहीं होती है । लिखित भाषा में एक वाक्य की संरचना यदि इस प्रकार हो सकती है- 'उसने कहा है कि कल परीक्षा होगी ।' तो, उच्चरित भाषा में इसकी संरचना इस प्रकार भी मिल सकती है- 'कल परीक्षा होगी, उसने कहा है ।' या, 'परीक्षा होगी कल, उसने कहा है ।'

● शब्दकोष और व्याकरण की दृष्टि से देखें तो कुछ चीजें उच्चरित भाषा में अधिक दिखाई देती हैं तो कुछ चीजें लिखित भाषा में । हिंदी के उदाहरण से ही कहें तो लंबे संयुक्त वाक्य लिखित भाषा में मिल जाएँगे पर मौखिक भाषा में ऐसे प्रयोग आसानी से न मिलेंगे । इसी तरह कर्तृवाच्य का यह वाक्य- 'राम आम खाता है'; लिखित और उच्चरित दोनों में मिलेगा पर इसका परिवर्तित रूप- 'आम राम के द्वारा खाया जाता है'; लिखित भाषा में ही मिलेगा, उच्चरित भाषा में नहीं ।

14.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) लिखित भाषा और उच्चरित भाषा का परिचय दें ।

(ख) लिखित भाषा और उच्चरित भाषा में अंतर स्पष्ट करें ।

लेखन कौशल

पाठ संरचना

15.0 उद्देश्य
15.1 लेखन कौशल : परिचय
15.2 प्रभावी लेखन और उसके तत्त्व
15.3 अभ्यास के प्रश्न

15.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य लेखन कौशल के विविध पक्षों का परिचय देना है । इस इकाई से हम यह समझ सकेंगे कि लेखन कौशल का क्या अर्थ है और किस प्रकार के लेखन को प्रभावी लेखन कहा जाता है । प्रभावी लेखन के कौन-कौन से पक्ष होते हैं । इसके साथ ही यह भी समझा जाएगा कि वे कौन से कारक हैं जो किसी लेखक के लेखन को प्रेरित-प्रभावित करते हैं ।

15.1 लेखन कौशल : परिचय

'लेखन कौशल' एक विस्तृत विषय है । इस पर आने से हमें 'लेखन' का अर्थ समझना चाहिए ।

मोटे तौर पर अभिव्यक्ति के दो माध्यम हैं– एक मौखिक और दूसरा लिखित । दोनों माध्यमों का लक्ष्य एक ही है– संप्रेषण । अपनी बात को दूसरे तक पहुँचाना । हम जानते हैं कि भाषा का विकास कोई एक दिन में नहीं हुआ । आंगिक भाषा से लेकर वाचिक भाषा तक की यात्रा में लाखों वर्षों का समय लगा । इस क्रम में लिखित भाषा तो बहुत नई बात है । लिखने का इतिहास यानी लिपि का इतिहास महज कुछ हजार वर्षों का है । आग और चाक की ही तरह लिपि का इतिहास मानव-सभ्यता की विकास यात्रा में निर्णायक मोड़ के रूप में स्वीकारा जाता है । लिपि ने एक ओर भाषा के रूप को निश्चित किया तो दूसरी ओर मनुष्य के अनुभवों को गहरे रूप से प्रभावित किया । ज्ञान के संरक्षण और प्रसारण को इसने सुगम बना दिया । लेखन में कुशलता की भूमिका यहीं से आरंभ हुई । जो कुशलता अब तक वाणी के माध्यम से प्रकट होती थी, उस कुशलता के लिए अब एक नया क्षेत्र मिला ।

'लेखन कौशल' का तात्पर्य विचारों की अभिव्यक्ति और उसके संप्रेषण दोनों से है । ये दोनों ही उसके महत्त्वपूर्ण पक्ष हैं । यदि कोई लेखक कुछ लिखता है तो यह उसकी अभिव्यक्ति है, पर यदि उसकी बात दूसरे लोगों तक संप्रेषित नहीं हो पाती है तो यही कहा जाएगा कि उसके लेखन कौशल में कमी है । उसके लेखन को प्रभावी लेखन नहीं कहा जाएगा । यहाँ यह ध्यान रखनेवाली बात है कि संप्रेषण एक सापेक्ष विषय है । वक्ता और श्रोता (या लेखक और पाठक) की मानसिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और शैक्षिक समानता इसमें बहुत असर डालती है । उदाहरण के लिए हम एक ऐसे व्यक्ति के बारे में सोचे जिसकी भारतीय दर्शन में कोई रुचि न हो और जिसने इसका कभी अध्ययन न किया हो उसे यदि 'मध्यकालीन वैष्णव आचार्य और हिंदी का भक्ति साहित्य' जैसे विषय पर कोई पुस्तक पढ़ने के लिए दे दी जाए तो बहुत संभव है कि उसके पल्ले कुछ न पड़े । या एक ऐसे व्यक्ति को जो भौतिकी के सिद्धांतों से परिचित न हो और उसे इस विषय की कोई किताब पढ़ने के लिए दे दी जाए तो ऐसी स्थिति में न तो पाठक दोषी है और न ही लेखक । कई बार ऐसा भी होता है कि परिचित विषय पर इस तरह की चीजें पढ़ने के लिए मिल जाती हैं जो समझ में नहीं आती हैं; तब यह लेखक की कमजोरी मानी जाती है ।

15.2 प्रभावी लेखन और उसके तत्त्व

प्रभावी लेखन की पहचान किसी एक काल-खंड में उपस्थित होकर नहीं की जा सकती है । कई बार ऐसा होता है कि किसी लेखक को अपने जीवनकाल में बहुत सम्मान मिल जाता है पर समय गुजरने के साथ उसकी रचनाएँ भूला दी जाती हैं । वे रचनाएँ अपने युग-समय तक ही महत्त्व पाती हैं बाद में उनकी कोई खोज खबर लेनेवाला नहीं रहता है । कई बार ऐसा होता है कि कई रचनाएँ अपने समय में उपेक्षा झेलने के बाद भविष्य में महत्त्वपूर्ण हो जाती हैं । तो कुछ रचनाएँ ऐसी भी होती हैं जो प्रत्येक काल में समान रूप से पाठकों को प्रभावित करती हैं । कबीर, तुलसी, शेक्सपीयर, प्रेमचंद की रचनाएँ इसी श्रेणी में आती हैं । इसके साथ यह भी याद रखना चाहिए कि प्रत्येक लेखन प्रभावी हो यह आवश्यक नहीं है ।

कोई लेखन किस प्रकार प्रभावी हो सकता है इसका कोई फार्मूला नहीं है । लेखक में रचना-निर्माण का सामथ्य पैदा करनेवाली कोई एक शक्ति नहीं होती है । संस्कृत काव्य-शास्त्र में काव्य-हेतु जैसे विषय पर विशद विचार किया गया है । ये विचार 'प्रभावी लेखन' को समझने में मदद दे सकते हैं । 'काव्यप्रकाश' के लेखक आचार्य मम्मट के अनुसार किसी लेखक में काव्य निर्माण का सामर्थ्य पैदा करनेवाली शक्तियाँ हैं –

शक्तिर्निपुणता लोककाव्यशास्त्राद्यवेक्षणत् ।
काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे ।।

अर्थात; शक्ति (प्रतिभा), लोकव्यवहार, शास्त्र एवं काव्यादि के परिशीलन से प्राप्त निपुणता (व्युत्पत्ति) तथा काव्यज्ञ की शिक्षा से अभ्यास ये काव्य के उद्भव में हेतु हैं । मम्मट इन तीनों– प्रतिभा, व्युत्पत्ति और अभ्यास को पृथक-पृथक नहीं बल्कि समन्वित रूप में काव्य का हेतु मानते हैं । इस सूत्र से हम प्रभावी लेखन के विभिन्न आधारों की पहचान भी कर सकते हैं । यहाँ पहली बात प्रतिभा की है, यह लेखन में विशिष्टता लाती है । प्रत्येक लेखक की शैली अलग होती है । एक ही विषय को दो लेखक अलग-अलग तरीके से प्रस्तुत करते हैं । एक ही विषय पर दो कवियों की रचनाएँ दो अलग-अलग दृष्टि का परिचय दे सकती हैं, अत: प्रतिभा लेखन में निजता लाती है । यदि 'बाढ़' जैसे विषय पर ही दो परीक्षार्थी निबंध लिखेंगे तो उनके लेख में अंतर का होना स्वाभाविक है । यह अंतर उनकी प्रतिभा यानी व्यक्तित्व के कारण उत्पन्न होता है । यह व्यक्तित्व ही विषय और शिल्प के चुनाव में निर्णायक होता है । हम उर्दू के दो महाकवियों मीर और गालिब के उदाहरण से इस बात को समझ सकते हैं । अपने दुख की अभिव्यक्ति दोनों करते हैं, पर उनका अंदाज अलग होता है :

तड़प के खिरमन पर गिर कभी अय बिजली
जलाना क्या है मेरे आशियाँ के खारों का (मीर)

कफस में मुझसे रुदादे चमन कहते न डर हमदम
गिरी है जिस पे बिजली वो मेरा आशियाँ क्यों हो (गालिब)

आज हमारे घर आया तू क्या है याँ जो निसार करें
इल्ला खींच बगल में तुझको देर तलक हम प्यार करें (मीर)

वो आए घर में हमारे खुदा की कुदरत है
कभी हम उनको कभी अपने घर को देखते हैं (गालिब)

लेखन प्रभावी हो इसके लिए आवश्यक है कि विषय की सही समझ लेखक को हो । लेखक को इसकी साफ समझ होनी चाहिए कि वह जिस विषय को प्रस्तुत करने जा रहा है उसके उद्देश्य क्या हैं । यदि उद्देश्य निर्धारित न होंगे, तो पाठक के समक्ष भटकाव

की संभावना बनी रहेगी । ऐसा लेखन, प्रभाव नहीं छोड़ पाता है । समाज और लोक व्यवहार से परिचय किसी लेखक के अनुभवों को समृद्ध करता है । इससे उसके लेखन में विश्वसनीयता आती है । समाज के सत्य को समाज की भाषा में व्यक्त करके लेखक अपनी रचना को दीर्घजीवी बना देता है । दुनिया की बड़ी से बड़ी रचना के पीछे यह सत्य उपस्थित है । चौतरफा शोषण के शिकार होरी से प्रेमचंद का गहरा और विश्वसनीय परिचय ही 'गोदान' को कालजयी रचना बनाता है । 'मैला आँचल' यदि कालजयी रचना का महत्त्व पा सकी तो इसके पीछे भी यही कारण है । पूर्णिया की लोक-संस्कृति, वहाँ का जीवन-व्यवहार, सुख-दुख, समस्याएँ, शब्दावली और टोन यदि उस रचना में उपस्थित नही होते तो यह रचना कभी भी इतना महत्त्व नहीं पाती । भारत-विभाजन की पृष्ठभूमि में लिखी कहानियों को पढ़ें तो यह बात फिर से पुष्ट होगी । जिन लेखकों ने विभाजन को स्वयं भोगा-देखा था, उनके लेखन की विश्वसनीयता साफ झलक जाती है । चाहे मंटो की कहानी 'टोंबा टेक सिंह' और 'खोल दो' पढ़ें या कृष्णा सोबती की कहानी 'सिक्का बदल गया' या फिर अमृता प्रीतम की रचना 'पिंजर' । उधार के अनुभवों से बड़ी रचना नहीं लिखी जा सकती है । कई बार ऐसा होता है कि सामयिक प्रचलन के हिसाब से लेखक लिखने लगते हैं । वे फार्मूलाबद्ध होकर रह जाते हैं । हिंदी में आंचलिक लेखन इसका सबसे अधिक शिकार हुआ है । कुछेक आंचलिक शब्दों का प्रयोग, गाँव-परिवेश के दृश्यों का अंकन और कुछ ऐसे ही टेकनीकों के सहारे हिंदी में धड़ल्ले से आंचलिक कहानियाँ और उपन्यास लिखे गए । ऐसे लेखन में स्वाभाविकता नहीं थी अत: इन्हें महत्त्व भी नहीं मिला ।

लेखन में स्पष्टता का होना अत्यंत आवश्यक है । चाहे वह किसी प्रकार का लेखन हो । रचनात्मक साहित्य हो या फिर वैचारिक लेखन, स्पष्टता के बिना लेखन को प्रभावी नहीं कहा जाएगा ।

प्रत्येक लेखक एक विकास प्रक्रिया से गुजरता है । शायद ही कोई ऐसा लेखक होगा जो अपनी पहली रचना से ही रचनात्मक परिपक्वता के शिखर पर खड़ा दिखाई पड़े । उसकी समझ और शैली को समृद्ध बनाने में उसका अध्ययन बहुत मदद देता है । रचनात्मक परिपक्वता की उपलब्धि के लिए पूर्व लेखकों को पढ़ना एक महत्त्वपूर्ण तरीका है । उन्हें पढ़कर एक नया लेखक सीखता है । वह भाषा की ताकत से परिचित होता है । वह यह जान पाता है कि चीजों को किस प्रकार से देखना चाहिए और उन्हें किस प्रकार से व्यक्त करना चाहिए । उसका यह अध्ययन उसे मौलिक होने में भी मदद देता है । प्रेमचंद ने अपने लेखन पर महान रूसी लेखक टॉल्सटॉय के प्रभाव को स्वीकारा भी है ।

एक विषय रचना का रूप कैसे धारण करता है इसकी सरल और स्थूल व्याख्या नहीं की जा सकती है । हिमालय की गोद में खड़े नागार्जुन के भीतर उनकी कविता 'बादल को घिरते देखा है' ने किस प्रकार रूप ग्रहण किया होगा, इसकी व्याख्या करना संभव नहीं है । कवि ने यही शिल्प क्यों चुना, इसका कारण बता पाना आसान नहीं है । यह भी कहा जाता है कि एक रचना की अंतर्वस्तु अपने लिए शिल्प का चुनाव स्वयं कर लेती है लेकिन लेखक को इसलिए सायास प्रयत्न भी करना चाहिए । यह प्रयास उसके लेखन को प्रभावी बनाता है ।

किसी रचना का शिल्प लेखन-कौशल का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है । किसी रचना में जितना महत्त्वपूर्ण विषय होता है उतना ही महत्त्वपूर्ण उसका शिल्प भी । विषय और शिल्प की अन्विति रचना में विशेष चमक ला देती है । अज्ञेय की कहानी 'रोज' को पढ़ते हुए हम महसूस कर सकते हैं कि कहानी का बेहद उदास वातावरण हमारे आस-पास भी घिर गया है । एक चुप्पी, बर्तनों की खड़-खड़ और कहानी में बिखड़े हुए सूखे हुए क्षण हमें घेर लेते हैं । विषय के अनुरूप शिल्प के निर्धारण से ही यह सफलता संभव हो पाती है । इसी तरह हम नागार्जुन की 'मंत्र कविता' का उल्लेख कर सकते हैं जिसमें व्यवस्था पर व्यंग्य करने के लिए वे मंत्र शैली का उपयोग करते हैं :

ओम् ओम् ओम्
ओम् धरती, धरती, धरती, व्योम् व्योम् व्योम्
ओं अष्टधातुओं की ईंटों के भट्ठे
ओं महामहिम, महामहो, उल्लू के पट्ठे
ओं दुर्गा दुर्गा दुर्गा तारा तारा तारा
ओं इसी पेट के अंदर समा जाए सर्वहारा
हरि: ओं तत्सत् हरि: ओं तत्सत्

भाषा पर अधिकार का अर्थ लेखन में क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग करना नहीं है । लेखन में प्रवाह और सहजता उसके प्रभावी होने के लिए आवश्यक है । यह सहजता बोलचाल के शब्दों के प्रयोग से, मुहावरों से, लोकोक्तियों से आती है । लेखन की व्यंजकता इससे बढ़ जाती है । इसके लिए लेखक का जनता के भाषिक-व्यवहार से परिचय होना आवश्यक है । आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जब कबीर का परिचय देते हैं तो लिखते हैं : "ऐसे थे कबीर । सिर से पैर तक मस्त-मौला; स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़; भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड; दिल के साफ, दिमाग के दुरुस्त; भीतर से कोमल, बाहर से कठोर; जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय । .....वे जो कुछ कहते थे अनुभव के आधार पर कहते थे, इसीलिए उनकी उक्तियाँ बेधनवाली और व्यंग्य चोट करने वाले होते थे ।

भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था । वे वाणी के डिक्टेटर थे । जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया – बन गया है तो सीधे-सीधे, नहीं तो दरेरा देकर । भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार-सी नजर आती है । उसमें मानो ऐसी हिम्मत ही नहीं है कि इस लापरवा फक्कड़ की किसी फरमाइश को नाहीं कर सके ।" यहाँ हम देख सकते हैं कि आचार्य द्विवेदी छोटे-छोटे उपवाक्यों के जरिए कबीर के व्यक्तित्व की विशेषताएँ उभारते हैं । कबीर की वाणी की विशेषता बताते हुए वे मुहावरों का प्रयोग कर कबीर की भाषा के समूचे ठाठ को प्रत्यक्ष कर देते हैं । कविता में भी मुहावरे के प्रयोग की संभावना रहती है । ऐसे प्रयोगों में युक्तियुक्तता का ख्याल सदैव रखना चाहिए ।

वाक्यों का सुगठन, उसकी लंबाई आदि भी लेखन कौशल के अंतर्गत आते हैं । छोटे वाक्यों में सहजता अधिक होती है । बड़े वाक्यों को सँभाल पाना सबके वश की बात नहीं होती है । पर समर्थ लेखक लंबे वाक्यों में भी प्रवाह खंडित नहीं होने देते हैं ।

एक लेखक के पास इसके अतिरिक्त शब्द भांडार, भाषायी और व्याकरणिक शुद्धता, अभिव्यक्ति की विभिन्न भंगिमाओं का होना आवश्यक है ।

15.3 अभ्यास के प्रश्न

(क) लेखन कौशल से आप क्या समझते हैं ?

(ख) प्रभावी लेखन के लिए कौन-से तत्त्व आवश्यक हैं ?

■■■

संचार के विविध रूप

पाठ संरचना

16.0 उद्देश्य
16.1 संचार का अर्थ
16.2 संचार की उपयोगिता
16.3 संचार के विविध रूप
(क) शब्द संचार माध्यम
(ख) श्रव्य संचार माध्यम
(ग) दृश्य संचार माध्यम
16.4 अभ्यास के प्रश्न

16.0 उद्देश्य

यह इकाई संचार के विविध रूपों पर केंद्रित है । संचार के विविध रूपों को जानने से पहले संचार के अर्थ एवं उपयोगिता को जानना आवश्यक है । अत: इस इकाई में संचार के अर्थ एवं उपयोगिता के अध्ययन के पश्चात उसके विविध रूपों से अवगत हुआ जाएगा ।

16.1 संचार का अर्थ

संचार अंग्रेजी के Communication शब्द का पर्यायी शब्द है । Communication शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन के 'Communis' से हुई है जिसका मतलब है – "किसी वस्तु या विषय का सब के लिए साँझा होना ।" अत: 'Communication' उस प्रक्रिया को कहा जाएगा जिसके द्वारा किसी भाव, विचार अथवा जानकारी को हम दूसरों तक पहुँचाते हैं । जब यह प्रक्रिया सामूहिक पैमाने पर होती है तो इसे 'जनसंचार' अर्थात Mass-Communication कहते हैं ।

अत: स्पष्ट है कि संचार का अर्थ सूचना (Information)को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचाना है । रेडियो, टेलीविजन, समाचारपत्र, विज्ञापन, होर्डिंग, फोन, इंटरनेट आदि संचार के विभिन्न माध्यम हैं ।

16.2 संचार की उपयोगिता

संचार माध्यमों की उपयोगिता अलग-अलग स्थितियों तथा अलग-अलग सन्दर्भों में अलग-अलग है । किन्तु इन सभी माध्यमों का उद्देश्य एक ही है । समाज की शैक्षिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक समझ को विकसित करने तथा व्यक्ति के 'जानने' व 'अभिव्यक्ति' के मूलभूत अधिकार को अक्षुण्ण रखना इसका प्रमुख उद्देश्य है । इस तरह संचार माध्यमों की उपयोगिता को मुख्यत: पाँच प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **सूचना (Information) :** जनसंचार के माध्यमों के द्वारा विश्व की विभिन्न घटनाओं, सामाजिक तथा राजनीतिक स्थितियों की सूचना जन-सामान्य को यथाशीघ्र उपलब्ध हो जाती है । इसी के साथ, देश-विदेश की प्रगति तथा वैज्ञानिक आविष्कारों की गति की सूचना भी जनता तक पहुँचाते हैं ।

2. **अभिव्यक्ति (Expression) :** जनसंचार के माध्यमों द्वारा व्यक्ति अपने विचार तथा भावों को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करता है । अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सरकारी माध्यमों की अपेक्षा समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं में अधिक खुले रूप से रहती है । इसीलिए इनकी महत्ता अन्य की तुलना में बढ़ जाती है ।

3. **विचार तथा घटनाओं का विश्लेषण :** जनसंचार के माध्यम देश-विदेश की घटनाओं की सूचना देने के साथ ही साथ उनके अर्थ का विश्लेषण भी करते हैं तथा सही मुद्दों तथा विचारों के लिए जन-सामान्य का मत-परिवर्तन करने में अहम् भूमिका अदा करते हैं ।

4. **प्रगति एवं विकास :** जनसंचार के माध्यम जन-सामान्य की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विकास आदि के लिए सघन अभियान चलाते हैं ।

5. **मनोरंजन (Entertainment) :** रेडियो, दूरदर्शन तथा फिल्म आदि जनसंचार के माध्यम जनता के लिए रोचकता तथा मनोरंजन के प्रभावी साधन बनते हैं । इसके साथ देश-विदेश की कला एवं संस्कृति के समुचित विकास के लिए भी अपना महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान करते हैं ।

16.3 संचार के विविध रूप

संचार के समस्त माध्यमों को तीन भागों में विभाजित किया जाता है :

(क) लिखित संचार माध्यम : इसके अंतर्गत चिट्ठियाँ, पुस्तक, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, विज्ञापन आदि आते हैं । संचार के दूसरे रूपों की ही तरह इसके दो स्वरूप हो सकते हैं – वैयक्तिक और सामूहिक । जब संचार व्यक्ति और व्यक्ति के बीच हो तो वह वैयक्तिक संचार होता है और जब संचार की प्रक्रिया में एक पक्ष समूह हो तो उसे सामूहिक संप्रेषण कहेंगे । लेखन कला के विकास के साथ ही चिट्ठियों ने संचार संप्रेषण के एक प्रमुख माध्यम का स्थान ले लिया था । चिट्ठियों को लेकर मनुष्य की अनेक स्मृतियाँ हैं । इसका स्वरूप प्राय: वैयक्तिक होता है । एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति तक इसके माध्यम से अपनी बात पहुँचाता है । हालाँकि कभी-कभी यह सामूहिक स्वरूप वाला भी होता है । चुनाव-प्रचारों में किसी प्रत्याशी के द्वारा मतदाताओं को भेजा जानेवाला पत्र इसका एक उदाहरण है ।

पुस्तक भी संचार के महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं । किसी पुस्तक के माध्यम से लेखक अपने विचार को पाठकों तक पहुँचाता है । पुस्तक उसके विचारों को संरक्षित रखने में मदद करती हैं । इस तरह ज्ञान और स्मृतियों की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक यात्रा होती रहती है । छापेखाने के आविष्कार के पूर्व पुस्तकों की निर्माण-प्रक्रिया बहुत जटिल थी । पुस्तकों की हस्तलिखित प्रतियाँ तैयार करने में समय और श्रम लगता था । छापेखाने ने इस समस्या को दूर कर दिया, फलत: इनके माध्यम से संचार पहले की तुलना में अधिक सुलभ हो गया ।

समाचार पत्र संचार का सबसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण माध्यम है । समाचार पत्रों के उद्‌भव और विकास में छापाखाने की उल्लेखनीय भूमिका है । समाचार पत्र का प्रकाशन दैनिक होता है । जब इसका प्रकाशन सप्ताह में एक बार होता है तो उसे साप्ताहिक और जब पंद्रह दिनों में एक बार होता है तो उसे पाक्षिक कहा जाता है । महीने में एक बार प्रकाशित होनेवाले पत्र को मासिक पत्र कहा जाता है । दैनिक पत्र संचार के सबसे लोकप्रिय और त्वरित माध्यम होते हैं । इनमें स्थानीय से लेकर देश-विदेश की खबरें प्रकाशित होती हैं । खबरों की प्रस्तुति में जितनी व्यापकता इस माध्यम में होती है, वह दूसरे माध्यमों में नहीं मिलती । किसी गाँव या गली-मोहल्ले में घटनेवाली खबरों को दृश्य या श्रव्य माध्यम में इसके समान स्थान नहीं मिलता है ।

इसकी सीमा बताते हुए कहा जाता है कि प्रत्येक समाचार पत्र पिछले दिन की खबर देता है । इन खबरों को एक बार पढ़ लेने के बाद इनका महत्त्व लगभग समाप्त हो जाता है ।

समाचार पत्र में खबरों के अतिरिक्त लेख, रिपोर्ताज, साहित्य और विचारपरक रचनाएँ प्रकाशित होती हैं । इसमें पाठकों की रुचि का ध्यान रखा जाता है ।

विज्ञापन संचार का एक नवीन और महत्त्वपूर्ण माध्यम है । हम समाचार पत्रों से लेकर चौक-चौराहों सभी जगह इसे देखते हैं । विज्ञापनों के द्वारा कई उद्देश्यों की पूर्ति होती है । किसी वस्तु के विपणन से लेकर जनता के शिक्षण तक में इनका उपयोग किया जाता है । इनका स्वरूप सार्वजनिक होता है । लोगों को विषय के प्रति आकर्षित करना इनका उद्देश्य होता है अत: इनकी भाषा और प्रस्तुति जनसाधारण को प्रभावित करनेवाली होती है ।

(ख) श्रव्य संचार माध्यम : इसके अंतर्गत रेडियो, कैसेट तथा टेपरिकॉर्डर, फोन, मोबाइल आदि आते हैं । रेडियो इनमें सबसे प्रमुख माध्यम है । इसके आविष्कार ने आवाज को एक जगह से दूसरी जगह भेजना संभव किया । जहाँ से आवाज भेजी जाती है, वहाँ इसे ध्वनि तरंगों में परिवर्तित कर दिया जाता है, फिर जहाँ संदेश पहुँचाना होता है वहाँ रेडियो नामक यंत्र उन ध्वनि तरंगों को पुन: ध्वनि में परिवर्तित कर देता है । इस प्रक्रिया में न के बराबर समय लगता है । संचार की प्रक्रिया इस माध्यम के द्वारा तीव्र हो जाती है । इस माध्यम से प्रभावी संचार के लिए यह आवश्यक है कि संदेश का विषय स्पष्ट तथा भाषा बोधगम्य हो । रेडियो से समाचार, धारावाहिक, नाटक, गीत, भाषण, विज्ञापन आदि का प्रसारण होता है । रेडियो में प्रसारण के समय ही संदेश को समझना आवश्यक होता है । यदि उसका दुबारा प्रसारण न हो तो हमारे पास उसे समझने और सुनने का अवसर नहीं होता है । रेडियो की यह कमी टेपरिकॉर्डर से दूर होती है । इसके द्वारा संदेश को संरक्षित कर लिया जाता है और उसे आवश्यकतानुसार सुना जाता है । इन दिनों फोन, विशेषकर मोबाइल फोन, श्रव्य संचार के बेहद लोकप्रिय माध्यम बन गए हैं । विज्ञान और सूचना तकनीक के विकास ने इसे घर-घर पहुँचा दिया है । अब किसी की खोज खबर लेने में किसी प्रकार की असुविधा नहीं होती है । यह हमें अवसर देता है कि जिस तक संदेश पहुँचाना है, सीधे उसी से बात कर लें । इस सुविधा ने इसे अत्यंत लोकप्रिय बना दिया है । मोबाइल फोन बहुद्देश्यीय हो गए हैं । मोबाइल फोन से अब रेडियो भी सुना जाता है । विभिन्न प्रकार के विज्ञापनों के प्रसारण में भी इसका उपयोग किया जाता है ।

यह माध्यम उन लोगों के लिए भी उपयोगी है जो लिख-पढ़ नहीं सकते और जिन तक दृश्य माध्यम की पहुँच नहीं है । दृष्टिहीनों के लिए भी यह बहुत उपयोगी माध्यम है ।

(ग) दृश्य संचार माध्यम : संचार का तीसरा माध्यम है – दृश्य माध्यम । दृश्य माध्यम के अंतर्गत मुख्यत: सिनेमा और टेलीविजन आते हैं । सिनेमा अपने आप में एक माध्यम है जबकि टेलीविजन का उपयोग धारावाहिक, समाचार बुलेटिन, परिचर्चा, फिल्म, विज्ञापन आदि के प्रसारण के लिए होता है । सिनेमा को देखने के लिए पहले थिएटरों में जाना पड़ता था जबकि आजकल टेलीविजन ने यह अनिवार्यता समाप्त कर दी है । अब घर बैठकर भी सिनेमा देखा जाता है । इस माध्यम में दृश्यों के साथ-साथ ध्वनियों के लिए भी स्थान होता है पर केंद्रियता दृश्य को ही प्राप्त होती है । यह केवल पढ़ने या सुनने का अवसर नहीं देती है बल्कि चीजों को देखने का भी अवसर देती है । इसके कारण पिछले दोनों माध्यमों से इसकी विश्वसनीयता अधिक होती है । टेलीविजन के माध्यम से घटनाओं का सीधा प्रसारण किया जा सकता है । यह देश-भेद को समाप्त कर देता है । अपने घर में बैठकर हम दुनिया के किसी कोने में घट रही घटना को उसी समय देख सकते हैं । यह अनुभव संचार का कोई अन्य माध्यम नहीं देता है ।

टेलीविजन पर कई तरह के कार्यक्रम आते हैं । इनमें धारावाहिक, समाचार, खेल, संगीत कार्यक्रम, शैक्षिक कार्यक्रम आदि प्रमुख हैं । समाचारों और खेलों के लिए अब अलग चैनल हैं जो किसी घटना को तत्क्षण दर्शकों तक पहुँचा देते हैं । रेडियो के युग में श्रोता के पास अधिक विकल्प नहीं होते थे जबकि टेलीविजन के दर्शक के पास अधिक विकल्प होते हैं । वह देखकर किसी चीज की पुष्टि भी कर सकता है ।

इस माध्यम की कुछ सीमाएँ भी हैं । जिस तरह किसी समाचार पत्र या एक पुस्तक को हमेशा साथ में रखा जा सकता है उस तरह टेलीविजन हमेशा साथ में नहीं रखा जा सकता है । इसकी एक दूसरी सीमा यह भी है कि यदि किसी कार्यक्रम या समाचार का फिर से प्रसारण न हो तो एक बार चुक जाने पर वह अवसर हमेशा के लिए समाप्त हो जाता है । हालाँकि अब उसकी रिकार्डिंग की तकनीक आ गई है ।

टेलीविजन पर विज्ञापनों का प्रसारण खूब होता है । विज्ञापनों की सामग्री लिखित और श्रव्य माध्यम की ही तरह होती है । लेकिन अभिनेताओं की उपस्थिति से इसकी प्रभावान्विति बढ़ जाती है ।

16.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) संचार से आप क्या समझते हैं ।

(ख) संचार की क्या उपयोगिता है ।

(ग) संचार के लिखित माध्यम और दृश्य माध्यम की तुलना आप कैसे करेंगे ।

■■■

संक्षेपण

पाठ संरचना

17.0 उद्देश्य
17.1 व्युत्पत्ति एवं अर्थ
17.2 संक्षेपण के तत्त्व
17.3 संक्षेपण की विधि
17.4 संक्षेपण के भेद
17.5 संक्षेपण के उदाहरण
17.6 अभ्यास के प्रश्न

17.0 उद्देश्य

संक्षेपण किसी उद्धरण को संक्षिप्तता के साथ प्रस्तुत करने की कला है । इस इकाई में संक्षेपण से जुड़ी विभिन्न बातों का अध्ययन किया जाएगा । यहाँ संक्षेपण के अर्थ, इसके महत्त्वपूर्ण तत्त्वों, विधि एवं भेदों की जानकारी दी जाएगी ।

17.1 व्युत्पत्ति एवं अर्थ

'संक्षेपण' शब्द अंग्रेजी के 'प्रेसी' (Precis) का हिन्दी अनुवाद है । 'प्रेसी' मूलत: फ्रेंच भाषा के 'प्रेसीड्यूअर' शब्द से निकला है । अंग्रेजी में इस शब्द के भाव को व्यक्त करने वाला शब्द है - प्रिसाइज (Precise) । प्रिसाइज का अभिप्राय संक्षेप, संक्षिप्त, सार आदि से है । हिन्दी भाषा में यह शब्द संस्कृत के माध्यम में आया । इसे इस तरह से परिभाषित किया जा सकता है– "किसी लिखित सामग्री को मूल के लगभग एक-तिहाई भाग में, संक्षिप्त रूप में सहज भाषा और व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करना 'संक्षेपण' कहलाता है ।"

"संक्षेपण से अभिप्राय ऐसी रचना से है जिसमें किसी वक्तव्य, लेख, निबन्ध, अनुच्छेद आदि में व्यक्त किए गए भावों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जाता है । यह संक्षिप्त रूप स्वत:पूर्ण, स्पष्ट, तारतम्ययुक्त और प्रभावी होना चाहिए ।"

17.2 संक्षेपण के महत्त्वपूर्ण तत्त्व

संक्षेपक्षण के समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. किसी विषयवस्तु का मूल से संक्षिप्त होना 'संक्षेपण' का आधार स्तम्भ है । प्राय: मान्यता यह है कि संक्षेपण का कलेवर मूल का एक-तिहाई भाग होना चाहिए । किन्तु यह कोई अन्तिम और सर्वथा अनिवार्य नियम नहीं है । अर्थात 150 शब्दों के अनुच्छेद का संक्षेपण करते समय मात्र 50 शब्दों का निर्देश ही अन्तिम नहीं । 5-10 शब्दों के कम या अधिक हो जाने से संक्षेपण निरर्थक नहीं हो सकता ।

2. संक्षिप्तता का यह अर्थ कदापि नहीं है कि मूल अनुच्छेद की कुछ अपेक्षित बातें छूट जाएँ और कुछ आ जाएँ । उनमें से यदि कोई छूट जाता है तो संक्षेपण की उपयोगिता समाप्त हो जाती है । वस्तुत: संक्षेपण में न तो अपनी ओर से मूल्यांकन शैली में कुछ टिप्पणी की संभावना होती है और न ही निष्कर्ष की शैली में कोई निर्णय देने की ।

3. संक्षेपण की तीसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि जब हम मूल का संक्षिप्त रूप प्रस्तुत करते हैं तो उनकी उपयोगी, यथार्थ, और महत्त्वपूर्ण बातों में पारस्परिक बिखराव नहीं आना चाहिए । उनका आपसी तारतम्य भी बनना चाहिए ।

4. संक्षेपण को पढ़ते समय हमें मूल जैसे अनुच्छेद का आस्वाद मिलना चाहिए ।

5. मूल अनुच्छेद की सभी बातों को संक्षेपण में प्रस्तुत करते समय यह भी आवश्यक है कि सभी तथ्य स्पष्ट रूप में उभरने चाहिए । ऐसा न हो कि मूल की सहज स्पष्ट बातें संक्षिप्त रूप में आकर और उलझ गईं या समझ में नहीं आतीं । आवश्यकता तो इस बात की भी है कि मूल सामग्री को संक्षेपण में आकर सहज और सरल हो जाना चाहिए । दो या दो से अधिक अर्थ वाले द्वयर्थक शब्दों को नहीं चुनना चाहिए । शैली सरल और सर्वजन-सहज होनी चाहिए ताकि उसका अपेक्षित प्रभाव पड़ सके । उनमें कुछ अधूरा-सा या उलझा-सा न लगे । संक्षेपण की भाषा में अन्य पुरुष का प्रयोग होना चाहिए ।

17.3 संक्षेपण की विधि

संक्षेपण एक कला है । यह सामान्यत: मूल-अनुच्छेद का एक-तिहाई रूप होता है । यदि हमें किसी प्रस्तुत विषय-सामग्री का संक्षेपण करना पड़े तो उसके लिए विभिन्न नियमों की जानकारी होनी चाहिए । प्राय: इस रचना-प्रक्रिया का उपयोग करने से हम एक अच्छे संक्षेपणकार बन सकते हैं -

1. दिए हुए उद्धरण को ध्यान से दो-तीन बार या तब तक पढ़ना चाहिए, जब तक उस अवतरण का मूल भाव, मूल प्रतिपाद्य भली-भाँति स्पष्ट न हो जाए । पहले या दूसरे पाठ के पश्चात् महत्त्वपूर्ण शब्दों को रेखांकित करते जाना चाहिए । इसका लाभ यह होगा कि फिर पढ़ने पर सभी महत्त्वपूर्ण तथ्य जैसे – तिथियाँ, व्यक्तिवाचक, संज्ञाएँ, विशेषण, आंकड़े पारिभाषिक शब्द आदि को सरलता से ध्यान में रखा जा सके ।

2. बार-बार पढ़ने की प्रक्रिया में उस अनुच्छेद का शीर्षक भी चुनना चाहिए । कभी-कभी उपयुक्त शीर्षक की खोज करने से मूल-भाव को समझने में भी सुविधा हाती है । और यदि मूल प्रतिपाद्य स्पष्ट हो जाता है तो शीर्षक का चुनाव सहजता से हो सकता है । ये दोनों एक-दूसरे के अनुपूरक हैं । शीर्षक छोटा और मूल प्रतिपाद्य को पूर्णत: व्यक्त करनेवाला कोई शब्द या पदबंध होना चाहिए । वाक्य या वाक्यांश को शीर्षक बनाने से बचना चाहिए ।

3. गद्यांश के सभी महत्त्वपूर्ण तथ्य को रेखांकित कर लेने चाहिए किन्तु किसी भाव-विशेष को स्पष्ट करने वाले उदाहरण, उद्धरण अथवा कथांश को छोड़ देना चाहिए । कभी-कभी किसी सूत्र वाक्य को समझाने के लिए कई प्रकार की पुनरुक्तियाँ की जाती हैं, उन्हें भी छोड़ देना चाहिए या किसी एक सर्वश्रेष्ठ को चुन लेना चाहिए ।

4. मूल गद्यांश में चुनी हुई रेखांकित सामग्री को अब एक अन्य जगह उतार लेना चाहिए । उनमें आपसी तारतम्य बैठाना चाहिए । उसके तथ्यों के लिए सरल वाक्य बनाने चाहिए । प्राय: हम मूल सामग्री के उन चुने हुए वाक्य या वाक्यांशों को ज्यों का त्यों रख देते हैं और समझ लेते हैं कि संक्षेपण ठीक हो गया । यह बहुत बड़ा भ्रम है । इसलिए उनमें व्यवस्था बनाकर अपनी भाषा में उन्हें पुन: प्रस्तुत करना चाहिए ।

5. मूल उद्धरण में जो विचार संक्षिप्त या सूत्र रूप में अभिव्यक्त किए गए हों, उनकी व्याख्या नहीं करनी चाहिए ।

6. संक्षेपण में मुहावरे, लोकोक्तियों, आलंकारिक भाषा और द्वयर्थक शब्दों के चुनाव से बचना चाहिए । इससे संक्षेपण के दुरूह होने का खतरा बना रहता है ।

7. इसके बाद उन सभी तथ्यों को लेकर सहज, स्पष्ट और अन्य पुरुष की भाषा का प्रयोग करते हुए अन्तिम रूप में लिखना चाहिए । भाषा, वाक्य-संरचना संक्षेपणकार की अपनी होनी चाहिए ।

8. पुनरीक्षण करना संक्षेपण-विधि का अन्तिम और महत्त्वपूर्ण सोपान है । इसका अर्थ है अपने द्वारा प्रस्तुत विषय-सामग्री की उपयुक्तता का मूल्यांकन करना । हमें उस संक्षेपण को एक बार पढ़ना चाहिए और यह पता लगाना चाहिए कि यह अनुच्छेद की परिभाषा

के अन्तर्गत आता है या कोरा वाक्यों का समूह बनकर रह गया है । इसके वाक्य या वाक्यांशों में दूरान्वय दोष तो नहीं रह गया । कम महत्त्वपूर्ण बात पहले और अधिक महत्त्वपूर्ण बात बाद में तो नहीं आई । सभी महत्त्वपूर्ण तथ्य, जानकारियों का समावेश हो गया है या किसी कारणवश कोई छूट गई आदि । यदि ऐसा है तो उसे समाविष्ट कर लेना चाहिए ।

17.4 संक्षेपण के भेद

संक्षेपण प्राय: दो प्रकार का होता है – 1. धाराप्रवाह संक्षेपण, 2. सारिणी संक्षेपण । ऊपर की चर्चा धाराप्रवाह संक्षेपण पर आधारित है । सारिणी संक्षेपण में प्राय: कार्यालयों में प्राप्त होनेवाले आवेदन-पत्रों या अन्य अनेक प्रकार के पत्रों की विषयवस्तु का संक्षेपण एक तथ्यात्मक सारिणी तालिका बनाकर प्रस्तुत किया जाता है । जैसे तालिका के शीर्षक होंगे । क्रमांक/पत्र प्राप्ति की तिथि/पत्र का दिनांक/प्रेषक/प्राप्तकर्ता/संदर्भ/विषयवस्तु/आदि । इसी क्रम में 1, 2, 3....। सभी पत्रों का एक संक्षिप्त रूप हमारे सामने तैयार हो जाता है ।

17.5 संक्षेपण के उदाहरण

(1)

अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भारतीय उद्योग विदेशी उद्योगों से टक्कर लेने की क्षमता कैसे पैदा करें ? यह एक बहुत बड़ी चुनौती है । शुरू-शुरू में देश के अर्थ-तन्त्र में आधारभूत क्षेत्र के उद्योगों की स्थापना में सरकार ने मुख्य उद्यमी की महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाही । राष्ट्रहित में आधारभूत उद्योगों की आवश्यकता को समझते हुए बहुत से उद्योगों को अनेक प्रकार से संरक्षण प्रदान किया और देश-विदेश के प्रतिद्वन्द्वी उद्योगों द्वारा मुकाबले की चोट से बचाने की हरचंद कोशिश की गई । पिछले तीन दशकों में कुछ महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में कई उद्योगों ने काफी उन्नति की है । इलेक्ट्रॉनिक्स एवं बायोटेक्नोलॉजी आदि के क्षेत्र में नव्यतम उद्योगों के आगमन पर नजर दौड़ाई जाय तो राष्ट्र की विकास-यात्रा से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जाता ।

शीर्षक : भारतीय उद्योग की चुनौती

भारतीय उद्योग को विश्व-बाजार में टिकने के लिए कड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है । आरम्भ में सरकार ने राष्ट्रहित में आधारभूत उद्योगों की कई प्रकार से सहायता की, उसे प्रोत्साहन दिया । परिणामस्वरूप अनेक उद्योग उन्नत भी हुए । इलेक्ट्रॉनिक एवं बायोटेकनॉलोजी के क्षेत्र में भारतीय उद्योग की प्रगति विशेष सराहनीय है ।

(2)

मानव समाज की जटिल समस्याओं का निदान जानकर राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि विभिन्न स्तर पर उनका समाधान खोजने वाले दूरदर्शी नेता हर काल और हर देश में जन्म लेते रहे हैं । परन्तु मानवसमाज की समग्र प्रगति एवं सर्वांगीण विकास के लिए भौतिक पक्ष के साथ-साथ आध्यात्मिक तथा साहित्यिक पक्ष को सुदृढ़ करने की ओर प्राय: किसी का ध्यान नहीं गया । इस दृष्टि से गुरु गोविन्दसिंह की देन अभूतपूर्व तथा अद्वितीय कही जा सकती है । वे मूल रूप से सन्त थे । वे गुरुनानक देव के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी थे । धर्म और दर्शन में उनकी गहरी पैठ थी । एक अकाल पुरुष के परम भक्त, सिद्ध, धर्माचार्य होने के साथ-साथ वे परम वीर, निर्भय योद्धा, कुशल सेनानी तथा दूरदर्शी राजनीतिक नेता भी थे, किन्तु भक्ति और शक्ति की यमुना-गंगा में साहित्य की सरस्वती को मिलाकर गुरु गोविन्दसिंहजी ने विश्व के इतिहास में सर्वथा एक नया अध्याय जोड़ दिया ।

शीर्षक : गुरु गोविन्दसिंह की देन

मानव-समाज की विभिन्न समस्याओं को सुलझाने के लिए हर युग में अनेक विचारक होते रहे हैं, परन्तु उनका क्षेत्र प्राय: आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक ही रहा । गुरु गोविन्दसिंह ने मनुष्य-जीवन के आन्तरिक और बाह्य पक्ष के समन्वित विकास के साथ-साथ साहित्य और संस्कृति को भी महत्त्व दिया । गुरु गोविन्दसिंह के रूप में हमें भक्ति, शक्ति और सरस्वती के पवित्र संगम का साक्षात्कार होता है ।

17.6 अभ्यास के प्रश्न

(क) संक्षेपण से आप क्या समझते हैं । संक्षेपण की विधि का परिचय दें ।

(ख) नीचे दिए गए उद्धरणों का संक्षेपण करें–

(1)

भारत सौ अरब से अधिक जनसंख्या वाला देश है । यहाँ विभिन्न जातियों, धर्मों, मान्यताओं और संस्कृतियों के लोग निवास करते है । यह विभिन्नता ही इसकी पहचान है । कश्मीर से लेकर दक्षिण तक और कच्छ से लेकर कामरूप तक यदि भारत को पहचानने का क्रम आरंभ करें तो सहसा विश्वास नहीं होगा कि क्या सचमुच यह एक ही देश है या अनेक देशों का संगम है । इसकी यही संपदा देख महाकवि रविंद्रनाथ ठाकुर ने इसे 'महामानवेर समुद्र' कहा था । भारत की विभिन्नता समूचे संसार को अपनी ओर आकर्षित करती है । हमें इसका सदैव ध्यान रखना चाहिए कि यह अखंडित रहे । यदि इस विशिष्टता को भूला दिया जाएगा तो हम एकरंग और एक आचरण के हो जाएँगे । वह दिन हमारे लिए कतई सुखकर नहीं होगा । बापू भारत की इसी पहचान को बचाए रखाए चाहते थे । दुनिया का कोई भी मजहब, कोई भी संस्कृति ऐसी नहीं है जिसमें कुछ गुण न हों । हमें उनसे उनके गुणों को सीख लेना चाहिए । भारत की बौद्धिक संपन्नता के पीछे एक तत्त्व यह भी है । भारत ने अपने ज्ञान के दरवाजे कभी भी किसी के लिए बंद नहीं किए तो किसी से सीखने में भी अपनी हेठी नहीं मानी ।

(2)

यह एक सामान्य मान्यता है कि तीसरी दुनिया के देशों में मौसम का पूर्वानुमान न होने के कारण अचानक सूखाड़, बाढ़ या अन्य प्राकृतिक आपदा से लोगों को भूखा मरना पड़ता है । लेकिन वास्तविकता यह है कि तीसरी दुनिया में खाद्यान्न-उत्पादन के लिए मौसम बहुत अच्छा है । मौसम से लड़ने के लिए तीसरी दुनिया के किसानों ने सदियों के अनुभव से नई तकनीकें विकसित की हैं । लेकिन नियमित प्राकृतिक आपदाओं के लिए इनके पास कोई व्यवस्था नहीं है । इसीलिए इनसे सक्षम लोग उतना प्रभावित नहीं होते जितना कि साधनहीन गरीब आदमी । अतः लोग अपनी साधनहीनता के कारण भूख से मरते हैं । इसमें कोई संदेह नहीं कि गरीबी की समस्या जनसंख्या से जुड़ी है लेकिन यह भी सच है कि आज दुनिया में खाद्यान्न-उत्पादन प्रत्येक के पेट भरने की क्षमता से अधिक है ।

आधार पुस्तक

1. प्रयोजनमूलक हिंदी, डॉ0 राम प्रकाश, डॉ0 दिनेश गुप्त; राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली; 1998 ।

प्रारूपण

पाठ संरचना

18.0 उद्देश्य
18.1 प्रारूपन का अर्थ
18.2 एक अच्छे प्रारूप की पहचान
18.3 प्रारूप लेखन की रूप रेखा
18.4 प्रारूप लेखन की महत्त्वपूर्ण बातें
18.5 अभ्यास के प्रश्न

18.0 उद्देश्य

प्रारूपण सरकारी दस्तावेजों और प्रक्रियाओं का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा होते हैं । किसी भी प्रकार के आदेश, अधिसूचना आदि में इसकी आवश्यकता होती है । यह इकाई इसी बिंदु पर केंद्रित है । इस इकाई में प्रारुपण के अर्थ, रूपरेखा और उसे तैयार करते समय ध्यान में रखनेवाली महत्त्वपूर्ण बातों का अध्ययन किया जाएगा ।

18.1 प्रारूपण का अर्थ

प्रारूप को मसौदा या आलेख भी कहते हैं । इसके अन्तर्गत विभिन्न सरकारी पत्रों, परिपत्रों, आदेशों, अधिसूचनाओं, संकल्पों, सार्वजनिक सूचनाओं, करारों, प्रेस-विज्ञप्तियों तथा अन्य आवश्यक सूचनाओं आदि के प्रारूप तैयार करने होते हैं । अत: प्रारूप का सरल, सुबोध तथा सुस्पष्ट होना अत्यावश्यक है ।

प्रारूप या मसौदा तैयार करना - जिन मामलों में की जाने वाली कार्रवाई बिल्कुल स्पष्ट तथा निश्चित हो तब अधिकारी या प्राधिकारी के आदेश के अनुसरण में मसौदा तैयार किया जाता है । सरकारी कार्यालयों में सामान्यत: मसौदा सहायक अथवा समीक्षक या अनुभाग अधिकारी तैयार करते हैं । इसे अधिकारी अथवा उच्च अधिकारी के पास अनुमोदन के लिए भेज दिया जाता है । तैयार किये गये मसौदे के ऊपर दाहिनी ओर 'अनुमोदनार्थ मसौदा' अवश्य लिख दिया जाता है । आवश्यक टिप्पणी के साथ उच्चाधिकारी के पास जब मसौदा आता है तब यदि आवश्यक हो तो वह अधिकारी मसौदे में थोड़ा संशोधन अथवा थोड़ा-बहुत फेर-बदल कर अनुमोदित कर देता है ।

18.2 एक अच्छे प्रारूप की पहचान

एक अच्छे प्रारूप लेखन के लिए हमें इन बातों का ध्यान रखना चाहिए –

1. मसौदा लेखन की भाषा सरल, सुबोध तथा स्पष्ट होनी चाहिए ।
2. मसौदा संक्षिप्त और विषयानुसार होना चाहिए ।
3. मसौदा में समग्रता होनी चाहिए । साथ में इसमें, विषय-वस्तु तथा संदर्भ आदि की संरचना क्रमबद्ध होनी चाहिए ।
4. मसौदा लेखन में स्पष्टता, शुद्धता तथा विशिष्टता का निर्वाह किया जाना चाहिए ।
5. मसौदा लेखन में कार्यालयी भाषा शुचिता, सभ्यता, परम्परा तथा कार्यपद्धति का भी बखूबी निर्वाह किया जाना चाहिए ।

18.3 प्रारूप लेखन की रूपरेखा

किसी प्रारूप के प्रमुख भाग हैं – विषय, निर्देश, विषय-वस्तु-निरूपण, अनुच्छेद तथा समापन ।

विषय-सरकारी कार्यालयों में तैयार किये जानेवाले मसौदों के विषय भी आवश्यकतानुसार भिन्न-भिन्न होते हैं । मसौदे के विषयानुसार आंतरिक बातें एवं भाषा-शैली होती है ।

निर्देश-मसौदा तैयार करते समय यदि उसका संबंध पहले किसी पत्र या मामले से है तो उस प्रकार निर्देश दे दिया जाना उचित होता है । मसौदे के सर्वोपरि मध्य अथवा बाएँ कोने पर पत्र संख्या दी जाती है और तत्पश्चात् उसके नीचे मंत्रालय, विभाग अथवा कार्यालय आदि का नाम, स्थान, पता एवं दिनांक दिया जाता है । इसके बाद मसौदे की दायीं ओर अगली पंक्ति में पत्र-प्रेषक का स्थान और दिनांक के पश्चात् इसके ठीक नीचे प्रेषिती का नाम, पद और पूरा पता आदि दिया जाता है । यदि आवश्यक हो तो उसके बाद संदर्भ आदि भी यथास्थिति दे दिया जाता है ।

विषय-वस्तु निरूपण-यह मसौदा-लेखन का सबसे मूल एवं महत्त्वपूर्ण भाग होता है । प्रारूप के 'विषय' के अन्तर्गत लिखे संक्षिप्त कथन की पूरी विवरणात्मक जानकारी यहाँ दी जाती है । इसके पश्चात संबंधित विषय की पूरी तथ्यात्मक, विवेचनात्मक व मुख्य जानकारी का सर्वांगीण लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जाता है ।

अनुच्छेद-सामान्यत: प्रारूप-लेखन में भी विषय की आवश्यकता के अनुसार अनुच्छेद किये जाते हैं । प्रारूप तैयार करते समय ऐसे लंबे प्रारूपों को अनेक अनुच्छेदों में विभाजित किया जाना चाहिए तथा ऐसे अनुच्छेदों को क्रमांक भी दिये जाने चाहिए जिससे विषय-वस्तु के आकलन में सुविधा होती है ।

समापन-मसौदा लेखन में समापन का भी अपना एक महत्त्व होता है । मसौदे में मुख्य विषयवस्तु के निरूपण के बाद निष्कर्ष के रूप में अन्तिम बात को संक्षेप में कहा जाता है और तत्पश्चात् स्वनिर्देश के नीचे प्राधिकारी द्वारा हस्ताक्षर किये जाते हैं ।

18.4 प्रारूप तैयार करने के लिए महत्त्वपूर्ण बातें

1. मसौदा हाथ से लिखा जाता है या टाइप भी किया जा सकता है ।

2. तैयार किये गए मसौदे के साथ 'अनुमोदनार्थ मसौदा' जैसे शब्दों की चिट लगायी जानी चाहिए ।

3. मसौदे में स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए कि मूल पत्र के साथ क्या-क्या संलग्न किया जा रहा है । अत: प्रारूपों के अन्त में बाएँ कोने में संलग्न पत्रों की जानकारी दे देनी चाहिए ।

4. फाइल में रखकर अनुमोदनार्थ प्रस्तुत किये जाने वाले मसौदों पर फाइल पर संख्या अवश्य लिखी जानी चाहिए ।

5. मसौदे की भाषा सरल, संयत, विनम्र, स्पष्ट, संक्षिप्त तथा शिष्ट होनी चाहिए ।

6. अर्द्धसरकारी पत्र को छोड़कर कोई भी सरकारी पत्र अधिकारी के व्यक्तिगत नाम से कभी भी नहीं भेजा जाना चाहिए । सरकारी पत्र हमेशा पदनाम तथा कार्यालय के नाम से ही भेजे जाने चाहिए ।

7. मसौदा-लेखन में तथ्यों, कथ्यों, विचारों तथा भावों की पुनरावृत्ति नहीं की जानी चाहिए ।

18.5 अभ्यास के प्रश्न

(क) प्रारूपण किसे कहते हैं ।

(ख) प्रारूप लेखन के लिए किन-किन चीजों का ध्यान रखना चाहिए ।

आधार पुस्तक

1. प्रयोजनमूलक हिंदी; विनोद गोदरे; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; 2009 ।

2 प्रयोजनमूलक हिंदी : सिद्धांत और प्रयोग; दंगल झाल्टे; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; 2009 ।

पल्लवन

पाठ संरचना

19.0 उद्देश्य
19.1 पल्लवन का अर्थ
19.2 पल्लवन की विधि
19.3 पल्लवन के उदाहरण
19.4 अभ्यास के प्रश्न

19.0 उद्देश्य

पल्लवन लेखन रचनात्मक लेखन का एक महत्त्वपूर्ण कौशल है । इस इकाई में पल्लवन के अर्थ एवं इसकी विधियों से परिचित हुआ जाएगा ।

19.1 पल्लवन का अर्थ

संक्षेपण से उलटी लेखन-प्रक्रिया का नाम पल्लवन है । संक्षेपण में एक बड़ी और लंबी-सी रचना को छोटा (संक्षिप्त) करना होता है, तो इसके ठीक विपरीत पल्लवन में एक संक्षिप्त-सी रचना या उक्ति को विस्तार से बताना पड़ता है । पल्लवन का अर्थ है फलना-फूलना, पनपना । एक छोटे से सूत्र, सूक्त, फार्मूला या सुभाषित में इतने गहन भाव या विचार निहित रहते हैं कि वे आसानी से समझ में नहीं आते । जब आप चिंतन-मनन द्वारा अपना ध्यान लगाते हैं तो उनके अर्थ खुलते हैं पौधे के पत्तों और फल-फूलों की तरह, और फिर फूलों की पंखुड़ियों की तरह अनेक सहचर भाव तथा विचार आने लगते हैं । प्राय: सिद्धहस्त लेखक और मनीषी वक्ता कम से कम शब्दों में ऐसी गूढ़ बातें कह जाते हैं जो उस भाषा की सूक्तियाँ बन जाती हैं । प्राय: रहीम और वृंद जैसे कवि अपने दोहा में, कबीर अपनी साखियों और सबदों में, तुलसी अपनी चौपाइयों या दूसरे छंदों में, कुछ अन्य लेखक अपनी कृतियों में, कोई महापुरुष अपने प्रवचनों या भाषणों में एक-आध वाक्य में इतनी बड़ी बात कह जाते हैं कि उसकी व्याख्या करने की गुंजाइश रहती है, उस उक्ति के भाव को स्पष्ट करना पड़ता है । इसी प्रक्रिया को पल्लवन कहते हैं, अर्थात् किसी सूत्रबद्ध और सुगठित भाव या विचार को विस्तार से प्रस्तुत करना ।

इस प्रकार पल्लवित गद्यांश एक छोटा-सा निबंध हो जाता है ।

19.2 पल्लवन की विधि

1. दिए गए वाक्य या सुभाषित को अच्छी तरह पढ़िए और उस पर चिंतन-मनन कीजिए ताकि उसका अर्थ और अभिप्राय पूरी तरह से समझ में आ जाए ।

2. सोचिए कि इस उक्ति के अंतर्गत क्या-क्या विचार या भाव आ गए हैं और आपके मन में इसके पक्ष में क्या-क्या विचार प्रस्फुटित होते हैं । क्या आप इस मूल कथन की पुष्टि में कोई उदाहरण, दृष्टान्त या प्रमाण दे सकते हैं ?

3. विस्तार उसी बात का होना चाहिए जो मूल में हो; जोड़ना उतना है जो निश्चित रूप से उसी विषय के अनुकूल हो ।

4. आप यह समझ लीजिए कि मूल उक्ति किसी लंबी-चौड़ी बात का निष्कर्ष स्वरूप है । सोचिए कि विचारों के किस क्रम से यह बात अंत में कही गई होगी ।

5. इसके बाद लिखना शुरू करें । आपका लेख कितना बड़ा हो, इस बारे में कोई नियम नहीं है । एक पैराग्राफ भी हो सकता है, दो-तीन भी । आप अलग-अलग छोटे-छोटे पैराग्राफ लिखिए और देखते जाइए कि मूल की सब बातें आ गई हैं । यदि कोई निर्देश न हो तो तीन-साढ़े-तीन सौ शब्द काफी समझे जाएँ ।

6. आप अपने लेख की पुष्टि में ऐसे उद्धरण भी दे सकते हैं जिनकी संगति उस विषय से निश्चित हो ।

7. अप्रासंगिक बातें मत उठाएँ, उक्ति की आलोचना या टीका-टिप्पणी या विरोध न करें ।

8. मैं और हम का प्रयोग भूलकर भी न करें । अन्य पुरुष में बात करें ।

9. भाषा सरल, शुद्ध और स्पष्ट होनी चाहिए । अलंकृत भाषा से बचें । छोटे-छोटे वाक्य अच्छे होते हैं ।

10. लेख में कोई विचार, वाक्य या वाक्यांश दोहराया न जाए ।

11. अपना लेख एक बार दोहरा लें । कोई शब्द या मात्रा या विराम-चिह्न छूट गये हों तो ठीक कर लें ।

19.3 पल्लवन के उदाहरण

वही मनुष्य है जो मनुष्य के लिए मरे

अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति सभी पशु-पक्षी और कीड़े-मकोड़े भी कर लेते हैं, परंतु मनुष्य सबसे अधिक सामाजिक और सहकारिता-परायण जीव है, इसलिए इसकी परम विशेषता यह है कि स्वार्थ-साधना करते हुए वह दूसरों के हित के कार्य करता रहता है । वह कुएँ खुदवाता है, तालाब, सराय और धर्मशालाओं का निर्माण करवाता है, तथा ऐसे कई काम करता है जिनसे प्राणीमात्र को सुख मिले । यही मानव जीवन की सार्थकता है, यही मानवता है । जो भूखे को अन्न, प्यासे को पानी, नंगे को कपड़ा, बीमार को दवा और अशरण को शरण देता है, ऐसा मनुष्य धन्य है । अपने लिए जीना और फिर अपने लिए मर जाना तो कोई सार्थक जीना-मरना नहीं है । यह तो पशु जीवन भोगना है । मनुष्यता इसमें है कि जीते-जी यथाशक्ति दूसरों की सेवा करे, और आवश्यकता पड़े तो परहित में अपनी जान तक न्योछावर कर दे । दधीचि ऋषि ने देवताओं की रक्षा के लिए इंद्र को अपनी हड्डियाँ प्रदान कर दीं जिनका धनुष बनाकर देवहंता वृत्रासुर का वध किया गया । महाराज शिवि ने कबूतर की जान बचाने के लिए उसके बदले पहले अपना मांस और फिर सारा शरीर बाज पक्षी के सुपुर्द कर दिया । हमारे इतिहास के मध्यकाल में सिखों के नौवें गुरु तेग बहादुर जी ने कश्मीरी पंडितों पर किये जानेवाले मुगल अत्याचार न सहन कर विरोध किया और उन शासकों के पिंजरे में पड़कर अपने प्राण दे दिए । आधुनिक काल में महात्मा गांधी ने आपसी सद्भाव के लिए अपनी जान दे दी । गणेश शंकर विद्यार्थी भी सांप्रदायिक सद्भाव की रक्षा करते-करते मारे गए । ये महामानव आज अमर हैं । कुत्ता और घोड़ा दो ऐसे जानवर हैं जो अपने स्वामी के लिए जान की बाजी लगा देते हैं, पर आज मनुष्य इन पशुओं से भी गया-बीता है जो स्वार्थांधता के कारण किसी के काम नहीं आता । मानव धर्म यह है कि परहित-साधना के लिए स्वार्थों का बलिदान कर दे ।

जब आवे संतोष धन सब धन धूरि समान

धन अनेक प्रकार के हैं- हाथी, घोड़े, गायें, मोटरें, मकान, भूमि, विद्या, यश सब धन हैं । हम दिन-रात ऐसे ही धन जमा करने के चक्कर में पड़े रहते हैं, परंतु चैन नहीं मिलता । कुछ और अधिक पाने की लालसा बनी रहती है, और बढ़ती रहती है । जिसके पास सैंकड़े हैं वह हजार के चक्कर में है, हजारों वाला लाखों की चाह में और लाखों वाला करोड़पति हो जाने की फिक्र में रहता है । ऐसे कृत्य में प्रायः वह अपना स्वास्थ्य बिगाड़ लेता है, टैक्सों से बचने के लिए बेईमानी करता है । सरकारी नौकरी या अफसर है तो 'ऊपर की आमदनी' बढ़ाने की जुगाड़ करता है । व्यवसायी है तो माल में मिलावट करता है और झूठ एवं ठगी से धन संग्रह करना चाहता है । इसीलिए कि जो सीधे ढंग से कमाता है उससे उसका खर्चा नहीं चलता, और खर्च इसलिए पूरा नहीं पड़ता कि वह देखा-देखी अपनी आवश्यकताएँ बढ़ाता जा रहा है । न ढेरों वस्तुएँ और नाना मशीनें या उपकरण पाकर उसे संतोष है, न वह अपनी आय से संतुष्ट है । न उसे शारीरिक सुख है, न मानसिक । सुख उसके लिए मृगतृष्णा है । संतों ने हमें अपरिग्रह की शिक्षा दी है । जितना पाते हो,

उतने में संतुष्ट रहो । साईं इतना दीजिए जामें कुटुम समाये । मैं भी भूखा न रहूँ साधू न भूखा जाए । बस । कमाइए, खाइए पर एक हद बाँधकर । संतोषी जीव न भाग्यवादी है, न आलसी । वह अनावश्यक चीज के पीछे नहीं पड़ता । वह अपने में संतुष्ट है । उसे संतोष रूपी ऐसा धन मिल गया जो सुखप्रद है और जिसकी तुलना में बाकी सब तरह के धन धूल के समान हैं ।

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत

कर्म क्षेत्र में तीन तरह के लोग आते हैं । एक वे जो काम के बारे में खूब सोचते हैं, योजना बनाते हैं, परंतु यह विचार करके कि इसमें इतनी कठिनाइयाँ हैं, इतने विघ्न पड़ सकते हैं, तो सारा प्रयास व्यर्थ जाएगा । काम को शुरू ही नहीं करते । ये लोग बुजदिल हैं । ऐसे लोग अकर्मण्य कहलाते हैं । इनमें हिम्मत ही नहीं है । ये लोग जीवन में कभी सफल नहीं हो सकते । दूसरे वे लोग हैं जो काम को शुरू तो कर देते हैं, किंतु जब विघ्न-बाधाएँ आ पड़ते हैं और थोड़ा बहुत नुकसान हो जाता है, तो काम को बीच में ही छोड़ देते हैं । ये अपनी हार मान बैठते हैं । इनका किया-कराया बेकार जाता है । ये लोग भी जीवन में कुछ नहीं कर पाते । सफल वही होते हैं जो कोई काम शुरू करते हैं तो उसे खत्म करके छोड़ते हैं । कितनी ही मुश्किलें आ पड़ें, उनका उत्साह भंग नहीं होता । मन में वे हार मानते ही नहीं । लगे रहते हैं, तो लगे ही रहते हैं । गिरते हैं उठ खड़े होते हैं । हिम्मत को हाथ से नहीं जाने देते । अनेक वैज्ञानिक और आविष्कारक प्रयोगशालाओं में एक प्रयोग करते हैं, तो कुछ हाथ नहीं आता । वे दूसरा, तीसरा, ...आठवाँ दसवाँ भी करते चलते हैं, जब तक उन्हें सफलता नहीं मिलती । दार्शनिक और ऋषि मुनि कोई समस्या, कोई प्रश्न उठा लेते हैं और जब तक उसका हल नहीं पा लेते, चिंतन-मनन करते रहते हैं । धरती से सोना, हीरा, तेल और नाना धातुएँ खोजने वालों की यही कहानी है । कई रोगी इच्छाशक्ति के बल पर रोग से मुक्ति पा जाते हैं । विश्व के इतिहास में कई योद्धा हुए हैं जिन्होंने हार को कभी स्वीकार नहीं किया और अंततः विजयी हुए । उनका संकल्प रहा है कि किसी भी लड़ाई में तब तक पराजय नहीं माननी चाहिए जब तक विजय न हो जाए । संकल्प में बड़ी शक्ति है । जो अपने संकल्प में दृढ़ रहते हैं वे विजय प्राप्त कर ही लेते हैं ।

19.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) पल्लवन से आप क्या समझते हैं ।

(ख) पल्लवन करें – समरथ को नहीं दोष गुसाई, आया है सो जाएगा राजा, रंक, फकीर, पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं ।

आधार पुस्तक

1. हिंदी संक्षेपण, पल्लवन और पाठबोधन; डॉ० हरदेव बाहरी; अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद ।

■■■

मुहावरे

पाठ संरचना

20.0 उद्देश्य
20.1 मुहावरे की परिभाषा एवं विशेषताएँ
20.2 कुछ प्रमुख मुहावरे
20.3 अभ्यास के प्रश्न

20.0 उद्देश्य

मुहावरे किसी भी भाषा की विलक्षण संपत्ति होते हैं । इस इकाई में हम मुहावरे के अर्थ एवं उसकी विशेषताओं से परिचय प्राप्त करेंगे । हिंदी के मुहावरों का कोश बहुत विशाल है । इस इकाई में हिंदी के कुछ प्रमुख मुहावरों से भी परिचित हुआ जाएगा ।

20.1 मुहावरे की परिभाषा एवं विशेषताएँ

'मुहावरा' अरबी भाषा के शब्द 'मुहावर:' से बना है । यह एक ऐसे वाक्यांश को कहते हैं, जो सामान्य अर्थ का बोध न कराकर किसी विलक्षण अर्थ का बोध कराए । मुहावरे के प्रयोग से भाषा में सरलता, व्यंजकता, सरसता और गति आ जाती है ।

मुहावरों की विशेषताएँ हैं–

(क) मुहावरों का प्रयोग हमेशा संदर्भ के साथ होता है । 'आँख मारना' एक मुहावरा है पर इसका अर्थ बिना किसी संदर्भ के समझ में नहीं आ सकता है । जब यह कहेंगे कि 'मोहन ने गणेश को आँख मारकर बुलाया' तब इसका अर्थ समझ में आएगा ।

(ख) मुहावरों में शब्दों का परिवर्तन नहीं होता है । जैसे 'आँख मारना' के स्थान पर 'नयन मारना' नहीं कह सकते हैं । मुहावरे जिस रूप में प्रचलित होते हैं, उसमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता है ।

(ग) मुहावरों के शाब्दिक अर्थ से उसके वास्तविक अर्थ का पता नहीं चल सकता है । जैसे, नाक का बाल होना । मुहावरों का अर्थ उसके अवबोधक अर्थ से प्राप्त करना चाहिए न कि इसके शाब्दिक अर्थ से ।

(घ) मुहावरे जनता की भाषिक शक्ति के परिचायक होते हैं । जिस समाज में भाषायी विविधता, संपर्क, विचार-विनिमय, तर्क शक्ति और कल्पना शक्ति अधिक से अधिक होगी, उस समाज में मुहावरों की संभावना अधिक होगी । जिस समाज में कहानियों के लिए, गप्प रसाने के लिए अधिक अवसर होंगे वहाँ मुहावरे अधिक होंगे । जो समाज श्रमशील होगा, उसके पास अधिक मुहावरे होंगे ।

(ङ) मुहावरे सामाजिक अंत:क्रिया से जन्म लेते हैं । कोई भी समाज अपनी जीवन-प्रक्रियाओं के अनुरूप मुहावरे गढ़ता है । इसका कोई नियत समय नहीं होता है ।

(च) हिंदी के अनेक मुहावरे शरीर के अंगों पर आधारित हैं । यह बात दूसरी भाषाओं में भी है ।

20.2 कुछ प्रमुख मुहावरे

अंक भरना (स्नेह से लिपटा लेना)- माँ ने देखते ही बेटी को अंक भर लिया ।

अंगूठा दिखाना (समय पर धोखा देना)- उसने अपना काम निकाल लिया और जब मुझे उसकी जरूरत पड़ी है तो वह अंगूठा दिखा रहा है ।

अपना उल्लू सीधा करना (अपना काम निकालना)-अपना उल्लू सीधा करने के लिए वह किसी की भी चापलूसी कर सकता है ।

अपनी खिचड़ी अलग पकाना (अपना ही स्वार्थ देखना)- यदि सब के सब अपनी खिचड़ी अलग-अलग पकाने लगेंगे तो देश-दुनिया की कौन सोचेगा ।

आँख मारना (इशारा करना)- वहाँ बहुत भीड़ थी इसलिए उसने आँख मारकर मुझे बुलाया ।

आँखों का काँटा होना (बिलकुल पसंद न करना)- वह मुझे तनिक न सुहाता है, वह मेरी आँखों का काँटा हो गया है ।

आस्तीन का साँप (किसी अपने का कपटी होना)- उसे तुम अपना सच्चा मित्र समझते थे; यह संकट तो उसी का लाया हुआ है । वह तो आस्तीन का साँप है ।

आसमान टूट पड़ना (बड़ी संकट का आ जाना)- बिल्ली आज दूध क्या पी गई, उसे हायतौबा मचाते देख ऐसा लगा मानो उस पर आसमान ही टूट पड़ा हो ।

ईंट से ईंट बजाना (शत्रु को बर्बाद कर देना)- उसने अपने पराक्रम से विरोधी पक्ष की ईंट से ईंट बजा दी ।

ईद का चाँद होना (बहुत दिनों पर दिखना)- तुम उस मुहल्ले में जाकर क्या रहने लगे, लगता है जैसे ईद के चाँद हो गए हो ।

उड़ती चिड़िया पहचानना (पारखी होना)- श्यामबाबू के सामने ज्यादा तेज न बनना, वे उम्रदराज हैं और उड़ती चिड़िया को पहचानना जानते हैं ।

उल्लू का पट्ठा (मूर्ख)- वह तो पूरा उल्लू का पट्ठा है । एक काम उससे सही से नहीं हो पाता है ।

एक आँख से देखना (बराबर मानना)- माँ-बाप अपने सभी बच्चे को एक आँख से देखते हैं ।

कपास ओटना (व्यर्थ कार्य करना)- तुम व्यर्थ ही कपास ओट रहे हो, कुछ सही काम करो जिससे घर चले ।

कलई खुलना (वास्तविकता की पहचान)- वह ढोंगी था, आज उसकी कलई खुल गई ।

कलेजे पर साँप लोटना (डाह करना)- जो सब तरह से भरा पूरा है, दूसरे के आगे बढ़ने पर उसके कलेजे पर भला साँप क्यों लोटेगा ।

कलेजा ठंडा होना (संतोष होना)- पड़ोसियों की लड़ाई का क्या कहना, एक के घर में आग लगी; तो दूसरे के कलेजे को ठंडक मिली ।

कान भरना (पीठ पीछे शिकायत करना)- मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो तुम मेरे खिलाफ सब की कान भरते रहते हो ।

काम तमाम होना (समाप्त करना)- आज उसने अपने शत्रु का काम तमाम कर दिया ।

कीचड़ उछालना (आरोप लगाना, निंदा करना)- तुम व्यर्थ ही उस निर्दोष पर कीचड़ उछाल रहे हो ।

कोल्हू का बैल होना (कठिन परिश्रमी)- दिन रात कोल्हू के बैल की तरह खटने के बाद भी उसे पूरी मजदूरी नहीं मिलती ।

खेत रहना (वीरगति प्राप्त करना)- युद्ध-क्षेत्र में अपनी वीरता दिखाते हुए वह खेत रहा ।

खेल बिगाड़ना (काम बिगाड़ना)- मैंने पूरी तैयारी कर ली थी, पर इस वर्षा ने तो मेरा सारा खेल ही बिगाड़ दिया ।

खाक छानना (भटकना)- नौकरी की खोज में उसने कहाँ की खाक न छानी ।

खाक में मिलना (मर जाना, समाप्त हो जाना)- इस दुनिया में कोई भी हमेशा के लिए नहीं आया है । चाहे राजा हो या रंक, सबको खाक में मिलना है ।

गला छूटना (पिंड छूटना)- उसका कर्ज लौटाए बिना उससे गला छूटना आसान नहीं है ।

गड़े मूर्दे उखाड़ना (दबी हुई बात को फिर से उठाना)- भारत और पाकिस्तान को गड़े मूर्दे न उखाड़कर नए संबंध बनाने चाहिए।

गाँठ का पूरा होना (धनी होना)- मदन भले अनपढ़ है, लेकिन आपने उसकी शानो-शौकत नहीं देखी है। वह गाँठ का पूरा है।

गुड़-गोबड़ करना (बर्बाद करना)- लड़के के घरवालों ने अपनी बेवकूफी से शादी के मौके पर सब गुड़-गोबर कर दिया।

गुलर का फूल होना (अलभ्य वस्तु)- कस्तूरी अब तो बाजार में गुलर का फूल हो गई है।

घाट-घाट का पानी पीना (अनुभवी होना)- अब, तुम मुझे क्या बेवकूफ बनाओगे। मैं खुद ही घाठ-घाट का पानी पिए हुए हूँ।

घाव हरे होना (दुख याद आना)- वर्षों से अशांत कश्मीर शांत हो रहा था। पर ताजा हिंसा ने उसके घाव फिर हरे कर दिए।

घोड़े बेचकर सोना (बेफिक्र होना)- परीक्षा की समाप्ति के बाद वह घोड़े बेचकर सो रहा है।

घी के दिए जलाना (खुशी मनाना)- राम के अयोध्या लौटने पर अयाध्यावासियों ने घी के दिए जलाए।

चादर तान के सोना (चिंतामुक्त)- सबका कर्ज चुका देने पर वह आजकल चादर तान के सोता है।

चार दिन की चाँदनी (क्षणिक खुशी)- यह चुनावों का मौसम है, इसलिए बिजली भी है; वरना मानो यह तो चार दिन की चाँदनी है।

चाँदी काटना (सुखद जीवन बिताना)- राजनीतिज्ञ और नौकरशाह ही तो आजकल चाँदी काटते हैं।

चिराग तले अँधेरा (ज्ञानी के पास अज्ञानी का होना)- उसके पिता कितने ज्ञानी हैं, पर वह महामूर्ख! इसे ही कहते हैं, चिराग तले अँधेरा!

छक्के छूटना (बुरी तरह पराजित होना)- उसने अपनी वीरता से शत्रुओं के छक्के छुड़ा दिए।

जहर उगलना (अपमानजनक बात कहना)- आजकल के नेता चुनावों में विरोधियों पर कितना जहर उगलते हैं।

जान पर खेलना (साहसिक कार्य)- उसने जान पर खेलकर आग लगे घर से बच्चे को बचा लिया।

टाँग अड़ाना (अड़चन डालना) - सड़क के निर्माण का ठेका मनोहर को न मिला तो वह अब इस काम में टाँग अड़ाने लगा है ताकि यह काम हो ही नहीं।

तूती बोलना (प्रभाव होना)- आजकल हर क्षेत्र में अमेरिका की ही तूती बोलती है।

तीन तेरह होना (तितर-बितर होना)- जोर की वर्षा ने समूचे आयोजन का तीन-तेरह कर दिया।

तिल का ताड़ करना (छोटी बात को भी तूल देना)- कुछ लोग इसी ताक में ही रहते हैं कि कब उन्हें मौका मिले और किसी मतभेद को तिल का ताड़ बना दें।

दिन दूना रात चौगुना (खूब उन्नति)- उसकी दिन दूना रात चौगुना प्रगति के पीछे उसकी कड़ी मेहनत है।

दो टूक बात कहना (स्पष्ट कहना)- वह दो टूक बात कहने वाला व्यक्ति है, झूठ बोलना या बात बनाना वह नहीं जानता है।

दूध का दाँत न टूटना (ज्ञानहीन होना)- उसकी मूर्खताओं पर ध्यान न दीजिए; उसके तो अभी दूध के दाँत भी नहीं टूटे हैं।

नाक कटना (बदनामी होना)- उसकी गलत हरकतों से उसके पिता की नाक कट गई है।

नाक का बाल होना (बहुत प्यारा होना)- वह अपने माता-पिता के नाक का बाल है।

नौ-दो ग्यारह होना (भाग जाना)- पुलिस को देखते ही चोर नो-दो ग्यारह हो गया।

नाच नचाना (तंग करना)- इस मामूली से काम के लिए अधिकारी पिछले तीन सप्ताह से उसे नाच नचा रहे हैं।

पेट में चूहे कूदना (जोरों की भूख)- मेरे पेट में चूहे कूद रहे हैं, तीन दिन से कुछ नहीं खाया है।

पहाड़ टूटना (भारी विपत्ति आना)- उसका जवान बेटा क्या मरा, उस पर तो दुखों का पहाड़ ही टूट पड़ा !

पौ बारह होना (खूब लाभ होना)- अभी लगन का समय है, और व्यापारियों की तो पौ-बारह है ।

पाँचों उँगलियाँ घी में (पूरा लाभ)- एक ही साल में चुनाव, बाढ़ और सूखाड़; भ्रष्ट अधिकारियों की तो पाँचों उँगलियाँ घी में हैं ।

पगड़ी रखना (इज्जत रखना)- इस समय पैसे से मेरी मदद कर तुमने मेरी पगड़ी रख ली नहीं तो मैं बेटी का ब्याह कैसे कर पाता ।

मुँह की खाना (बुरी तरह हारना)-- क्रिकेट मैच में मोहन की टीम को मुँह की खानी पड़ी ।

रास्ता देखना (प्रतीक्षा करना)- गोपियाँ कृष्ण का रास्ता देखती रह गईं पर वे नहीं आए ।

लोहा मानना (श्रेष्ठ मानना)- बिहारियों की प्रतिभा और मेहनत का सभी लोहा मानते हैं ।

श्रीगणेश करना (आरंभ करना)- नए सत्र का श्रीगणेश कब से हो रहा है ?

सफेद झूठ (सरासर झूठ)- यह सफेद झूठ है कि मैंने उसे मारा, आज तो मेरी उससे भेंट भी नहीं हुई है ।

20.3 अभ्यास के प्रश्न

(क) मुहावरों से आप क्या समझते हैं । मुहावरों की विशेषताएँ बताइए ।

(ख) वाक्य-प्रयोग द्वारा इनका अर्थ स्पष्ट करें–

ईद का चाँद होना, आसमान टूट पड़ना, अपनी खिचड़ी अलग पकाना, नाक का बाल होना, पौ बारह होन, नौ-दो ग्यारह होना, आँख मारना ।

■■■

लोकोक्ति

पाठ संरचना

21.0 उद्देश्य
21.1 लोकोक्तियों का अर्थ एवं महत्त्व
21.2 कुछ प्रमुख लोकोक्तियाँ
21.3 अभ्यास के प्रश्न

21.0 उद्देश्य

मुहावरों की तरह लोकोक्तियाँ भी किसी भाषा और समाज की थाती हैं । इस इकाई में लोकोक्तियों के अर्थ एवं महत्त्व से परिचित हुआ जाएगा और हिंदी की कुछ प्रमुख लोकोक्तियों से अवगत हुआ जाएगा ।

21.1 लोकोक्तियों (कहावतों) का अर्थ एवं महत्त्व

दुनिया की सभी संस्कृतियों और भाषाओं में कहावतों का महत्त्वपूर्ण स्थान है । ब्रजमोहन पांडेय 'नलिन' के अनुसार, "कहावतों मे जीवन का यथार्थ सत्य, गंभीर अनुभव, सांसारिक व्यवहार-पटुता, अनुभूत चिरंतन सत्य की अलौकिकता, तर्क-वितर्कों के समाधान की युक्तिमता का जैसा अपूर्व निर्देशन हमें प्राप्त होता है, वैसा अन्यत्र सर्वथा अप्राप्य है । मानव-स्वभाव और व्यवहार-पटुता के अप्रतिम प्रतिमान के रूप में ये कहावतें पीढ़ी-दर-पीढ़ी अबाधगति से प्रचलित होकर पूर्वजों से रिक्त के रूप में प्राप्त होती हैं । कहावतें प्रखर आलोक-दीप की तरह हैं, जिनमें सघन अंधकार से भरे अतीत को उद्भासित करने की दीप्ती भरी है ।"

कहावतें सूत्र शैली में होती हैं । इनमें संक्षिपत्ता होती है । ये गागर में सागर के समान होती हैं । ये सोद्देश्य होती हैं । कहावत के लिए लोकोक्ति शब्द भी प्रचलित है । 'लोकोक्ति' और 'लोक' और 'उक्ति' की संधि से बना है । इसका अर्थ है लोक का कथन । लोकोक्ति के पीछे कोई न कोई घटना होती है । वह घटना ही लोक-स्मृति में ठहरकर 'लोकोक्ति' हो जाती है । कहा गया है– लोकप्रवादानुकृति लोकोक्तिः । अर्थात, लोकप्रवाद की अनुकृति लोकोक्ति है । लोकोक्तियाँ जीवन के बाह्य और आंतरिक ज्ञान का कोष होती हैं ।

विद्वानों ने कहावत शब्द को कथावत, कथापत्य, कथावस्तु, कथापुत्र, कथावृत्त, कधापयंत, कथावार्त्ता आदि शब्दों से व्युत्पन्न माना है ।

कहावतों का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है । मुहावरे स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त नहीं होते हैं जबकि कहावत स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त होते हैं । इनके प्रयोग से समूचा संदर्भ स्पष्ट हो जाता है । कहावतें उस समाज की उपज हैं जो अपने अनुभवों से सीखने के लिए तैयार होता है और अपने अनुभवों को सूत्र-रूप में कहने की क्षमता रखता है ।

21.2 कुछ प्रमुख लोकोक्तियाँ

अधजल गगरी छलकत जाए (सामर्थ्य से अधिक प्रदर्शन)- उसके पास कुछ पैसे हो गए हैं तो अपने आप को कुबेर समझ रहा है । इसे ही कहते हैं– अधजल गगरी छलकत जाए ।

अँधों में काना राजा (मूर्खों में कुछ पढ़ा-लिखा व्यक्ति)- इस इलाके में कोई भी पढ़ा नहीं है इसी से आठवीं पास वह अंधों में काना राजा बना फिरता है ।

अँधेर नगरी चौपट राजा (जैसा राजा वैसी प्रजा)- यहाँ तो चारों अव्यवस्था फैली हुई है । शासक अपनी दुनिया में खोया है तो जनता अपनी दुनिया में । हर ओर लूट मची है । इस 'अँधेर नगरी चौपट राजा' का ईश्वर ही मालिक है ।

अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता (अकेला आदमी कुछ नहीं करता)- जब सब घूस दे रहे हैं, तो ईमानदार बनकर तुम कुछ नहीं कर सकते । अकेला चना कभी भी भाड़ नहीं फोड़ता है ।

अधजल गगरी छलकत जाय (डींग हाँकना)- उसने दो किताबें क्या पढ़ लीं, बड़ी-बड़ी बातें करने लगा है, इसे ही कहते हैं, अधजल गगरी छलकत जाय ।

आगे नाथ न पीछे पगहा (कोई जवाबदेही न होना)- उसका क्या है, वह तो यूँ लापरवाह रहेगा ही, उसके तो आगे नाथ है न पीछे पगहा ।

आँख के अंधे गाँठ के पूरे (मूर्ख धनवान)- वकीलों की आमदनी के क्या कहने ! उन्हें आँख के अँधे और गाँठ के पूरे रोज ही मिल जाते हैं ।

आग लगंते झोंपड़ा, जो निकले सो लाभ (नुकसान होते-होते जो बच जाए, वही बहुत है)- रातों रात बाढ़ का पानी खेत में घुस गया, मकई की फसल एक दो दिन में कटने वाली थी, किसानों का बहुत नुकसान हो गया, फिर उन्होंने बचे हुए भुट्टों को ही तोड़ कर संतोष कर लिया । न तोड़ते तो वे भी चले जाते । इसे ही कहते हैं आग लगंते झोंपड़ा, जो निकले सो लाभ ।

आम के आम गुठलियों के दाम (अधिक लाभ)- रामबाबू ने चढ़ने के लिए जीप खरीदी थी, लगन के दिनों में अब उससे भाड़ा भी कमा रहे हैं । इसे ही कहते हैं– आम के आम गुठलियों के दाम ।

उँची दूकान, फीका पकवान (बाहरी दिखावा)- उसकी तड़क-भड़क सब बनावटी हैं । भीतर से वह खोखला है । इन लोगों से किसी मदद की उम्मीद न रखो । इनके लिए ही कहा जाता है– उँची दूकान, फीका पकवान ।

उँट के मुँह में जीरा (आवश्यकता से बहुत कम)- बाढ़ पीड़ितों को मिली सरकारी सहायता बहुत कम है । वह तो ऊँट के मुँह में जीरा के समान है ।

एक अनार, सौ बीमार (एक वस्तु के अनेक अभ्यर्थी)- आज की परीक्षा केवल दस रिक्त पदों के लिए हो रही है और अभ्यर्थियों की संख्या दस हजार है । यह हालत तो एक अनार सौ बीमार वाली हो गई है ।

एक तो करैला दूजे नीम चढ़ा (एक अवगुण के साथ दूसरे अवगुण का जुड़ जाना)- वह तीखा तो बोलता ही है साथ ही दूसरे का बुरा भी चाहता है । इसे ही एक करैला दूजा नीम चढ़ा कहते हैं ।

एक तो चोरी, दूसरे सीना जोरी (दुष्टों का ही उत्कर्ष)- वह मुझे धक्का देकर कतार में आगे खड़ा हो गया है और विरोध करने पर मुझे मारने की धमकी दे रहा है । इसे ही कहते हैं– एक तो चोरी, दूसरे सीना जोरी ।

एक पंथ दो काज (एक काम से दूसरा काम हो जाना)- इसे ही कहते हैं एक पंथ दो काज; वह पटना सरकारी काम से आया था इसी बहाने अपना इलाज भी करवा लिया ।

काला अक्षर भैंस बराबर (ज्ञानहीन)- मैं शेयरबाजार के लेन-देन के बारे में कुछ भी नहीं जानता । मेरे लिए वह काला अक्षर भैंस के बराबर है ।

गोदी में लड़का नगर में ढिंढोरा (पास की वस्तु को दूर जाकर खोजना)- मेरी पुस्तक मेरी मेज पर ही थी और मैं उसे अपने कई मित्रों के यहाँ ढूँढ़ आया । यह तो गोदी में लड़का नगर में ढिंढोरा वाली बात हुई ।

घर की मुर्गी दाल बराबर (घर की वस्तु का निरादर)- उनके जैसा तबलावादक जब बुलाओ तब चला आता है शायद इसी से लोग उन्हें महत्त्व नहीं देते । बाहर उनकी कितनी इज्जत होती है, यह हमने अपनी आँखों से देखा है । इसी स्थिति के लिए कहा गया है– घर की मुर्गी दाल बराबर ।

चार दिन की चाँदनी (क्षणिक खुशी)- घूस के पैसे से आयी सम्पन्नता चार दिन की चाँदनी होती है । इसे एक दिन समाप्त हो जाना है ।

डूबते को तिनके का सहारा (थोड़ी सहायता का भी महत्त्वपूर्ण होना)- मैं जिस समय कर्ज से डूबा हुआ था उस समय आपकी सहायता मुझ डूबते के लिए तिनके का सहारा साबित हुई ।

नाच न जाने आँगन टेढ़ (काम न जानना और बहाना बनाना)- चंचल को मशीन चलाना न आता था, और जब मशीन उससे खराब हो गयी है तो वह कह रहा है कि मशीन ही खराब था । इसे ही कहते हैं, नाच न जाने आँगन टेढ़ा ।

न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसूरी (न कारण होगा और न कार्य होगा)- अरे, झगड़े का कारण यह नौकर ही न है, इसे ही हटा दो । न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसूरी ।

होनहार बिरवान के होत चिकने पात (होनहार के लक्षण पहले से ही दिखाई देने लगते हैं)- इसकी प्रसिद्धि कोई आज की नहीं है, बचपन से ही वह ऐसा है । इसकी विद्वता बचपन में ही दिख गई थी । इसे ही कहा जाता है होनहार बिरवान के होत चिकने पात ।

21.4 अभ्यास के प्रश्न

(क) लोकोक्तियों से आप क्या समझते हैं ।

(ख) इन लोकेक्तियों का अर्थ लिखें–

काला अक्षर भैंस बराबर, चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात, घर की मुर्गी दाल बराबर, दूर का ढोल सुहावन ।

पारिभाषिक शब्दावली

पाठ संरचना

22.0 उद्देश्य
22.1 पारिभाषिक शब्दावली : अर्थ
22.2 पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएँ
22.3 पारिभाषिक शब्दावली के अपेक्षित गुण
22.4 पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के रूप
22.5 कुछ पारिभाषिक शब्द
22.6 अभ्यास के प्रश्न

22.0 उद्देश्य

पारिभाषिक शब्दावली ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में प्रयुक्त होनेवाली शब्दावली को कहते हैं । इस इकाई में इसके संबंध में विस्तृत अध्ययन किया जाएगा । इस क्रम में इसके अर्थ एवं विशेषताओं से अवगत हुआ जाएगा । पारिभाषिक शब्दावली के अपेक्षित गुण, इसके निर्माण की विधि और कुछ प्रमुख पारिभाषिक शब्दों के हिंदी-अंग्रेजी रूपों से परिचित हुआ जाएगा ।

22.1 पारिभाषिक शब्दावली : अर्थ

पारिभाषिक शब्द अंग्रेजी के 'टेक्निकल' (Technical) शब्द का हिन्दी पर्याय है । मूल अंग्रेजी Technical शब्द ग्रीक भाषा के Technikoi अर्थात 'Of Art' (कला का या कला विषयक) से अपनाया गया है । 'Techne' से तात्पर्य है - कला तथा शिल्प । ग्रीक भाषा में 'Tekon' शब्द का अर्थ निर्माण करने वाला (निर्माता) अथवा 'बढई' के अर्थ में प्रयुक्त होता है । लैटिन भाषा के 'Texere' शब्द का अर्थ है 'बुनना' या 'बनाना' । इस सन्दर्भ में अर्थ हुआ तकनीकी शब्द वह शब्द है जो किसी निर्मित अथवा खोजी गई वस्तु अथवा विचार को व्यक्त करता हो ।

कोश-ग्रन्थों के अनुसार 'Technical' का अर्थ है - "Of a particular Art, Science, Craft of about Art' अर्थात विशिष्ट कला विज्ञान तथा शिल्प विषयक अथवा विशिष्ट कला के बारे में । इससे तात्पर्य हुआ– ''पारिभाषिक शब्द वह है जो किसी ज्ञान-विज्ञान के विशेष क्षेत्र में एक विशिष्ट तथा निश्चित अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है ।''

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर पारिभाषिक शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है– ''जो शब्द सामान्य व्यवहार की भाषा में प्रयुक्त न होकर ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में विषय एवं संदर्भ के अनुसार विशिष्ट किंतु निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें पारिभाषिक शब्द कहते हैं ।''

इस प्रकार ऐसे पारिभाषिक शब्द के समूह को 'पारिभाषिक शब्दावली' अथवा 'तकनीकी शब्दावली' (Technical Terminology) कहा जा सकता है । भौतिकी, रसायन, प्राणि विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान, गणित, ज्यामिती, अंतरिक्ष-विज्ञान, कम्प्यूटर, इंजीनियरी, मानविकी, दूर-संचार तथा प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों की अभिव्यक्ति और व्यवहार में विशिष्ट अर्थ को लेकर पारिभाषिक शब्द प्रयुक्त होते हैं ।

22.2 पारिभाषिक शब्दावली की विशेषताएँ

उक्त विवेचन के अनुसरण में पारिभाषिक शब्दों की कुछ प्रमुख विशेषताएँ उभरकर सामने आती हैं । वे हैं -

(अ) पारिभाषिक शब्द 'परिभाषित' (Defined) होता है । अर्थात ऐसे शब्दों को उनकी संकल्पना के अनुसार परिभाषा या व्याख्या देकर समझाया जाता है । अथवा समझना पड़ता है । जैसे घनत्व, भार, कुण्डली, साफ्टवेयर, गुणांक आदि ।

(आ) पारिभाषिक शब्द में प्रमुख विचार, भाव अथवा किसी विशिष्ट संकल्पना का समावेश रहता है । अत: पारिभाषिक शब्द को जब पहले पहल प्रयोग में लाया जाता है तब उसके अर्थ को व्याख्या या परिभाषा देकर स्पष्ट कर देना उचित समझा जाता है ताकि उसके प्रयोग में संदिग्धता न हो । जैसे बुर्जुआ, प्रव्रज्या, अंतरिक्ष (स्पेस), तापीय (थर्मल), नाभिकीय (न्यूक्लियर), कम्पोज, एंटेना, साफ्टवेयर, हार्डवेयर आदि ।

(इ) पारिभाषिक शब्द की अन्य विशेषता है उसकी असामान्यता । अर्थात ऐसे शब्द से संबद्ध विचार, भाव या संकल्पना आदि सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त नहीं होते । जैसे कर्षण (ट्रक्शन), प्रतिभू, त्वरण, रक्ताणु, कार्बनिक, आदि ।

(ई) पारिभाषिक शब्दों की एक विशेषता यह भी है कि ये शब्द विशिष्ट क्षेत्र में विशिष्ट किन्तु अलग अर्थ में प्रयुक्त होते हैं । जैसे - 'कल्चर' शब्द मानविकी में संस्कृति के अर्थ में प्रयुक्त होता है किन्तु कृषि-विज्ञान में 'कल्चर' से तात्पर्य 'कृषि' से है । उदाहरणार्थ : अक्वा-कल्चर (जल-कृषि), सीरी-कल्चर (रेशमकीट पालन) आदि । इसी प्रकार, सैन्य-विज्ञान में 'सेक्यूरिटी' शब्द का अर्थ है- सुरक्षा, किन्तु बैंकिंग में 'सेक्यूरिटी' शब्द 'प्रतिभूति' (जमानत) के अर्थ में प्रयुक्त होता है ।

(उ) पारिभाषिक शब्द की एक अन्य विशेषता है - दुरूहता । अर्थात कुछ पारिभाषिक शब्दों में ऐसा आशय छिपा रहता है जो शब्द के विश्लेषण से स्पष्ट नहीं होता तथा उसे जानने के बाद भी परम्परा और प्रयोग द्वारा ही समझा जा सकता है । जैसे काव्य-शास्त्र का 'चित्र-तुरग न्याय', नाट्य-शास्त्र का 'सामाजिक', दर्शनशास्त्र का 'ब्रह्म', 'माया' अथवा 'कुंडलिनी' एवं 'अद्वैत' आदि शब्द इसी श्रेणी में आते हैं ।

(ऊ) पारिभाषिक शब्द की सबसे बड़ी विशेषता है दो संकल्पनाओं अथवा विचारों को सूक्ष्मता की सटीक अभिव्यक्ति देना । अर्थात भिन्न विचारों अथवा भावों को सूक्ष्मता से सही अर्थ में प्रकट करना । जैसे प्रतिभू (स्यूरिटी) तथा प्रतिभूति (सेक्यूरिटी), ताप (हीट) एवं तापमान (टेम्प्रेचर), गति (स्पीड) तथा वेग (वेलोसिटी) आदि । इस प्रकार ऐसे शब्दों की अर्थ-सूक्ष्मता को सहजता से नहीं जाना जा सकता ।

(ए) पारिभाषिक शब्द की एक और विशेषता है अपर्यायीता । अर्थात किसी एक ज्ञान क्षेत्र के पारिभाषिक शब्द के लिए दूसरा कोई भी पर्यायी शब्द प्रयुक्त नहीं किया जा सकता । इससे तात्पर्य यह है कि विशिष्ट ज्ञान-क्षेत्र के विशिष्ट पारिभाषिक शब्द का स्थान अन्य कोई दूसरा शब्द नहीं ले सकता । जैसे - प्रशासन में प्रयुक्त 'इश्यू' (जारी करने के अर्थ में), विधि के क्षेत्र में प्रयुक्त 'प्रोक्लेमेशन', 'नोटिफिकेशन', अंतरिक्ष 'इनसेट' और गणित, भौतिकी, रसायन, कम्प्यूटर एवं अंतरिक्ष-विज्ञान में प्रयुक्त गुण-सूत्र, प्रतीक-चिह्न, द्विपदनाम, यौगिकों के नाम आदि के पर्याय या पर्यायी पारिभाषिक शब्द नहीं दिए जा सकते ।

(ऐ) पारिभाषिक शब्दों की एक और एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि उनका कृत्रिम निर्माण किया जाता है । नये विज्ञानों के प्रस्फुटन तथा निर्माण के साथ ही उनकी अभिव्यक्ति तथा विषयवस्तु निरूपण के लिए नई संकल्पनाओं के अनुरूप गये शब्दों का निर्माण आवश्यक हो जाता है । अत: विषय, संदर्भ तथा स्थिति के अनुसार नये कृत्रिम शब्दों का निर्माण किया जाता है । अत: इस प्रक्रिया में प्रतीकों एवं खोजकर्ता वैज्ञानिकों के नाम पर भी कृत्रिम पारिभाषिक शब्द गढ़े जाते हैं । जैसे - लेम्बडा, पाई, म्यू, जूल, डार्विनिज्म, मार्क्सिज्म, फासिज्म आदि ।

22.3 पारिभाषिक शब्दावली के अपेक्षित गुण

किसी भी भाषा के पारिभाषिक शब्द के लिए निम्नलिखित गुणों का होना आवश्यक माना जाता है–

1. पारिभाषिक शब्द का अर्थ निश्चित तथा स्पष्ट होना चाहिए । अर्थात इन्हें अर्थ-विस्तार तथा अर्थ-संकोच दोष से मुक्त होना चाहिए ।

2. पारिभाषिक शब्द उच्चारण की दृष्टि से सरल तथा सुबोध होने चाहिए ताकि प्रयोक्ता के लिए सुविधा हो।

3. पारिभाषिक शब्द के नियम अर्थ में प्रत्यय, उपसर्ग या अन्य उपयुक्त शब्द जोड़कर परिवर्तन किए जाने की गुंजाइश रहनी चाहिए। जैसे Secretary शब्द के लिए हिंदी में 'सचिव' प्रयुक्त होता है। किन्तु उससे पहले Under शब्द जुड़ जाने से Under Secretary हो जाएगा और हिन्दी में 'अवर सचिव'।

4. समान पारिभाषिक शब्दों में एकरूपता होनी चाहिए।

5. पारिभाषिक शब्द विषयवस्तु या ज्ञानक्षेत्र से सम्बद्ध 'संकल्पनाओं' तथा वस्तुओं के अनुरूप होने चाहिए।

6. किसी अन्य भाषा से कोई पारिभाषिक शब्द यदि अपना लिया जाए तो उसे अनुकूलन की प्रक्रिया से अपनी भाषा की प्रकृति एवं प्रवृत्ति के अनुसार ढाल लेना चाहिए।

7. प्रत्येक पारिभाषिक शब्द की स्वतंत्र सत्ता तथा अर्थवत्ता होनी चाहिए। अर्थात प्रत्येक पारिभाषिक शब्द एक-दूसरे से सर्वथा अलग होना चाहिए।

8. पारिभाषिक शब्द का निर्माण यथासंभव एवं यथास्थिति एक ही मूल शब्द से किया जाना चाहिए ताकि उसमें सुबोधता, स्पष्टता तथा अर्थ की निश्चितता विद्यमान रहे।

9. पारिभाषिक शब्द का रूप यथासम्भव लघु होना आवश्यक है ताकि बार-बार प्रयोग करने में प्रयोक्ता को असुविधा न हो।

22.4 पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के रूप

हिन्दी में पारिभाषिक शब्दावली निर्माण के अनेक रूप दृष्टिगत होते हैं जिनमें प्रमुख इस प्रकार हैं :

1. संस्कृत संधिगत पारिभाषिक शब्द

   पद + अधिकारी = पदाधिकारी। पद + उन्नति = पदोन्नति। देश + अंतर = देशांतर। हस्त + अंतरण = हस्तांतरण।

2. उपसर्ग और प्रत्ययों से निर्मित शब्द

   आ + लोचक = आलोचक। अ + वैतनिक = अवैतनिक। अधि + सूचना = अधिसूचना।

3. प्रत्यय से निर्मित पारिभाषिक शब्द

   भौतिक + ई = भौतिकी। निदेश + क = निदेशक। सहकार + ई = सहकारी।

4. अंग्रेजी तथा अंतर्राष्ट्रीय पारिभाषिक शब्द

   तत्त्वों के लिए : ऑरम, सल्फर, अर्जेन्टम आदि।

   तोल-माप के लिए : मीटर, ग्राम, वाट, वोल्ट, लिटर, कैलरी आदि।

22.5 कुछ पारिभाषिक शब्द

हिंदी	अंग्रेजी
अंकन	Marking
परांकन	Endorsement
पृष्ठांकन	Endorsement
रेखांकन	Underlining
सीमांकन	Demarcation
अंतर	Distance

हिंदी	अंग्रेजी
अंतरण	Transfer
रूपांतरण	Transformation
लिप्यंतरण	Transliteration
स्थानांतरण	Transfer
भाषांतरण	Translation
अधिकारी	Officer
प्राधिकारी	Authority
स्वत्वाधिकारी	Properietor
अधीन	Under
विचाराधीन	Under consideration
पराधीन	Subjugated
अधीनस्थ	Subordinate
आवेदन	Application
पुनरावेदन	Appeal
अभ्यावेदन	Representation
आवेदक	Applicant
आदेश	Order
निर्देश	Guide
अनुदेश	Instruction
निदेश	Direction
अध्यादेश	Ordinance
कर्ता	Doer
अभिकर्ता	Agent
उधारकर्ता	Borrower
जमाकर्ता	Depositor
अनुमोदनकर्ता	Approved by
प्रस्तुतकर्ता	Presented by
कर्म	Activity
कर्मचारी	Employee
कार्मिक	Personnel
अधिकरण	Doing
प्राधिकरण	Agency
एकीकरण	Ingegration

हिंदी	अंग्रेजी
प्रकरण	Chapter/Context
कथन	Statement
प्राक्कथन	Foreword
अभिकथन	Allegation
कलन	Counting
संकलन	Compilation
समाकलन	Credit balance
परिकलन	Calculation
आकलन	Assessment
कार्य	Duty/work
कार्यकारी	Acting
कार्यभार	Duty
कार्यपालक	Executive
कार्यवृत्त	Minutes/Proceedings
कार्य समिति	Working Committee
कार्यालय	Office
कार	Deor
प्रकार	Kind
लेखाकार	Accountant
क्रिया	Action
प्रक्रिया	Process
क्रियाविधि	Procedure
क्रियाशील	Active
ग्रहण	Taking
अधिग्रहण	Acquisition
पुनर्ग्रहण	Again taking
परिग्रहण	Seizure
तथ्य	Fact
तथ्यहीन	Baseless
तथ्यात्मक	Factual
तथ्यत:	De facto
तिथि	Date
नियत तिथि	Due Date

हिंदी	अंग्रेजी
तिथिवार	Datewise
निर्गम तिथि	Date of issue
दशम	Tenth
दशमलव	Decimal
दान	Donation
अनुदान	Grant
दाता	Doner
आदाता	Receiving
प्रदाता	Paying
नामा	Deed
करारनामा	Agreement
मुख्तारनामा	Power of Attorney
हलफनामा	Affidavit
वसीयतनामा	Will
राजीनामा	Agreement
निवेश	Investment
नियम	Rule
नियमन	To regulate
नियमानुसार	According to rule
नियमावली	Rules and Regulations
पत्र	Letter
विपत्र	Bill
प्रपत्र	Form
परिपत्र	Circular
अधिकार-पत्र	Authority Letter
मांग-पत्र	Indent
प्रतिज्ञा-पत्र	Pledge
आवेदन पत्र	Application
पूँजी	Capital
पूँजीपति	Capitalist
प्रतिबन्ध	Restrictions
बही	Ledger/Book
दैनिक बही	Day book

हिंदी	अंग्रेजी
बही पन्ना	Ledger folio
बही प्रविष्टि	Ledger entry
लेखा बही	Book of Accounts
मूल्य	Value/Price
मूल्य-ह्रास	Depreciation
मूल्य-वृद्धि	Appreciation
मूल्यवर्ग	Denomination
मूल्यन	Valuation
मूल्यांकन	Valuation
बाजार मूल्य	Market Value
मौलिक	Original/Valuable
योग	Total
प्रयोग	Experiment
अभियोग	Prosecution
विनियोग	Investment
योगदान	Contribution
दुरूपयोग	Misuse
योजना	Plan/Scheme
परियोजना	Project
आयोजना	Planning
रूप	Form
प्रारूप	Draft
स्वरूप	Nature
प्रतिरूप	Counterpart
रूपरेखा	Outline
व्यय	Expenditure
अपव्यय	Extravagance
मितव्यय	Economy
अव्यय	Injunction
वाद	Suit/Plaint
प्रतिवाद	Respondent
विवाद	Controversy
संवाद	Dialogue

हिंदी	अंग्रेजी
भाग	Part
विभाग	Department
विधि	Law
प्रविधि	Technique
संविधि	Statute
कार्यविधि	Procedure
वितरण	Distribution/Delivery
संवितरण	Disbursement
शोध	Search
शोधन	Purification
संशोधन	Amendment/Modification
परिशोधन	Revision
शिक्षण	Education
प्रशिक्षण	Training
निरीक्षण	Inspection
आरक्षण	Reservation
हस्ताक्षर	Signature
हस्तकौशल	Manual Skill
हस्तक्षेप	Interference
ज्ञान	Knowledge
विज्ञान	Science
अभिज्ञान	Identification/Anagnorisis
अंग्रेजी	हिन्दी
Agree	सहमत
Agriculture	कृषि
Agronomy	सस्य विज्ञान
Sericulture	रेशम कीट पालन
Acquaculture	जल-कृषि
Apiculture	मधुमक्खी पालन
Horticulture	बागवानी
Agragrain	भूमिसंबंधी
Cast	पटकना
Caste	जाति

अंग्रेजी	हिन्दी
Cost	लागत
Costal	तटिय
Crystal	स्फटिक
Able	योग्य
Ample	विस्तृत
Eligible	निर्वाच्य, वांछनीय
Negligible	उपेक्षणीय
Word	शब्द
Ward	रोगीकक्ष
Inward	आवक
Outward	जावक
Foreward	प्रस्ताव
Forward	अग्रेषण
Port	बंदरगाह
Import	आयात
Export	निर्यात
Transport	परिवहन
Passport	पारपत्र
Airport	हवाई अड्डा, विमानपत्तन
Flow	प्रवाह
Follow	परती भूमि
Fellow	सदस्य, फेलो
Fire	आग
Fare	भाड़ा
Fever	ज्वर
Fevour	अनुग्रह
Action	कार्रवाई
Auction	नीलामी
Acting	कार्यकारी
Tear	अश्रु
Tire	थकना
Retire	निवृत्त
Direction	निर्देशन

अंग्रेजी	हिन्दी
Distinction	श्रेष्ठता
Destination	गंतव्य
Expert	विशेषज्ञ
Expect	प्रत्याशा, प्रतीक्षा
Except	के सिवाय
Accept	स्वीकार करना
Parcel	पार्सल
Partial	आंशिक
Personal	व्यक्तिगत, निजी
Personnel	कार्मिक
Pain	दर्द
Plain	समतल
Plane	विमान/वायुयान
Plan	योजना
Form	प्रपत्र
From	प्रेषक
Firm	दुकान
Firm	अटल
Hire	किराये पर
Hair	केश
Heir	वारिस
Higher	उच्च

22.6 अभ्यास के प्रश्न

(क) पारिभाषिक शब्दावली से आप क्या समझते हैं ।

(ख) पारिभाषिक शब्दावली में किन गुणों का होना अपेक्षित है ।

(ग) पारिभाषक शब्दावली की विशेषताएँ बताएँ ।

आधार पुस्तक

1. प्रयोजनमूलक हिंदी; विनोद गोदरे; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; 2009 ।

2 प्रयोजनमूलक हिंदी : सिद्धांत और प्रयोग; दंगल झाल्टे; वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली; 2009 ।